स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 13, ISSUE-1(2) (JANUARY 2021) ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

प्रधान सम्पादक :

हरियाणा

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सह आचार्य एवं शोध निर्देशक (हिन्दी विभाग)
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.)

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी

सह सम्पादक :
समुद्र सिंह
भिवानी (हरियाणा)

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी–127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार

—: मानद संरक्षक :—

प्रो. राधेमोहन राय
पूर्व उप प्राचार्य,
राजकीय स्नातकोत्तर महा.,
अलवर, राजस्थान

डॉ. राजेन्द्र गोदारा
परीक्षा नियंत्रक,
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर

—: विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति :—

माई मनीषा महंत
किन्नर अधिकार ट्रस्ट
भूना, जिला कैथल, हरियाणा

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि. रोहतक

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा धारवाड़

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. विनोद कुमार
हिन्दी विभाग, लवली प्रोफेशनल
यूनिवर्सिटी, पंजाब

डॉ. कुसुम कुंज मालाकार
हिन्दी विभाग,कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी, असम

डॉ. कैलाशचन्द्र शर्मा 'शंकी'
पूर्व जि.शि.अधिकारी, च. दादरी

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. राजपाल
राजकीय पी.जी. महाविद्यालय
हिसार

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली, उ.प्र.

डॉ. राजकुमारी शर्मा
नेपाल

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.केरल

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

सम्पूर्ण बोहल शोध मञजूषा परिवार अवैतनिक है।

शोध–पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव–10, कृतिदेव–21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

नोट :– उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र; टेलीफोन, मोबाईल नं., ई–मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

शोध पत्र 2000–2500 शब्दों (4–6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/– रू. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/– रू. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	**पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा)**
खाता धारक का नाम	:	**गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी**
बैंक खाता संख्या	:	**1182000109078119**
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय		7–7
2.	जगत्कारणत्व विचारः	अजयकुमार गन्धा	8–11
3.	मानव जीवन पर शिक्षा का प्रभाव	धर्मजीत कु. धनंजय	12–14
4.	महिला उत्पीड़न समस्या के समाधान की खोज में : एक चिन्तन	श्रीमती रजनी वरूण	15–22
5.	भारत में पंचायती राज व्यवस्था का अवधारणात्मक विवेचन	डॉ. पूजा वरूण	23–27
6.	वर्तमान लोकतन्त्र और उमाशंकर चौधरी की कविता ‘इस विकसित दौर में’ के विशेष संदर्भ में’	डॉ. अंसा ए	28–30
8.	समाज और समरसता	षीना.पी.एम, डॉ. संजय. एल. मादार	31–32
7.	न्यायदर्शन स्थसन्निकर्षाधारेण अधिगमकौशल निरूपणम्	Nandadulal Mandal, Palash Das, Labani Bairagya	33-37
੮.	ਗਿਆਨੀ ਨਰੈਣ ਸਿੰਘ ਦੀ ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ ਦੀ ਟੀਕਾਕਾਰੀ: ਇਕ ਅਧਿਐਨ	ਡਾ. ਸਤਵੰਤ ਸਿੰਘ	੩੮-੪੧
9.	ಭಾರತೀಯ ಮಹಿಳಾ ಶಿಕ್ಷಣ ಪದ್ಧತಿ	ಡಾ. ಮಂಜುಳಾ ಚವ್ಹಾಣ	42-47
10.	ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤਕ ਪਰਿਪੇਖ	Lovepreet Singh	48-52
11.	मध्यमवर्ग के लोगों की जीवन शैली : मुगलकाल के विशेष संदर्भ में	कविता	53–56
12.	संस्कृत भाषा से मेवाती बोली का व्याकरणिक साम्य	कोमल अग्रवाल	57–65
13.	विकास संचार में भारतीय समाचारपत्रों की महत्ता	Rahul	66-70
14.	हिन्दी साहित्य में किसान	प्रो. शकुन्तला	71–76
15.	पुरस्कार कहानी में निहित अंतर्द्वन्द्व	डॉ. राजमोहिनी सागर	77–79
16.	ऑनलाइन शिक्षा के दौरान होने वाली बुनियादी समस्याएं और उनका समाधान	ROHTASH	80-86
17.	निर्णयन (Decision Making)	प्रो. कुसुम यदुलाल	87–93

18.	**PROBLEMS OF DRINKING WATER IN RURAL HARYANA**	**Jyoti, Dr. Kalu Ram**	**94-97**
19.	भारत में भूमि उपयोग परिवर्तन	डॉ. समता जैन	98–101
20.	संचार क्रांति के दौर में मानवाधिकार एवं मौलिक अधिकारों का बढ़ता उत्कर्ष व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के बीच पनपता संघर्ष	प्रो. पवन कुमार	102–105
21.	स्वतन्त्र भारत में महिलाओं की स्थिति	डॉ. ब्रजकिशोर	106–110
22.	'रेत के द्वीप पसर आए हैं' में चित्रित पारिस्थितिकी	शमीम पी	111–112
23.	हाल विकास पर वातावरण का प्रभाव	डॉ. शिवानी सिंह	113–115

सम्पादकीय-

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 8-11

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

जगत्कारणत्व विचारः

–अजयकुमार गन्धा

सहायकाचार्यः, अद्वैतवेदान्तविभगः, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालयः, एकलव्य परिसरः, अगरतला, त्रिपुरा–799006

ब्रह्मणः तटस्थलक्षणं यथा 'यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातानि जीवन्ति। यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति। तद्विजिज्ञासस्व। तद् ब्रह्मेति। एवमेव ब्रह्मणः स्वरूपलक्षणम् यथा 'सत्यं ज्ञानम् अनन्तम् ब्रह्म', तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूत, सोऽकामयत बहुस्यां प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। स तपस्तप्त्वा इदं सर्वमसृजत यदिदं किं च। तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्रविशत। तदनुप्रविश्य सच्च त्यच्चाभवत्। अनेन जीवेनात्मनानुप्रविश्य अत्र प्रश्नः भवति ब्रह्मस्तु निर्विकारं, कथं तस्य विकारत्वं तदा उच्यते – न हि पुत्रोत्पत्त्येवर्थान्तरविषयं बहुभवनम् कथं तर्हि आत्मस्थानाभिव्यक्तनामरूपाभिव्यक्त्यायदात्मस्थे अनभिव्यक्ते नामरूपे व्याक्रियेति तदा नामरूपे आत्मस्वरूपा परित्यागेनैव ब्रह्मणाप्रविभक्त देशकाले सर्वावस्थासु व्याक्रियेति तदा तन्नामरूपव्यकरणं ब्रह्मणो बहुभवनम्। नान्यथा निरवयवस्य ब्रह्मणः बहुत्वापत्तिरूपपद्यतऽल्पत्वं वा यथा आकाशस्याल्पत्वं बहुत्वं च वस्त्वन्तरकृतमेव। अतस्तद्द्वारेणैवात्मा बहु भवति। न ह्यात्मनोऽन्यदनात्मभूतं तत्प्रविभक्तदेशकालं सूक्ष्मं व्यवहितं विप्रकृष्टं भूतं भवद्भविष्यद्वा वस्तु विद्यते। अतो नामरूपे सर्वावस्थे ब्रह्मणैवात्मवती, न ब्रह्म तदात्मकम्।

यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्य ज्ञानमयं तपः।
तस्मादेतद् ब्रह्म नाम रूपमन्नं च जायते।।

अर्थात् दृश्यः सामान्येन सर्वं जानाति सः सर्वज्ञः। यः विशेषेण सर्वं वेत्तीति सर्ववित्। तथा यस्यज्ञानमयं तपः विद्यते। तस्मात् अक्षरब्रह्मणः सकाशात् हिरण्यगर्भसंज्ञकं कार्यब्रह्म उत्पन्नं भवति। तस्मादेव अयं देवदत्तः, यज्ञदत्तः, इत्यादि नामरूपमिदं शुक्लं नीलमित्यादि, अन्नं च ब्रीहियवादिनाञ्च उत्पत्तिः भवति।

नदीदृष्टान्तेन समस्तजगतः कारणपुरूषाश्रयत्वम् :–

स यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रायणाः समुद्रं प्राप्यास्तं गच्छन्ति भिद्येते तासां नामरूपे समुद्र इत्येवं प्रोच्यते। एवेवेवास्य परिद्रष्टुरिमाः षोडश कलाः पुरूषायणाः पुरूषंप्राप्यं गच्छन्ति भिद्येते चासां नामरूपे पुरूष इत्येवं प्रोच्यते स एषोऽकलोऽमृतो भवति तदेष श्लोकः।।

अर्थात् – अयं दृष्टान्तः बोधयति यत् यथा इमाः सर्वाः नद्याः स्यन्दमानाः स्रवन्त्यः सुमुद्रायणाः समुद्रात्मभावं प्राप्य तत्रैव लीनाः भवन्ति। तदा एतासां गङ्गायमुनादिनामरूपं नष्टं भवति, तथा समुद्रे अभेदे सति जलमयपदार्थोऽपि समुद्र इत्येवं प्रोच्यते। एवमेवास्य परिद्रष्टुरिमाः प्राणादिषोडशकलाः यासां अधिष्ठानं पुरूष एव विद्यते। तं पुरूषं प्राप्य तत्रैव पुरूषात्मभावे लीयन्ते। यदा विभिन्ननामरूपनष्टे सत्यपि यस्य पुरूस्य नाशः न भवति तत्तत्वं ब्रह्मवेत्ता पुरूष इत्येवं वदन्ति, एवमेव अत्र गुरूणा प्रदर्शितकलाप्रलयमार्गः, एवं प्रकारेण ये पुरूषाः एतत्तत्वं जानन्ति तेषां अनया विद्यया अविद्याकामकर्मजनितासु प्राणादिकलानां अभावं भवति, कारणं मृत्युरपि अविद्याकृतकलानां कारणं भवति। अतः एतासां कलानां निवृत्तिरेव मोक्षः विद्यते, अस्मिन् विषये श्लोकोऽयं प्रसिद्धः विद्यते।

उत्पत्तिश्रुतिव्यवस्था यथा –

मृल्लोहितविस्फुलिङ्गाद्यैः सृष्टिर्या चोदितान्यथा।
उपायः सोऽवताराय नास्ति भेदः कथञ्चन।

अर्थात् – उपनिषदि यत् मृत्पिण्डः, लोहपिण्डः, तथा विस्फुलिङ्गादिदृष्टान्तैः भिन्न– भिन्न प्रकारेण सृष्टिनिरूपणं क्रियते। तत् सर्वं ब्रह्मात्मैक्यज्ञानपर्यन्तमेव उपायाः विद्यन्ते। वस्तुस्तः जीवब्रह्मणोर्मध्ये कोऽपि भेदः नास्ति।

आत्मनः सर्वाधिपतित्वं तथा सर्वाश्रयत्वम् – स वा अयमात्मा सर्वेषां भूतानामधिपतिः सर्वेषां भूतानां राजा तद्यथा रथनाभौ च रथनेमौ चाराः सर्वे समर्पिता एवमेवास्मिन्नात्मनि सर्वाणि भूतानि सर्वे देवाः सर्वे लोकाः सर्वे प्राणाः सर्व एव आत्मनः समर्पिताः।

अर्थात् –सोऽयमात्मा सर्वभूतानामधिपतिः एवं सर्वभूतानां राजा अस्ति। अस्मिन् विषये दृष्टान्तः– तद्यथा रथनाभौ च रथेनेमौ चाराः सर्वे समर्पिता इति प्रसिद्धोऽर्थः,एवमेवास्मिन्नात्मनि परामात्मभूते ब्रह्मविदि सर्वाणि भूतानि ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तानि, सर्वे देवा अग्न्यादयः,सर्वे लोकाः,भूरादयः,सर्वे प्राणाः वागादयः, सर्व एत आत्मनो जलचन्द्रवत् प्रति शरीरानुप्रविशिनोऽविद्याकल्पिताः सर्वे अस्मिन् आत्मनि समर्पितम्।

ब्रह्मणः जगत्कारणत्वम् कथं चेदुच्यते –

यथोर्णनाभिःसृजते गृह्णते च तथा पृथिव्यामोषधयः सम्भवन्ति।
यथा सतः पुरूषात्केशोलोमानि तयाक्षरात्सम्भवतीह विश्वम्।।

अर्थात् – यथा लोके प्रसिद्धम् – ऊर्णनाभिलूताकीटः कस्यापि अन्यस्य कारणन्तरस्य अपेक्षा विनापि स्वयमेव सृजनं करोति स्वशरीरादेव तन्तूबहिः प्रसारयति पुनः तानेव गृह्णाति स्वात्मभावेन स्थापयति। तथैव पृथिव्यामौषधयोब्रीह्यादिस्थावरादयः स्वात्माव्यक्तिरिक्तैव उत्पन्नाः जायन्ते। स्वात्माव्यतिरिक्ता एव प्रभवन्ति। एवमेव सतो विद्यमानाज्जीवपुरूषसकाशात् केशलोमानि च सम्भवन्ति विलक्षणानि। यथा एते दृष्टान्ताः विद्यन्ते तथैवसंसारमण्डले विलक्षणं सलक्षणं च इदं सर्वं विश्वं अन्यस्य निमित्तस्य अपेक्षां विना उपर्युक्तलक्षणविशिष्टात् अक्षरात् उत्पन्नाः जायन्ते। नैके दृष्टान्तास्तु केवलं विषयस्य सरलरीत्या प्रबोधनार्थंमेव प्रदर्शितम्।

ब्रह्मैव जगत्कारणम् :–

सर्वाणि ह वा इमानि भूतान्याकाशादेव समुत्पद्यन्ते। 'आकाशं प्रत्यस्तं यन्ति' अर्थात्– यस्मात्प्रभवति यस्मिञ्च प्रलीयते तत्तस्योपादानं प्रसिद्धम्। यथा ब्रीहियवादिनां पृथिवी। प्रत्यस्तमयश्चनोपादानादन्यत्र कार्यस्य दृष्टः। आत्मकृतेः परिणामात् सूत्रेण – 'तमात्मानं स्वयमकुरूत' इत्यत्र आत्मनः कर्मत्वं कर्तृत्वं च दर्शयति। आत्मानमिति कर्मत्वं स्वयमकुरूतेति कर्तृत्वम्। तथा च इतश्च प्रकृतिब्रह्म यत्कारणब्रह्मैव विकारात्मना परिणामः समानाधिकरणेन आम्नायते यथा– सच्च त्यच्चआभवत्। 'निरूक्तं चानिरूक्तं च' अर्थात् तत् ब्रह्म मूर्तं अमूर्तम् अभवत्। निर्वचनयोग्यं तथा निर्वचनायोग्यं सर्वं जातम्। 'यदभूतयोनि परिपस्यन्ति धीराः' अर्थात् सम्पूर्णभूतानां कारणं ब्रह्म तत् ज्ञात्वा धीराः सर्वत्र ब्रह्मैव पश्यन्ति।

ब्रह्म जगतः निमित्तकारणं कथं चेत् तदुच्यते– 'स ईक्षां चक्रे' सः इक्षणं कृतवान्, 'स प्राणमसृजत' तस्य कर्तृत्वस्य श्रवणम्। कदाचित् संशयः स्यात् ब्रह्म केवलं निमित्तकारणं वा स्यात् चेन्न ब्रह्म जगतः उपादानकारणं निमित्तकारणं च अस्ति। तत्र च उपादानकारणविज्ञाने सर्वविज्ञानं संम्भवत्युपादानकारणाव्यतिरेकात्कार्यस्य दृष्टान्तोऽपि– 'यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्' इत्युपादानकारणगोचरैव दृश्यते। तथा 'एकेन लोहमणिना सर्वं लोहमयं विज्ञातं स्यात्'। 'एकेन नखकृन्ततेन सर्वं काष्णायसं विज्ञातं स्यात्'। इति च। तथान्यत्रापि शौनकनामप्रसिद्धमहागृहस्थः अङ्गिरसपार्श्वे गत्वा पृष्टवान् हे भगवान् 'कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति'। सोऽकामयत बहुस्याम् प्रजायेयेति, तदैक्षत बहुस्यां प्रजायेय अर्थात् आत्मनि कर्तृत्वं तथा प्रकृतत्वं च बोधयति। अत्र संकल्पपूर्वकस्वतन्त्रप्रवृत्या आत्मा कर्ता–निमित्तकारणमस्ति। तथा बहुस्यां प्रत्यगात्मविषयत्वाद्बहुभवनाभिध्यानस्य प्रकृतिरित्यपि गम्यते।

भगवता शङ्कराचार्येण उक्तमस्ति यत्– ब्रह्मैव सत्–चित्–आनन्दस्वरूपमस्ति एतस्मात् सत् ब्रह्म सकाशादेव संसारस्य उत्पतिः जाता। तस्मिन्नेव अयं संसारः आश्रितो अस्ति। तथा प्रलये सति कारणे विलीनं जायते। संसारस्य नानात्वं तु न सत् भवति तस्यैकता एव एकमात्रं सत्यमस्ति। सः आनन्दज्ञानं तथा अनन्तानन्दमस्ति। तस्मात् अन्या सत्ता नास्ति ब्रह्मैव एकमात्रविशुद्धसत्ता विद्यते, तथापि अविद्याकारणेन तत्र नैकाः प्रतितयः भवन्ति।

अर्थात्– अविद्या कारणेन ब्रह्मणः सत्यस्वरूपं न ज्ञात्वा सर्वे नानात्वं पश्यन्ति। यदि अज्ञानं न स्यात् तर्हि ब्रह्मणः अनेकरूपतामिति न भवति। माया–अविद्या–अज्ञान वस्तुतः एकार्थकः विद्यते। दृष्टिभेदेनैव नानात्वं दृश्यते। माया तथा ब्रह्म उभयोः प्रयोगेनापि विशुद्धाद्वैतस्य प्रतिपादने कापि बाधा नास्ति कारणं मायैव परंब्रह्मणः एका शक्तिः विद्यते। आचार्यशङ्करेण अद्वैतं अनुभवार्थं द्वे दृष्टी प्रदर्शिते। प्रथमः व्यवहारिकदृष्टिः–तथा द्वितीयः पारमार्थिकदृष्टिः। व्यवहारिकदृष्टिः–इयं साधारणा, मनुष्याणां कृते ये संसारं सत्यमिति चिन्तयन्ति अस्माकं व्यवहारिकजीवनं अत्रैव भवति। अनया दृष्ट्या भगवता शङ्कराचार्येण ब्रह्मैव सगुणः अथवा इश्वरः इत्युच्यते। द्वितीयपारमार्थिकं दृष्टिः– अर्थात् ब्रह्मणः पारमार्थिकस्वरूपं भवति तद्यथा –

दिव्यो ह्यमूर्तः पुरूषः सबाह्यभ्यन्तरो ह्यजः।
अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रो ह्यक्षरात्परतः परः।।

अर्थात्– तत् अक्षरब्रह्म निश्चयमेव दिव्यो, अमूर्तः पूरूषः, सर्वत्र अन्तःबहिर्विद्यमानं अजन्मा, अप्राणः, मनोहीनः, विशुद्धः, तथा च अक्षरादपि श्रेष्ठः विद्यते। एवमेव ज्ञानिनां कृते विद्यते। येषां मते संसारमाया तथा ब्रह्मणः अतिरिक्ता अन्या सत्ता नास्ति। अनेन ब्रह्मनिर्गुणं भवति, एवञ्च आत्मा तथा ब्रह्मणि कोऽपि भेदः नास्ति। तदा नानात्वं निवार्यते, यथा– सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं ब्रह्म इति पारमार्थिकदृष्टिः अविद्या निवारणे सति भवति। किन्तु अविद्यायाः नाशः आत्मज्ञानेनैव भवति। जीवः अज्ञानकारणेनैव ब्रह्मणि भेदं पश्यति। यथा ब्रह्म आन्नदमयः विद्यते, तथा आत्मा अपि आनन्दस्वरूपो विद्ते इति प्रतिपादितम्। ब्रह्मैव जगत्कारणं इति श्रुतिः उपदिशति –सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलान् इत्युक्तम् कथं तस्माज्जगदिदं जायते तस्मिन्नेव च लीयतेऽनिति च।। अर्थात् – सर्वं निश्चयेन ब्रह्मैव अस्ति, तथा तस्मात् सत् ब्रह्मणः सकाशात् जगत्सर्वं उत्पद्यते, तस्मिन्नैव लीनं भवति, तस्मिन्नैव स्थितं करोति। इति श्रुतिः स्पष्टयति।

ब्रह्म सर्वकारणत्वम् :–

एतस्माज्जायते प्राणो मनः सर्वेन्द्रियाणि च।
खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी।।

अर्थात् – अस्मात् सतो अक्षरपुरूषात् प्राणः उत्पद्यते, एवं मनः सर्वाणि चेन्द्रियाणि विषयाः च एतस्मादेव उत्पन्नाः जायन्ते। शरीर विषयक कारण स्वरूप भूत वर्गः आकाशः, वायुरन्तर्बाह्य आवहादिभेदः, ज्योतिरग्निः, आप उदकम्, पृथिवी धरित्री विश्वस्य धारिणी एतानि उत्पन्नानि जातानि। एवमेव परा विद्या विषय भूतनिर्विशेषसत् पुरूषस्य दिव्यो ह्यमूर्तः इत्यादि मन्त्रेण संक्षेपेण उक्त्वा अधुना तस्य तत्त्वस्य सविशेषरूपेण विस्तारपूर्वकं वर्णनं क्रियते, यथा ब्रह्माण्डान्तर्वर्ती विराट्प्रथमोत्पन्नः प्राणः अर्थात् हिरण्यगर्भात् उत्पन्नः सः तत्त्वान्तरितत्वेन लक्ष्यमाणोऽप्येतस्मादेव पुरूषाज्जायत एतन्मयश्चेत्येतदर्थमाहेति।

वेदान्तपरिभाषायां विषयपरिच्छेदे ब्रह्मणः जगत्कातणत्वविचार :–

अत्र विचार्यते यत् वेदान्तवाक्यैः ब्रह्मणः जगत्कारणत्वं यदि उच्यते चेत् तदा बह्म प्रपञ्चयुक्तमिति चिन्तनीयम्। यदि एवं न मन्यते चेत् वेदान्ते स्थितानां सृष्टिप्रतिपादकवाक्यानां अप्रमाणं जायेत। तदा समाधानं उच्यते– न हि वेदान्तसृष्टिप्रतिपादकवाक्यानां सृष्टौ तात्पर्यं किन्तु अद्वितीये ब्रह्मण्येव। विवरणम्–'अव्यक्तं पुरूषे ब्रह्मन् निष्कले च प्रलीयते' – अव्यक्त–निष्कलपुरूषे विलीनं भवति। तस्मात् जगत् साक्षात् उत परम्परया परमात्मन्येव विलीनो भवति। अनया स्मृत्या ब्रह्मैव जगदुपादानकारणमिति वक्तव्यम्। तदा तु मृतिका सदृशी घट–शरावादि प्रपञ्च, तथैव जगत् ब्रह्मणः प्रपघ्ञ्चमिति चिन्तनीयम्। कारणं ब्रह्म 'प्रपञ्चसहवर्तमान' अतः प्रपञ्चः ब्रह्मपदवाच्यो भवति। यदि एवं न मन्यते चेत् वेदान्ते तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः (छा.उ.) इति उक्तानां सृष्टिवाक्यानां का गतिः भविष्यति। अर्थात् अप्रामाण्यं भविष्यति।

अस्य प्रश्नस्य ग्रन्थकारेण उत्तरम् उच्यते यत् वेदान्तानां सृष्टिवाक्यानाम् उद्देश्यं सृष्टिप्रतिपादने नास्ति, अपितु ब्रह्म अद्वितीयम् इति साधने वर्तते। अत्र संशयः भवति सृष्टिप्रतिपादकवाक्यानां ब्रह्मज्ञानप्रतिपादने उपयोगं कथं भवति, एतस्य उत्तरं सृष्टेः उपन्यासं अकृत्वा प्रपञ्चस्य ब्रह्मणि यदि निषेधो उच्येत तदा तस्य निषिद्धस्य प्रपञ्चस्य ब्रह्मणः सकाशात् अन्यत्र स्थितेः आशङ्का भवितुमर्हति। यथा वायौ रूपस्य निषेधो क्रियते चेत्, तस्मात् अन्यत्र रूपस्य स्थितेः आशङ्का भवति। तदा असन्दिग्धम् अद्वैतं न उक्तं इति चिन्तनीयं भवति अतः सृष्टिवाक्यैः 'जगत्' ब्रह्मोपादानकं वर्तते। तस्मात्

उपादानेन विना कार्यं अन्यत्र न भवितुमर्हति। अनेन आशङ्कायाः निराकरणं जायते। नेति–नेति वाक्येन ब्रह्मण्येव प्रपञ्चस्य असत्वे सति प्रपञ्चस्य तुच्छत्वावगमे तदा समस्तद्वैत–विभ्रमरहित–अखण्ड–सच्चिदानन्दैकरसं ब्रह्म सिद्ध्यतीति परम्परया सृष्टि वाक्यानामप्यद्वितीये ब्रह्मण्येव तात्पर्यम्। अत्र शङ्का– सृष्टिवाक्यैः अद्वैतीय ब्रह्म बोधो भवति चेदपि असन्दिग्ध अद्वितीय– ब्रह्मणः ज्ञानं नैव भवितुमर्हति। कारणं वेदान्तस्य "य एषोऽन्तरादित्ये हिरण्यमयः पुरूषः" एतेषु वाक्येषु सगुणब्रह्मणः प्रतिपादनमस्ति। अत्र आशङ्कायाः समाधानं प्रतिपादयति ग्रन्थकारः यथा – उपासना प्रकरण पठितसगुण ब्रह्मवाक्यानां तात्पर्यं उपासनाविधौ आपेक्षितगुणानां केवलं आरोपमात्रपरत्वं न तु ब्रह्मणि एतेषां गुणानाम् अस्तित्वप्रतिपादने वर्तते। निर्गुणप्रकरणे आगतानां सगुणब्रह्म प्रतिपादक वाक्यानाम् उपयोगः, निषेधवाक्येषु निषेधस्य उपयोगः (निषेधार्यं इष्टं वर्तते) अर्थात् केवलं गुणानाम् उपस्थिति सम्पादनमात्रं वर्तते। तस्मात् कारणात् न किञ्चिदपि वाक्यम् द्वितीय ब्रह्म प्रतिपादने विरूध्यते।

संदर्भ :–

1. तै.उ. भृ. ब. 1
2. तै. उ. 2.1.1
3. छा. उ. 6–3–2
4. मु. उ. 1–9
5. प्रश्न. उ. 5
6. मा. उ. 1–15
7. बृ. उ 5–15
8. मु. उ. 1–7
9. छा. उ.1.9.1
10. तै. उ. 1–7
11. तै. उ. 2–6
12. मु. उ. 1.1.6
13. प्र. उ. 6–3
14. प्र. उ. 6–4
15. छा. उ. 6–4
16. छा. उ. 6–5
17. छा. उ. 6–6
18. मु. उ.1–3
19. मु. उ. 2.1.2
20. छा. उ.
21. मु. उ. 2.1.3
22. छा. उ. 6.7.9

Mail Id & avedanta85@gmail.com

Ph- No- & +918328895306

Whats App & +918131862027

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 12-14

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मानव जीवन पर शिक्षा का प्रभाव

–धर्मजीत कु0 धनंजय

छात्र, मिथिला संस्कृत स्नातकोत्तर, अध्ययन एवं शोध संस्थान, दरभंगा, बिहार।

मनुष्य की शोभा उसके रूप, रंग, लंबाई, मोटाई, गहना–जेवर से नहीं, बल्कि उसमें व्याप्त विद्या रूपी ज्ञान, विज्ञान और स्वभाव से होती है। विद्या धन एक ऐसा धन है जिसे देखा नहीं जा सकता है। यह गुप्त धन है। तभी तो कहा गया है –

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्न गुप्तं धनं।
.....विद्या राजसु पूज्यते नहिं धनं विद्याविहिनं पशुः।।[1]

इस प्रकार किसी भी देश में विद्या की पूजा होती है, धन की नहीं, क्योंकि जहाँ मूर्खों का आदर–सम्मान होता है, वहाँ की अर्थ–व्यवस्था चरमरा जाती है।

मूर्खाः यत्र न पूज्यन्ते धान्यं यत्र सुंसंचितम्।
दान्पत्ये कलहो नास्ति तत्र श्री स्वयमागता।।[2]

जिस देश में मूर्खों का आदर सम्मान नहीं होता अर्थात जहाँ मूर्ख व्यक्तियों को प्रधानता नहीं दी जाती है, अन्न संचित और सुरक्षित रहता है तथा जहाँ पति–पत्नी में कभी झगड़ा नहीं होता, वहाँ लक्ष्मी बिना बुलाये ही निवास करती है, उन्हें किसी प्रकार की कमी नहीं रहती।

शिक्षा ही ऐसी धन है जो एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से अलग पहचान करवाता है। यह मनुष्य एवं पशुओं में अंतर बताता है, नही ंतो मूर्ख मनुष्य बिना सिंग एवं पुँछ के जानवर के समान माना जाता है –

''येशां न विद्या, न तपो न दानं
ज्ञानं न शीलं गुणो न धर्मः।
ते मृत लोके भूविभार भूताः
मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति।''[3]

दुनिया के सभी प्राणियों में मानव जीवन को सर्वोत्तम माना गया है, लेकिन सर्वोत्तम कहलाने के लिए शिक्षा ही सर्वोपरि साधन माना गया है। तभी तो महाभारत में कहा गया है –

''नास्ति विद्या समं चक्षुः चरित्र सत्यतमं तपः।''[4]

अर्थात् न तो विद्या के समान कोई नेत्र है और न सत्य के समान कोई तप। इसलिए जीवन विद्या से कोई भी सुख विमुख न हो। सद्विद्या से ही हम सदैव अपने मित्रों, परिजनों और समाज की सेवा करते हैं।

विद्वान प्रायः कहते हैं कि बालक देश का भविष्य है, ये बात बिल्कुल सही है, परन्तु यह तभी अच्छा हो सकता है जब बालकों को उचित शिक्षा एवं सही मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया जाए। इसकी शुरूआत बच्चों के माता–पिता द्वारा ही किया जा सकता है। क्योंकि कहा गया है –

माता शत्रु पिता वैरी येन बालो न पाठितः।
न शोभते सभामध्ये हंस मध्ये बको यथा।।[5]

लेकिन जब आप वास्तव में सिख रहे होते हैं, तब आपके लिए कोई गुरू ही नहीं रह जाता है, तब प्रत्येक वस्तु आपको सिखाती है। एक सूखी पत्ती, एक उड़ती हुई चिड़िया, एक खुशबू, एक आँसू, एक धनी, एक गरीब जो चिल्ला रहे हैं, एक महिला की मुस्कुराहट, किसी का अहंकार। आप प्रत्येक वस्तु से सीखते हैं। अतः कोई मार्ग दर्शक नहीं, कोई दार्शनिक नहीं, कोई गुरू नहीं। तब आपका जीवन स्वयं आपका गुरू है और आप सतत् सीखते रहते हैं। [6]

प्राचीन काल में लोगों को शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान अर्जित करने का था। लोग समाज में अपना प्रतिष्ठा प्राप्त करना चाहते थे, परन्तु आधुनिक युग लोगों को शिक्षा प्राप्त करने का उद्देश्य ज्ञान प्राप्त करना नहीं, बल्कि नौकरी प्राप्त करना है, परन्तु इस बदलती समाज और बढ़तें जनसंख्या के कारण बेरोजगारी की जो समस्या है उसका समाधान परम्परागत शिक्षा प्रणाली से संभव नहीं है। वैसे सरकार की जो नई शिक्षा नीति है, इससे कुछ हद तक स्वरोजगार को बढ़ाया जा सकता है। इसमें और बदलाव की आवश्यकता है।

वर्त्तमान में जो श्क्षिा के क्षेत्र में मँहगाई है और जो शिक्षा की दशा एवं दिशा है, उसे देखकर अभिभावक ही नहीं बल्कि बच्चे भी पढ़ने से मुख मोड़ रहे हैं। कहते हैं .. मैं पढ़कर क्या करूँगा? कहाँ से पढ़ूगा! लेकिन उन्हें अमेरिकी लेखक स्टीफन कोबे की कथन पर ध्यान देना चाहिए। उन्होंने कहा था –

''आप क्या बनोगे यह आपकी परिस्थितियों पर नहीं, आपके फैसलों पर निर्भर करती है।''[7]

इस प्रकार दूर दृष्टि और पक्का इरादा रखने वाले व्यक्ति किसी भी मुकाम पर पहुँच सकता है। ''सफलता तक पहुँचने के अनेक रास्ते हैं, लेकिन सफलता के इस सफर की शुरूआत दृष्टिकोण से होती है।'' सफलता के लिए हमें अवसर की भी आवश्यकता होती है। यदि उपयुक्त अवसर पर हम सही काम नहीं करें तो बाद में पछताने से कोई लाभ नहीं होगा। एक पुरानी कहावत है – ''अब पछताये क्या होता है? जब चिड़िया चुग गई खेत।'' इसी तरह ''किसी दूसरे की ओर से आया अवसर भी सफलता दे सकता है, पर यह वैसा मुकाम नहीं दे सकता जो अपने लिए खुद अवसर पैदा करने से मिलता है। पहली स्थिति में आप अनुकरण करते हैं, जबकि दूसरी में आप नेतृत्व करते हैं।'' [9]

सारी दुनिया में शिक्षा और उसके अधिकार के प्रश्न पर, विशेषकर बच्चों और किशोरों के अधिकार और मर्यादा की रक्षा के बारे में जागरूकता जगाने के साथ ही शिक्षा के अधिकार को स्पष्ट रूप से संविधान में शामिल किया गया है।[10]

सरकारी प्रयत्न का वास्तविक आरंभ तो सन् 1813 में ईस्ट इंडिया एक्ट में हुआ, जिसमें पहले कानूनी तौर पर यह बात तय की गई कि भारत में शिक्षा के नाम पर भी प्रति वर्ष सरकारी कोष से एक लाख रूपये खर्च किये जा सकते हैं।[11]

आज के अध्ययनरत नौजवान, छात्र एवं छात्राएँ क्यों भटक जाते हैं? सिर्फ इसलिए क्योंकि उनका अहं उनका ''स्व'' या उनका ''मैं'' उनपर हावी रहता है। वे संसार को ''स्व'' की तृप्ति की साधना चाहते हैं। इसके लिए वे झूठ बोलते हैं, वे चोरी करते हैं और जरूरत पड़े तो परिवार और शिक्षण में हिंसा भी कर देते हैं। कहने का अर्थ है कि उन पर भौतिकवाद हावी हो चुके हैं। जब एक ''स्व'' का शोधन नहीं होगा, उनका विसर्जन नहीं होगा, यह सफर बढ़ता ही चला जाएगा। इसके शोधन के लिए चाहिए नैतिकता–चरित्र की उज्ज्वलता–भीतर का अनुशासन और भीतर का यह नियंत्रण ही स्वानुशासन है जो ''स्व'' को नियंत्रित कर सकता है। [12]

आज की जो विद्या है, वह तो केवल अर्थकारी विद्या है। इसकी भर्त्सना गुप्त जी ने इस प्रकार की है –

''विद्ये तुम्हारा नाश हो तुम नौकरी के हित बनी।''[13]

सुकरात का शिष्य प्लेटो के अनुसार शिक्षा द्वारा आदर्श समाज के लिए ऐसे व्यक्ति का निर्माण करना था जो किसी भी कार्य को सक्रियता एवं विवके पूर्वक कर सके। उनका प्रमुख कथन था गुणी व्यक्ति में गुण का विकास हो।[14] मलाला युसुफजई ने कहा – ''एक बच्चा, एक शिक्षक, एक किताब और एक कलम से पूरी दुनिया बदल सकते हैं।''[15]

अतः मानव जीवन पर शिक्षा का महत्त्व आज ही भारत रूपी समाज या विश्वरूपी समाज को ही नहीं है, ये तो

आदि काल से ही विभिन्न देश– प्रांत, नगर, गुरूकुल को ज्ञान की खोज करना मुख्य उद्देश्य रहा है।[16] जो शिक्षा के विकास से ही होता रहा है। आज भी सभ्य समाज और देश के जीवन का विकास शिक्षा के बिना संभव नहीं है। इसलिए यदि हम चाहते हैं कि हमारा समाज, देश और विश्व का कल्याण हो तो हमें शिक्षा के विकास पर ध्यान देना होगा। सरकार को इसमें बढ़–चढ़कर आगे आने की जरूरत है।

संदर्भ सूची :–

1. भर्तृहरि नीतिशतकम् – 2/15
2. चाणक्य नीति, अध्याय – 3 श्लोक 21, पृष्ठ – 46
3. भर्तृहरि नीतिशतकम् – 2/22
4. पं0 श्रीराम शर्मा, विचार सार एवं सूक्तियाँ, द्वितीय खण्ड, द्वितीय संस्करण, 1998 पृष्ठ 18.9
5. चाणक्य नीति, अध्याय – 2 श्लोक 11, पृष्ठ – 30
6. मयंक भार्गव का आलेख, समकालीन अनुसंधान 2007, आर. के. नगर, पटना, पृष्ठ – 113
7. हिन्दुस्तान, 27 अगस्त 2020, पृष्ठ – 11
8. जैफ हैडेन, हिन्दुस्तान, 10 सितम्बर 2020, पृष्ठ – 13
9. वही
10. आशा कुमारी का आलेख, अन्वेशिका, द्वितीय खण्ड, 2008, पृष्ठ – 75
11. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, चौथा संस्करण 2019, पृष्ठ – 463
12. हीरा लाल महतो का आलेख, अन्वेषिका द्वितीय खण्ड, पृष्ठ – 13
13. शारदा कुमारी का आलेख, समकालीन अनुसंधान द्वितीय खण्ड, 2008, पृष्ठ – 85
14. डॉ0 योगेन्द्र महतो का आलेख, शास्त्रार्थ–खण्ड, अंक – 2, पृष्ठ – 42
15. हिन्दुस्तान, 5 सितम्बर 2020, पृष्ठ – 3
16. श्री कांत का आलेख, देव शोध प्रभा, 2012–13, पृष्ठ – 208

पता :– ग्रा0–पो0 – गोविन्दपुर

थाना – मंसुरचक

जिला – बेगुसराय (बिहार)

पिन – 851128

मो0 व्हाट्सएप – 9162630458, 6207470141

Email – dh154565@gmail.com

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 15-22

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

महिला उत्पीड़न समस्या के समाधान की खोज में : एक चिन्तन

–श्रीमती रजनी वरूण

सहायक आचार्य, (भूगोल), स.ध. राजकीय महाविद्यालय, ब्यावर

शोध सारांश :–

"अबला जीवन, हाय तुम्हारी यही कहानी।
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।।" –मैथिलीशरण गुप्त

समाज के प्रारम्भिक काल में सत्ता की और पितृसत्ता की व्यवस्था होने के कारण मानव समाज में दासों, दलितों और महिलाओं को दूसरे दर्जे का नागरिक समझा जाने लगा और उनके साथ शोषण और उत्पीड़न का सिलसिला चलता रहा जो आज तक जारी है। महिलाओं के प्रति उत्पीड़न एक बहु–आयामी मुद्दा है जिसके सामाजिक, निजी, सार्वजनिक और लैंगिक पहलू है। महिला उत्पीड़न की घटनाएँ कितनी व्यापक है, यह तय कर पाना मुश्किल है। यह एक ऐसा अपराध है जो अक्सर छुपाया जाता है, जिसकी रिपोर्ट कम दर्ज़ की जाती है, और कई बार तो इसे नकार दिया जाता है। नारी जननी होती है, वह बालक का पोषण करती है, इसलिए सदा वन्दनीय है। भारतीय परम्परा में यही नारी का विषयक दृष्टिकोण रहा है, परन्तु महिलाएँ आज भी अनेक क्षेत्रों में पुरूषों की अपेक्षा कमजोर स्थिति में है। लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की शिशु एवं बाल मृत्यु दर अधिक है, जिसका कारण कन्या भ्रूण हत्या है। वर्तमान में परिवार के भीतर एवं बाहर महिलाओं के विरूद्ध हिंसा निरन्तर बनी हुई है। आज दहेज हत्या, बलात्कार एवं यौन उत्पीड़न जैसे अपराधों में निरन्तर वृद्धि हो रही है जो समाज में महिलाओं की दयनीय स्थिति को प्रदर्शित करता है।

वर्तमान समय की माँग यह है कि हमें दहेज, पुत्र को जन्म देना और चारित्रिक संदेह के आधार पर महिलाओं का उत्पीड़न नहीं करना चाहिए।

परिचय :–

"अस्मिता आज नारी की तुमने पाँव तले जो कुचली है।
क्यूं तुमने ये समझ लिया है बस नारी कठपुतली है।।"

धर्म, नीति और सामाजिक मर्यादाओं की रचना पुरूषों ने की और नारी की स्वतंत्रता को गुलामी की जंजीरों में कसने में कोई कसर नहीं रखी। सभ्यता के प्रादुर्भाव के साथ ही नारी के शोषण एवं अत्याचार की स्थितियाँ शुरू हो गई। नारी अपने प्रति हुए अत्याचारों को सदा ही मूक होकर सहती रही है उसने कभी संगठित होकर विद्रोह नहीं किया। वही स्थिति आज भी है जबकि नारी के साथ हर क्षेत्र में भेदभाव किया जाता हैं। भारतीय नारी की विवशता है कि उस पर अत्याचारों का दौर जन्म से पूर्व ही प्रारम्भ हो जाता है अर्थात् लड़की को संसार में आने से रोकने के लिए गर्भावस्था टेस्ट करवाकर कन्या भ्रूण हत्या करने के प्रयास किए जाते हैं और कई बार पैदा होते ही मार दिए जाने की दुर्घटनाएँ होती है और उसका परिणाम यह है कि भारत में स्त्री–पुरूष अनुपात बड़ी तेजी से घट रहा हैं जिसे तालिका संख्या 1 में दर्शाया गया है :–

तालिका संख्या 1

भारत में राज्यवार लिंगानुपात (प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की संख्या)

प्रदेश	1901	1911	1951	1981	1991	2001	2011
राजस्थान	905	908	921	919	913	922	926
बिहार	1054	1044	990	946	912	921	916
उत्तर प्रदेश	937	915	910	885	882	898	908
मध्य प्रदेश	990	986	967	941	932	920	930
आन्ध्र प्रदेश	985	992	986	975	972	978	992
उड़ीसा	1037	1056	1022	981	972	972	978
हरियाणा	867	835	871	870	874	861	877
हिमाचल प्रदेश	884	889	912	973	996	970	974
पंजाब	832	780	844	879	888	874	893
पश्चिम बंगाल	945	925	865	911	917	934	947
गुजरात	954	946	952	942	936	921	918
तमिलनाडु	1044	1042	1007	977	972	986	995
महाराष्ट्र	978	966	941	937	936	922	925
केरल	1004	1008	1028	1032	1040	1058	1084
असम	919	915	868	910	925	932	954
भारत	972	964	946	934	927	933	940

इस तालिका से यह बात बिल्कुल साफ नजर आती है कि जैसे–जैसे हम अधिक विकसित हुए हैं लैंगिक अनुपात खराब ही हुआ हैं।

उत्पीड़न का अर्थ :–

उत्पीड़न (Presecution) किसी व्यक्ति या समुदाय के साथ किसी अन्य व्यक्ति या समुदाय द्वारा किया गया नियोजित व हानिकारक दुर्व्यवहार होता है। यह दुर्व्यवहार जाति, धर्म, नस्ल, लिंग, राजनीति या अन्य किसी आधार पर हो सकता है।

महिला उत्पीड़न :–

21वीं सदी के भारत में तकनीकी प्रगति और महिलाओं के विरूद्ध उत्पीड़न दोनों ही साथ–साथ चल रहे हैं। महिलाओं के विरूद्ध होता यह उत्पीड़न अलग–अलग तरह का होता है जो निम्नवत है।

महिला उत्पीड़न के प्रमुख प्रकार :–

1. शारीरिक उत्पीड़न
2. मानसिक उत्पीड़न
3. मौखिक उत्पीड़न
4. आर्थिक उत्पीड़न
5. यौन उत्पीड़न
6. सामाजिक उत्पीड़न
7. सांस्कृतिक उत्पीड़न एवं
8. पारिवारिक उत्पीड़न

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार किसी महिला को शारीरिक रूप से चोट या क्षति पहुँचना या किसी को मौखिक रूप से अपशब्द कह कर मानसिक परेशानी देना महिला उत्पीड़न का ही प्रारूप है। पत्नी के साथ दहेज के लिए मारपीट और बदसलूकी पारिवारिक उत्पीड़न तथा लड़कियों के साथ छेड़–छाड़, कन्या भ्रूण–हत्या और विधवा महिला को सती–प्रथा का पालन करने के लिए दबाव डालना आदि सामाजिक उत्पीड़न के अन्तर्गत आते है।

महिलाओं के विरूद्ध उत्पीड़नों में पिछले कुछ वर्षों में तेजी से वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरों के महिलाओं के विरूद्ध विभिन्न उत्पीड़नों के सम्बन्ध में निम्नवत तथ्य झकझोर देते हैं :–

महिला उत्पीड़न पर एक नज़र :–

महिलाओं के विरूद्ध अपराधों में पिछले कुछ वर्षों में तेजी से वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के महिलाओं के विरूद्ध विभिन्न अपराधों के सम्बन्ध में वर्तमान के निम्नवत तथ्य झकझोर देते हैं :–

1. हर 03 मिनिट में महिलाओं के विरूद्ध एक अपराध होता हैं।
2. हर 29 मिनिट में एक बलात्कार होता हैं।
3. हर 15 मिनिट में एक महिला के साथ छेड़छाड़ की घटना होती हैं।
4. हर 53 मिनिट में एक महिला यौन उत्पीड़न का शिकार होती हैं।
5. हर 77 मिनिट में एक दहेज पीड़िता की मृत्यु होती हैं।
6. हर 09 मिनिट में एक महिला पति या पति के रिश्तेदार की क्रूरता का शिकार होती हैं।
7. हर 23 मिनिट में एक महिला अपहरण या भगा ले जाने की शिकार होती हैं।

भारत के विभिन्न राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में सन् 2017, 2018 एवं 2019 में महिलाओं के साथ हुए उत्पीड़न को तालिका संख्या 2 में दर्शाया गया है जो निम्नवत हैं :–

तालिका संख्या 2

Crime against Women (IPC + SLL) – 2017-2019

S. No.	State/UT	2017	2018	2019	Percentage State Share To All-India (2019)	Mid-Year Projected Female Population (In Lakhs) (2019)	Rate of Total Crime against Women (2019)+
1	2	3	4	5	6	7	8
STATES:							
1	Andhra Pradesh	17909	16438	17746	4.4	261.4	67.9
2	Arunachal Pradesh	337	368	317	0.1	7.3	43.3
3	Assam	23082	27687	30025	7.4	168.9	177.8
4	Bihar	14711	16920	18587	4.6	576.2	32.3
5	Chhattisgarh	7996	8587	7689	1.9	143.8	53.5
6	Goa	369	362	329	0.1	7.6	43.1
7	Gujarat	8133	8329	8799	2.2	324.9	27.1
8	Haryana	11370	14326	14683	3.6	135.3	108.3
9	Himachal Pradesh	1246	1633	1636	0.4	36.1	45.4

10	Jammu & Kashmir	3129	3437	3069	0.8	64.2	47.8
11	Jharkhand	5911	7083	8760	2.2	183.3	47.8
12	Karnataka	14078	13514	13828	3.4	325.1	42.5
13	Kerala	11057	10461	11462	2.8	182.9	62.7
14	Madhya Pradesh	29788	28942	27560	6.8	399.6	69.0
15	Maharashtra	31979	35497	37144	9.2	588.5	63.1
16	Manipur	236	271	266	0.1	15.5	17.2
17	Meghalaya	567	571	558	0.1	16.1	34.6
18	Mizoram	301	249	170	0.0	5.9	28.7
19	Nagaland	79	75	43	0.0	10.4	4.1
20	Odisha	20098	20274	23183	5.7	223.9	103.5
21	Punjab	4620	5302	5886	1.5	141.9	41.5
22	Rajasthan	25993	27866	41550	10.2	376.4	110.4
23	Sikkim	163	172	125	0.0	3.1	39.8
24	Tamil Nadu	5397	5822	5934	1.5	379.2	15.6
25	Telangana	17521	16027	18394	4.5	185.3	99.3
26	Tripura	972	907	1070	0.3	19.7	54.5
27	Uttar Pradesh	56011	59445	59853	14.7	1081.4	55.4
28	Uttarakhand	1944	2817	2541	0.6	54.6	46.5
29	West Bengal	30992	30394	30394	7.5	474.9	64.0
	TOTAL STATES(S)	**345989**	**363776**	**391601**	**96.5**	**6393.3**	**61.3**
UNION TERRITORIES:							
30	A & N Islands	132	147	135	0.0	1.9	72.2
31	Chandigarh	453	442	515	0.1	5.4	95.2
32	D & N Haveli	20	38	49	0.0	2.3	21.6
33	Daman & Diu	26	16	33	0.0	1.3	25.2
34	Delhi UT	13076	13640	13395	3.3	93.1	144.0
35	Lakshadweep	6	11	38	0.0	0.3	115.2
36	Puducherry	147	166	95	0.0	7.9	12.1
	TOTAL UT(S)	**13860**	**14460**	**14260**	**3.5**	**112.1**	**127.2**
	TOTAL ALL INDIA	**359849**	**378236**	**405861**	**100.0**	**6505.4**	**62.4**

'+' Crime Rate is calculated as per one lakh of population

- Population Source: Report of Technical group on Population Projections (November, 2019) National Commission on Population, MoHFW.
- As per data provided by States/UTs.
- Due to non-receipt of data from West Bengal in Time for 2019, Data furnished for 2018 has been used.

भारत में बलात्कार की स्थिति :-

भारत के विभिन्न राज्यों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों में महिलाओं के साथ सन् 2019 में हुए बलात्कार के अपराध के आंकड़ों को आयु वर्ग अनुसार तालिका संख्या 3 में प्रस्तुत किया गया है जो निम्नवत हैं :-

तालिका संख्या 3

Women & Girls Victims of Rape (Age Group-wise) – 2019

			Child Victims of Rape (Below 18 Yrs)					Women Victims of Rape (Above 18 Yrs)					
S. No.	State/UT	Cases Repor-ted	Below 6 Years	6 Years & Above – Below 12 Years	12 Years & Above – Below 16 Years	16 Years & Above – Below 18 Years	Total Girls /Child Victims	18 Years & Above – Below 30 Years	30 Years & Above – Below 45 Years	45 Years & Above – Below 60 Years	60 Years & Above	Total Women / Adult Victims	Total Victims (Col.8+ Col.13)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
STATES:													
1	Andhra Pradesh	1086	16	38	184	323	**561**	431	89	21	2	**543**	**1104**
2	Arunachal Pradesh	63	1	2	13	9	**25**	26	12	1	0	**39**	**64**
3	Assam	1773	0	7	50	31	**88**	1231	376	96	0	**1703**	**1791**
4	Bihar	730	0	0	0	1	**1**	558	159	22	0	**739**	**740**
5	Chhattisgarh	1036	0	0	3	0	**3**	683	312	32	8	**1035**	**1038**
6	Goa	72	2	5	28	15	**50**	17	3	3	1	**24**	**74**
7	Gujarat	528	0	0	0	0	**0**	379	129	20	1	**529**	**529**
8	Haryana	1480	0	0	0	8	**8**	964	450	55	3	**1472**	**1480**
9	Himachal Pradesh	359	8	25	79	86	**198**	114	43	6	0	**163**	**361**
10	Jammu & Kashmir	223	0	0	9	2	**11**	137	62	13	0	**212**	**223**
11	Jharkhand	1416	0	2	19	167	**188**	909	304	25	0	**1238**	**1426**
12	Karnataka	505	0	0	0	0	**0**	363	133	10	2	**508**	**548**
13	Kerala	2023	45	160	373	693	**1271**	429	280	49	15	**773**	**2044**
14	Madhya Pradesh	2485	0	0	0	0	**0**	1836	572	74	8	**2490**	**2490**
15	Maharashtra	2299	0	0	0	0	**0**	1549	695	59	2	**2305**	**2305**
16	Manipur	36	0	0	6	4	**10**	22	2	1	1	**26**	**36**
17	Meghalaya	102	1	3	9	7	**20**	59	19	3	1	**82**	**102**
18	Mizoram	42	2	13	6	3	**24**	9	8	1	1	**19**	**43**
19	Nagaland	8	0	2	0	0	**2**	6	0	0	0	**6**	**8**
20	Odisha	1382	1	0	40	190	**231**	1091	53	6	2	**1152**	**1383**
21	Punjab	1002	14	37	178	201	**430**	419	148	9	2	**578**	**1008**
22	Rajasthan	5997	15	70	462	767	**1314**	3263	1272	200	2	**4737**	**6051**
23	Sikkim	11	0	0	0	0	**0**	6	2	2	1	**11**	**11**
24	Tamil Nadu	362	1	6	2	0	**9**	267	74	8	4	**353**	**362**
25	Telangana	873	0	0	0	0	**0**	633	212	27	1	**873**	**873**
26	Tripura	88	0	0	0	0	**0**	63	20	5	0	**88**	**88**
27	Uttar Pradesh	3065	29	41	113	89	**272**	2210	581	65	3	**2859**	**3131**
28	Uttarakhand	526	5	6	39	134	**184**	249	80	12	1	**342**	**526**
29	West Bengal	1069	0	0	1	3	**4**	736	310	18	1	**1065**	**1069**
	TOTAL STATES(S)	**30641**	**140**	**417**	**1614**	**2733**	**4904**	**18659**	**6400**	**843**	**62**	**25964**	**30868**
UNION TERRITORIES:													
30	A & N Islands	13	0	2	3	3	**8**	5	0	0	0	**5**	**13**
31	Chandigarh	112	4	9	31	21	**65**	29	18	0	0	**47**	**112**
32	D & N Haveli	0	0	0	0	0	**0**	0	0	0	0	**0**	**0**
33	Daman & Diu	4	0	0	0	0	**0**	2	2	0	0	**4**	**4**
34	Delhi UT	1253	0	0	0	0	**0**	948	296	8	1	**1253**	**1253**
35	Lakshadweep	0	0	0	0	0	**0**	0	0	0	0	**0**	**0**
36	Puducherry	10	0	0	0	0	**0**	10	0	0	0	**10**	**10**
	TOTAL UT(S)	**1392**	**4**	**11**	**34**	**24**	**73**	**994**	**316**	**8**	**1**	**1319**	**1392**
	TOTAL (ALL INDIA)	**32033**	**144**	**428**	**1648**	**2757**	**4977**	**19653**	**6716**	**851**	**63**	**27283**	**32260**
Percentage Share of Age–Group of Victims			**0.4**	**1.3**	**5.1**	**8.5**	**15.4**	**60.9**	**20.8**	**2.6**	**0.2**	**84.6**	**100.0**

महिला उत्पीड़न के कारण :–

अशिक्षा, कानूनी अज्ञानता और कमजोर आर्थिक स्थिति आदि महिला उत्पीड़न के प्रमुख कारण है। वर्तमान में महिला उत्पीड़न के मामलों में निरन्तर वृद्धि हो रही है। महिला उत्पीड़न के लिए उत्तरदायी मुख्य कारणों में निम्नवत को शामिल किया जा सकता है।

दहेज की लालसा :– शादी पर दहेज का नहीं मिलना अथवा कम मिलना तथा महिला द्वारा अपने माता–पिता के घर से धन–सम्पत्ति लाने से इंकार करना भी महिला उत्पीड़न का कारण हैं।

सब कुछ सहते रहने की संस्कारगत मानसिकता :– स्त्री पर अधिकार रखने की संस्कारगत मानसिकता से पुरूष नारी पर अत्याचार करते है दूसरी और अबला होने की संस्कारगत मानसिकता ही नारी को अत्याचार सहने को विवश करती हैं।

समाज में बदनामी का भय :– परिवार की इज्जत एवं समाज की बदनामी के भय से अधिकतर महिलाएँ उत्पीड़न को चुपचाप सह लेती है। स्वयं को दुश्चरित्र समझे जाने एवं समाज में उपेक्षा का भय भी नारी को शब्दहीन बना देता है।

आर्थिक निर्भरता :– पिछले कुछ समय में कामकाजी महिलाओं की संख्या बढ़ी है तथापि अधिकाशतः स्त्रियाँ आर्थिक रूप से पुरूषों पर निर्भर हैं। आर्थिक निर्भरता के कारण स्त्रियाँ अन्याय का प्रतिरोध नहीं कर पाती।

दुराग्रहपूर्ण सामाजिक मान्यताएँ :– पुरूष ही स्त्री का सुरक्षा कवच है इन संकीर्ण मान्यताओं का लाभ पुरूष उठाता है और स्त्री को अपने अधीन बनाये रखना चाहता है। पुत्र को जन्म देने वाली स्त्री को अधिक महत्त्व एवं पुत्री को जन्म देने वाली माता को प्रताड़ना जैसी दुराग्रहपूर्ण धार्मिक मान्यताओं ने स्त्रियों पर अत्याचारों को बढ़ाया है।

शिक्षा की कमी :– स्त्री शिक्षा की कमी स्त्रियों के अधिकारों के हनन का एक महत्त्वपूर्ण कारण हैं ग्रामीण क्षेत्रों की निरक्षर महिलाएँ अत्याचारों को सहती है वह तो यह भी नहीं समझ पाती कि उनके साथ अपराध हो रहा है और वे इसकी रिपोर्ट भी कर सकती हैं।

कानूनी जानकारी का अभाव :– कानूनी जानकारी का अभाव महिला अत्याचारों की निरन्तर वृद्धि का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण है। अशिक्षित महिलाएँ ही नहीं वरन् अधिकाशंतः उच्च शिक्षित महिलाओं को भी कानूनों की जानकारी नहीं होती।

साक्षियों का अभाव :– महिला अपराधों के सम्बन्ध में अधिकांश अपराधी गवाह, सबूत, बयान आदि के अभाव एवं धन बल के सहारे छूट जाते हैं। पीड़ित महिला वकीलों के प्रश्नों और जिरह से पानी–पानी होकर गलत बयान बाजी भी कर देती है जिससे महिलाओं को सही न्याय नहीं मिल पाता है।

महिला उत्पीड़न के दुष्परिणाम :–

महिलाओं के साथ होने वाले हिंसक व्यवहारों का महिलाओं के साथ–साथ समाज पर भी विविध प्रभाव परिलक्षित होते है, जो निम्नवत है :–

क) उत्पीड़न के कारण महिलाएँ स्वास्थ्य, सुरक्षा और शिक्षा जैसे अपने मूलभूत अधिकारों से वंचित हो जाती है।

ख) उत्पीड़न के परिणामस्वरूप महिलाएँ तनाव, चिन्ता, अवसाद, नींद न आना, शारीरिक थकावट और गम्भीर सिर दर्द आदि से ग्रसित हो जाती है। कई महिलाएँ तो मानसिक रूप से बीमार भी हो जाती है।

ग) वैवाहिक सम्बन्धों में तनाव उत्पन्न हो जाता है घर में झगड़ें बढ़ जातें है।

घ) पीड़ित महिला में आत्महत्या करने की प्रवृत्ति उभर सकती है।

ङ) पीड़िता का सामाजिक जीवन समाप्त हो जाता है तथा उसका परिवार भी इससे प्रभावित होता है।

च) पीड़िता की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण वे मजबूरन अथवा दबाववश अनैतिक कार्यों में शामिल हो जाती है।

महिला उत्पीड़न से निपटने के प्रभावी उपाय :–

महिला उत्पीड़न से निपटने का समग्र दृष्टिकोण अपराधियों के व्यवहार में बदलाव लाने के गम्भीर प्रयासों के बगैर कभी पूरा नहीं हो सकता। पिछले दशकों में स्त्रियों का उत्पीड़न रोकने और उन्हें उनके हक दिलाने के बारे में बड़ी संख्या में कानून पारित हुए हैं। भारत में महिला उत्पीड़न को रोकने हेतु महिलाओं को अनेक कानूनी अधिकार प्रदान किये गए है जो निम्नवत है :–

1. **दहेज प्रतिषेध अधिनियम 304 (ख) :–** भारतीय दण्ड संहिता में 1986 के अधिनियम संख्यांक 43 की धारा 10 अन्तः स्थापित कर धारा 304 (ख) को दहेज मृत्यु से जोड़ा गया है।

2. **बलात्कार (धारा 375, 376 भारतीय दण्ड़ संहिता) :–** बलात्कार का अपराध महिलाओं के विरूद्ध सबसे भंयकर हिंसा का अपराध या अत्याचार है। ऐसे उत्पीड़न से महिलाएँ न केवल शारीरिक रूप से प्रताड़ित होती है बल्कि मानसिक रूप से भी बहुत ज्यादा असुरक्षित हो जाती है। इस हेतु भारतीय दण्ड़ संहिता की धारा 375 और 376 का कानून पारित किया गया है।

3. **अपहरण और भगा ले जाना :–** महिलाओं का अपहरण और उन्हें भगा ले जाने के प्रकरण हेतु भारतीय दण्ड़ संहिता की धारा 363—373 का कानून पारित किया गया है।

4. **महिला की गरिमा भंग करना (धारा 354 भारतीय दण्ड़ संहिता) :–** महिलाओं की गरिमा भंग करने सम्बन्धी प्रकरण हेतु भारतीय दण्ड़ संहिता की धारा 354 का कानून पारित किया गया है।

5. **क्रूरता (धारा 498 (क) भारतीय दण्ड़ संहिता) :–** किसी स्त्री के पति या पति के नातेदार द्वारा स्त्री के साथ क्रूरता करने पर भारतीय दण्ड़ संहिता की धारा 498 (क) के तहत तीन वर्ष का कारावास और जुर्माने का प्रावधान रखा गया है।

कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ यौन उत्पीड़न एक्ट 2013 अधिनियम :–

इसके तहत सेक्शुअल हरैसमेन्ट करने वालों के खिलाफ अनुशासनात्मक से लेकर अपराधिक कार्यवाही तक की जा सकती हैं।

सुझाव :–

भारत में महिला उत्पीड़न बहुत पुराना सामाजिक मुद्दा है जिसकी जड़ें अब सामाजिक नियमों तथा आर्थिक निर्भरता के रूप में जम चुकी हैं। बर्बर सामूहिक बलात्कार, दफ्तर में यौन उत्पीड़न और तेज़ाब फेकनें जैसी घटनाओं के रूप में महिलाओं के विरूद्ध उत्पीड़न उजागर होता है। अतः महिला उत्पीड़न को रोकने के लिए हमें प्रभावी कदम उठाने होगें। इस हेतु निम्नलिखित सुझाव अपनाये जा सकते है :–

1. नाकाबिल न्यायिक व्यवस्था को दुरूस्त किया जाये।
2. कन्या भ्रूण हत्या जैसी कुरीति पर रोक लगायी जाये।
3. दहेज प्रथा पर रोक लगायी जाये।
4. कार्यस्थल पर महिलाओं को विशेष सुरक्षा प्रदान की जाये।
5. महिला शिक्षा को बढ़ावा दिया जाये।
6. महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने हेतु रोजगार में प्राथमिकता दी जाये।
7. महिला उत्पीड़न सम्बन्धी मामलों में कानूनी प्रक्रिया को सरल एवं लचीला बनाया जाये।
8. महिला उत्पीड़न सम्बन्धी कानूनों से महिलाओं को अवगत करवाया जाये।
9. महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा दिया जाये।
10. समाज में विधमान लैंगिक विषमता को समाप्त किया जाये।

निष्कर्ष :–

स्वतन्त्रता के इतने वर्ष बीत चुके है, अब तो महिलाओं को अपने साथ होने वाले उत्पीड़न से लड़ने में सक्षम हो जाना चाहिए। महिलाओं को विश्वास दिलाना होगा कि उनके अधिकार कानून की किताबों में बन्द नहीं है अपितु सक्रिय है। वर्तमान में महिलाओं की महत्ता को समझ कर उन्हें संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए क्योंकि :–

"नारी का करो सम्मान।
तभी बनेगा देश महान्।।"

सन्दर्भ :–

1. डॉ. जैन छीपा :– महिला सुरक्षा एवं महिला पुलिस, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
2. घई यू. आर. :– अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति सिद्धान्त और व्यवहार, न्यू ऐकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी, माई हीरा गेट, जालन्धर।
3. लाम्बा एस.सी. :– मानवाधिकार और पिछड़ा वर्ग, आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर।
4. डॉ. कपूर श्याम किशोर :– अन्तर्राष्ट्रीय विधि, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, मोतीलाल नेहरू रोड़, इलाहाबाद।
5. डॉ. सिंह राजबाला :– मानवाधिकार और महिलाएँ, आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर।
6. अग्रवाल दिलीप :– समाज कार्य एवं जनकल्याण, प्रिज्म बुक्स (इण्डिया), जयपुर।
7. पूजा एवं दीक्षा गुलाटी :– हिंसा और कानून, कार्य स्थल पर महिलाओं का यौंन उत्पीड़न, दृष्टि प्रिन्टर्स नई दिल्ली।

पता म. नं. 715/29 आनन्दपुरी, मेयो लिंक रोड़ अजमेर

Email :-rajnivarun28@gmail.com

मो. नं. 9460359553, 7976855140

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 23-27

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत में पंचायती राज व्यवस्था का अवधारणात्मक विवेचन

–डॉ. पूजा वरूण

सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान), स. ध. राजकीय महाविद्यालय, ब्यावर, बिहार

प्राचीन भारत में पंचायत :–

पंचायत प्रजातंत्र पौधें का प्राचीनतम गुलदस्ता है, जिसका प्रादुर्भाव भारत – भूतल पर वैदिक काल में ही हुआ।

"भद्रमिच्छन्तः ऋषयः स्वविदस्तपोदीक्षामुपनिषे दुरग्रे।
ततो राष्ट्रं बलमोजष्च् जातं् तदस्मै् देवा उपसंजन्मन्तु।।"

जनशक्ति सर्वप्रथम 'विराज्' शासन में संगठित हुई, जिसमें कोई राजा या अध्यक्ष नहीं था। जनसमूह निर्णय एवं क्रियान्विति दोनों के लिए उत्तरदायी था। यह प्रत्यक्ष प्रजातंत्र का स्वरूप था, जिसमें पंचायत का बीजांकुर हुआ।

"विराइ वा इदमग्र सासीत् तस्या जातायाः
सर्वविभेदिय में वेद भविष्यतीति।।"

विराज शासन में समूह को बुलाने वाला एवं निर्णय को कार्यान्वित कराने वाला कोई विशेष वयथ्कत उत्तरदायी नहीं था इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए जनशक्ति उत्क्रान्त होकर 'सभा', 'समिति' और 'आमंत्रण' में परिणत हो गई।

"सा उदक्रामत सा सभायान्य क्रामत्।
सा उदक्रामत सा समितौन्य क्रामत्।
सा उदक्रामत सा आयन्त्रवोन्य क्रामत्।"

सभा, समिति एवं आमंत्रण पंचायत के पर्याय है किन्तु उस समय ग्राम स्तर से राष्ट्र स्तर तक की शासन व्यवस्था पंचायत पद्धति पर आधारित थी। आधुनिक त्रिस्तरीय पंचायत प्रणाली सम्भवतः इसी से उत्प्रेरित है। वैदिक पंचायत प्रणाली वाल्मीकि रामायण काल में भी संचालित रही। महाभारत काल में भी स्थानीय स्वायत्त शासन पौर, श्रेणी आदि संस्थाओं द्वारा संचालित था जो पंचायत के पर्यायवाची शब्द थे। कौटिल्यकाल में भी पंचायत पद्धति के द्वारा स्थानीय स्वायत्त शासन संचालित था। इसी प्रकार बुद्धकाल, जैनकाल, गुप्तकाल आदि को पार करता हुआ पंचायत प्रबंधन परिवर्तित रूपों में निरन्तर कायम रहा। उदाहरणस्वरूप लिच्छवि गणराज्य छोटे–छोटे स्थानीय स्वायत्त शासन केन्द्रों में विभक्त था जो पंचायत के घोतक थे मेगस्थनीज ने भी इसका वर्णन किया है।

प्राचीन भारत में पंचायत प्रणाली की विशेषताएँ :–

प्रो. जी. एन. शर्मा के अनुसार ग्राम सभा की कुछ प्रमुख विशेषताएँ थी–

1. भू–स्वामित्व किसान या किसी व्यक्ति का न होकर ग्राम सभा का था।
2. जंगल का लाभ ग्राम सभा को मिलता था।
3. ग्राम सभा व्यापारी से कर वसूलती थी।
4. भूमि, चारागाह आदि सारी व्यवस्था ग्राम सभा करती थी।
5. ग्रामीण शासन का स्तर बहुत ऊँचा था।

मध्यकालीन भारत में पंचायत :-

मध्यकाल में भी पंचायत प्रणाली अत्यधिक सशक्त होने के कारण भारत धन–धान्य एवं वैभव से भरपूर था। इस वैभव को लूटने के लिए मध्य एशिया एवं यूरोप के लालची शासकों ने भारत पर आक्रमण किया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी जो 1600 में ब्रिटिश साम्राज्ञी एलिजाबेथ से आदेश पत्र प्राप्त कर व्यापार की तृष्णा से भारत आई थी अतः राजनीतिक प्रभुत्व की तृष्णा बढ़ाने लगी और 18वीं शताब्दी के अन्त तक भारत के बड़े भू–भाग पर आधिपत्य जमा लिए। 18वीं शताब्दी तक ग्रामीण स्थानीय स्वायत्त शासन पंचायत–पद्धति के अन्दर सुरक्षित एवं सशक्त रहा।

मध्यकालीन पंचायत - पद्धति का परिणाम :-

पंचायत पद्धति के परिणामस्वरूप 1800 तथा भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था के मुख्य आधार घर–घर में संचालित छोटे–छोटे कुटीर उद्योग थे। पुरूष कृषि, उद्योग, वाणिज्य एवं अन्य कार्य से बाहर जाते थे और महिलाएँ घर में बटन, कालीन, दियासलाई आदि बनाती थी। भारतीय उद्योगों के निर्मित माल का निर्यात विश्व के कोने–कोने में होता था जिससे विदेशी पूँजी भारत को पर्याप्त मात्रा में मिलती थी। इससे देश धन–धान्य से सम्पन्न था जिसे वास्को–डिगामा ने "सोने की चिड़िया" की संज्ञा से सम्बोधित किया। 1800 में अंग्रेजों ने सर्वेक्षण से पाया कि भारत का माल सम्पूर्ण संसार में अपना वर्चस्व बनाए हुआ था। इग्लैण्ड में भी 60 प्रतिशत भारतीय मालों की खपत थी। भारतीय उद्योग, भारतीय समृद्धि, भारतीय शक्ति एवं भारतीय संस्कृति पंचायत रूपी कछुए की खोल में सर्वथा सुरक्षित थी। पंचायत के रहते अंग्रेजी हुकूमत भी भारत में अधिक दिनों तक टिक नहीं सकती।

परम्परागत पंचायत पद्धति का पतन :-

ऐसा महसूस कर अंग्रेजी शासकों ने पंचायत पद्धति को ही निर्मूल कर दिया। इस पर अंग्रेजी विदेशी शासकों ने ग्राम पंचायतों की इस प्राचीन परम्परा का ध्वंस कर हमारे देश के प्रति सर्वाधिक धातक कुकृत्य किया। पंचायत के पतन से भारतीय ग्रामीण समाज व्यवस्था विघटित हो गई, परिणामतः भारतीय उद्योग धन्धे असुरक्षित होकर नष्ट हो गए। इसी तरह भारत के रेशमी और ऊनी कपड़े, लोहा, काँच, चमड़े, चीनी आदि के उद्योग नष्ट कर दिए गए। जो भारत ब्रिटेन व अन्य देशों को माल भेजता था वहीं अब ब्रिटेन के तैयार माल का बाजार बन गया, साथ ही भारतीय शक्ति, संस्कृति, समृद्धि पंचायत के पतन के साथ पतन के गर्त में चली गई।

आधुनिक भारत में पंचायत :-

विदित है कि 18वीं शताब्दी समाप्त होते ही ईस्ट इण्डिया कम्पनी काल में ब्रिटेन शासकों ने सम्पूर्ण भारत से पंचायत पद्धति को उखाड़ फेंका। इसके बाद पूरे एक शताब्दी तक पंचायत का बीज भारत–भूतल पर अंकुरित नहीं हो सका। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में 1857 में सिपाही विद्रोह के नाम से आजादी की पहली लड़ाई लड़ी गई जिसमें अन्तिम मुगल बादशाह बहादुरशाह ज़फर के नेतृत्व में भारत के सभी राजा एवं नवाब एकजुट हो गए, किन्तु ग्रामीण स्थानीय स्वायत्त शासन को पुर्नजीवित करने के कोई सुधार नहीं हो सकें।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व ब्रिटिश काल में पंचायत :-

भारत की दुर्दशा से द्रवित होकर अंग्रेज शासक रिचर्ड ने इसके कारणों का अन्वेषण किया। 18 मई 1882 को भारतीय ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में स्थानीय स्वायत्त शासक से सम्बन्धित लार्ड रिपन का महत्वपूर्ण प्रस्ताव पेश किया गया जो बहुत वर्षों के लिए मृतप्राय हो गया। 1909 में रॉयल कमीशन के प्रतिवेदन ने ग्राम पंचायत की स्थापना के लिए उदारवादी अनुशंसा की, जो प्रयोग के धरातल पर उतर नहीं सकी, चूँकि अंग्रेजी सरकार की अभिरूचि नहीं थी।

बापू का पर्दापण एवं पंचायत का पुर्नजीवन :-

1915 में दक्षिण अफ्रीका से लौटने के बाद महात्मा गाँधी का पर्दापण भारतीय राजनीति में हुआ। 1916 में उन्होंने देश के प्रत्येक नागरिक को स्वराज्य का सहभागी बनाने एवं प्रत्येक ग्राम को स्वावलम्बी बनाने का संकल्प लिया।

स्वातंत्र्योतर भारत में पंचायत :-

स्वतन्त्र भारतीय संविधान के प्रारूप में पंचायत की कोई चर्चा नहीं थी। बापू जब इस तथ्य से अवगत हुए तो बहुत दुखी हुए। संविधान सभा में प्रस्तुत प्रारूप में भी पंचायत की चर्चा नहीं थी। संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर ने पंचायत का घोर विरोध किया। अन्त में राजेन्द्र प्रसाद, पं. जवाहर लाल नेहरू, पटेल, मौलाना आजाद के प्रयास के परिणामस्वरूप संविधान के अनुच्छेद 40 में राज्यों के नीति निर्देशक तत्व के अर्न्तगत पंचायत प्रावधान किसी प्रकार जोड़ा जा सका। इससे वस्तुतः पंचायतों को संवैधानिक दर्जा हासिल नहीं हुआ, पंचायत राज्य सरकार की इच्छा पर आधारित हो गई। फिर भी प्रत्येक राज्य में ग्राम पंचायतों की स्थापना हो गई। पूरे भारत में 2,25,832 पंचायतें गठित हुई।

पंचायती राज के इतिहास का काल-विभाजन :-

पंचायती राज के इतिहास में 1959 से 1964 तक की अवधि प्रगतिशीलता की अवधि मानी जाती है, जिसमें संरचनात्मक एवं विकासात्मक क्रियाकलापों में अच्छी प्रगति हुई। 1965 से 1969 तक की अवधि यथावत स्थिति की अवधि मानी जाती है जिसमें कोई नवीनता परिलक्षित नहीं हुई। 1969 के बाद से 1992 तक की अवधि में ह्रासात्मक स्थिति आ गई। प्रायः प्रत्येक राज्य में पंचायती राज का नियमित निर्वाचन नहीं कराया गया। ग्रामीण विकास के सभी कार्य सरकारी तंत्र के माध्यम से कराये गए अतः जनता एवं पंचायती राज के स्थानीय जन–प्रतिनिधियों को सहभागिता का सुअवसर नहीं दिया गया। सप्तम पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम असफल हो गया। ग्रामीण विकास योजनाओं पर अरबों–खरबों रुपये व्यय होने के बावजूद आनुपातिक सफलता नहीं मिली। इस प्रकार यह पंचायती राज के पतन की अवधि है।

राजीव गाँधी का पर्दापण एवं पंचायती राज का परिमार्जन :-

इंदिरा गाँधी की हत्या के बाद अचानक राजीव गाँधी जैसे युवा नेता का प्रवेश भारतीय राजनीति में प्रधानमंत्री के रूप में हुआ। उन्होंने एक नारे का उद्घोष किया, "जनता को सत्ता सौंप दो।" इस नारे को प्रभावी बनाने हेतु उन्होंने पंचायती राज को सशक्त व सुदृढ़ बनाने का संकल्प लिया। इस हेतु उन्होंने सिंघवी समिति का गठन किया, जिसने पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा देने, नियमित निर्वाचन कराने की सिफारिश की। उनके द्वारा गठित केन्द्र – राज्य सम्बन्ध आयोग (सरकारिया कमीशन) ने सम्पूर्ण राष्ट्र में एकरूपता लाने के लिए पंचायती राज सम्बन्धी एक मॉडल विधेयक बनाने की अनुशंसा की। जी. बी. के. राव समिति ने भी ग्रामीण विकास व गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम की सफलता के लिए पंचायती राज संस्थाओं को प्रभावशाली बनाने की अनुशंसा की थी। थुंगन समिति ने संविधान में केन्द्र व राज्य सूची के अनुरूप पंचायती राज सूची बनाने, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं महिलाओं को यथोचित प्रतिनिधित्व देने की अनुशंसा की। इन समितियों की अनुशंसा का प्रभाव राजीव गाँधी पर पड़ा। उन्होंने मुख्यमंत्रियों, मुख्य सचिवों, सांसदों, जिला परिषदों के अध्यक्षों, पंचायत समिति के प्रमुखों एवं ग्राम पंचायत के प्रधानों का सम्मेलन किया और पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा देने की मंशा सुनिश्चित की।

राजस्थान में पंचायती राज एवं पंचायत कानून का विकास :-

राजस्थान में पंचायतों का अस्तित्व प्राचीनकाल से ही रहा है। सत्ता के विकेन्द्रीकरण की नीति एवंग्रामीण समुदाय की स्वशासन में भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से वर्तमान में पंचायती राज संस्थाओं की वैधानिक स्थिति के बावजूद भी आज हम अनेक जातियों और गाँवों की पंचायतों को सक्रिय पाते है। कहीं–कहीं पारस्परिक विवादों को आम सहमति से निपटाने तथा दोषी व्यक्ति पर नैतिक दबाव की सीमा का अतिक्रमण कर कानून को अपने हाथ में लेने, शारीरिक दंड व यातना देने की शिकायत पर ऐसी पंचायत में भाग लेने वाले व्यक्तियों के विरूद्ध आपराधिक कार्यवाही किये जाने सम्बन्धी उदाहरण भी देखने को मिलते है। ग्रामीण क्षेत्रों में अर्वाचीन पंचायती राज व्यवस्था प्राचीन ग्राम पंचायतों की अवधारणा, कार्यशैली एवं स्वरूप का ही औपचारिक व संशोधित रूप है, तथापि पंचायती राज संस्थाओं के गठन सम्बन्धी वैधानिक

एवं संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद स्थानीय स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों के निवासियों के पारस्परिक विवादों का निपटारा करने तथा सत्ता के विकेन्द्रीकरण एवं ग्रामीणों की सत्ता में भागीदारी की आकांक्षाओं को ये पंचायती राज संस्थायें पूरा करने में सफल नहीं रही है। राजस्थान में पंचायती राज संस्थाओं के गठन सम्बन्धी वैधानिक व्यवस्था की दिशा में बहुत पहले प्रयास प्रारम्भ किए गए थे। वर्ष 1935 में भारत सरकार के अधिनियम, 1935 लागू होने के पश्चात् राज्य की लगभग 12 रियासतों ने पंचायत अधिनियम लागू किया।

भारत में पंचायती राज का विकास :–

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् एवं देशी रियासतों के भारत संघ में विलय के बाद 1948 में पंचायती राज अध्यादेश लागू कर ग्राम पंचायतों के गठन की दिशा में प्रयास किए गए। 1953 में राजस्थान पंचायत अधिनियम ने उक्त अध्यादेश का स्थान लिया। 1959 में राजस्थान पंचायत समिति एवं जिला परिषद नियम पारित हुआ। इस प्रकार राजस्थान में त्रिस्तरीय संगठनात्मक संरचना का सूत्रपात हुआ।

सामुदायिक विकास योजना 1952 :–

2 अक्टूबर 1952 को सामुदायिक विकास योजना को सूत्रपात हुआ, जिसमें सम्पूर्ण देश शामिल कर लिया गया। इसका उद्देश्य ग्राम पंचायतों के माध्यम से ही जन–सहयोग प्राप्त करना था। इसी के द्वारा पंचवर्षीय योजना भी कार्यान्वित होने लगी, लेकिन सामुदायिक विकास कार्यक्रम का सरकारीकरण हो जाने के कारण जनता को विकास में सहयोगी बनने का सुअवसर ही नहीं दिया गया। परिणामतः सामुदायिक विकास योजना की प्रगति व्यय के अनुरूप नहीं हो सकी इस योजना में असफलता ही मिली।

बलवन्त राय मेहता अध्ययन दल 1957 :–

सामुदायिक विकास कार्यों में असफलता के कारणों का अध्ययन एवं मूल्यांकन करने के लिए 7 जनवरी 1957 को भारत सरकार ने बलवन्त राय मेहता की अध्यक्षता में इसका गठन किया, जिसमें विभिन्न अनुशंसाऐं की गयी थी। सत्ता का लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण सर्वोपरि अनुशंसा है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के 3 साधन होगें, ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, सामुदायिक विकास प्रखण्ड स्तर पर पंचायत समिति, जिला स्तर पर जिला परिषद।

स्व. नेहरू द्वारा पंचायती राज व्यवस्था का उद्घाटन :–

स्व. श्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा 2 अक्टूबर, 1959 को राजस्थान राज्य के नागौर जिले में दीप प्रज्जवलित कर देश में त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली का शुभारम्भ किया गया। इस प्रकार देश में पंचायती राज को विकस के पथ पर अग्रसर करने में राजस्थान राज्य ने सामाजिक मार्गदर्शन किया। 1960 में ग्राम पंचायतों का व्यापक रूप से पुनर्गठन किया गया तथा 2000 की जनसंख्या वाले ग्राम–समूह के लिए पंचायत के गठन की व्यवस्था की गई।

सादिक अली समिति 1962 :–

राजस्थान सरकार द्वारा श्री सादिक अली की अध्यक्षता में पंचायती राज अध्ययन दल का गठन नवम्बर, 1962 में किया गया। यह अध्ययन दल सादिक अली समिति के नाम से लोकप्रिय हैं। अध्ययन दल ने 1964 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें यह सुनिश्चित किया गया कि पंचायती राज संस्थाओं को मुख्य रूप से स्वायत्त शासन इकाई के रूप में मान्य किया जाना चाहिए।

पंचायती राज पर उच्चाधिकार प्राप्त समिति 1971 :–

नवम्बर, 1971 में श्री गिरधारीलाल व्यासकी अध्यक्षता में राजस्थान सरकार द्वारा एक उच्चाधिकार प्राप्त समिति का गठन किया गया, जिसने 22 जून, 1973 को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया।

पंचायती राज संस्था–समिति प्रतिवेदन 1977 :–

राष्ट्र–स्तर पर पंचायती राज के अध्ययन हेतु एवं मूल्यांकन के लिए बलवन्त राय मेहता अध्ययन दल के बाद अशोक मेहता की अध्यक्षता में पंचायती राज संस्था–समिति गठित की गई।

द्विस्तरीय पंचायती राज प्रणाली का कार्यान्वयन :–

पंचायती राज संस्था–समिति द्वारा अनुंशसित द्विस्तरीय ढ़ांचे का प्रयोग मात्र कर्नाटक एवं आन्ध्रप्रदेश में हुआ। अन्य राज्यों ने मण्डल पंचायत की अनुशंसा को नहीं माना।

जी. बी. के. राव समिति 1985 :–

1985 में जी. बी. के. राव की अध्यक्षता में ग्रामीण विकास एवं गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के लिए प्रशासनिक प्रबन्ध पर एक समिति बनाई गई, जिसने 40 अनुशंसाएं प्रस्तुत की। डॉ. सिंघवी समिति 1986 :– 26 अगस्त, 1986 को सिंघवी समिति का गठन किया गया, जिसकी प्रमुख अनुशंसाएँ निम्न है– पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा दिया जाए एवं पंचायती राज का नियमित निर्वाचन कराने पर जोर दिया।

थुंगन समिति 1989 :–

इस समिति की प्रमुख अनुशंसाएँ इस प्रकार है – पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा मिले, योजना एवं विकास का दायित्व जिला परिषद को दिया जाए एवं न्याय पंचायत गठित हो।

हरलाल सिंह खर्रा समिति 1990 :–

इस समिति ने ग्रामीण सुविधाओं से जो सभी प्रशासनिक मामलों में पंचायती राज संस्थाओं का नियंत्रण आवश्यक बताया एवं जिला परिषद व जिला ग्रामीण विकास अभिकरणों का विलय करने का प्रस्ताव दिया।

73वाँ संविधान संशोधन, 1992 :–

देश की पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा देने, पंचायती राज व्यवस्था को अधिक सुदृढ़ करने, देश के सभी राज्यों में पंचायती राज की अनिवार्यता एवं एकरूपता लाने के दृष्टिकोण से भारत सरकार द्वारा 24 अप्रेल, 1993 को तीन राज्यों (मिजोरम, मेघालय और नागालैण्ड) को छोड़कर सम्पूर्ण देश में संसद द्वारा 73वाँ संविधान संशोधन करने के साथ ही लागू किया गया।

नवीन प्रयास :–

इनके अतिरिक्त अनेकानेक समितियाँ बनी हैं, जिन्होंने पंचायती राज में संशोधन करने के लिए महत्वपूर्ण अनुशंसाएँ की हैं। इन सभी का प्रभाव पंचायती राज के संशोधन पर पड़ा है, इन सभी में बलवन्त राय मेहता अध्ययन दल द्वारा अनुशंसित त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली सम्पूर्ण देश में मान्यता प्राप्त कर सकी। 14वें वित्त आयोग के द्वारा 2015–2020 की अवधि के लिए गाँवों में भौतिक और सामाजिक बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं को शुरू करने के लिए 5 वर्षों के लिए 2 लाख करोड़ रुपये से अधिक ग्राम पंचायतों आवंटित किए जा चुकें है।

निष्कर्ष :–

साराशतः यह कहा जा सकता है कि देश में पंचायती राज व्यवस्था की शुरूआत से सत्ता का विकेन्द्रीकरण होगा जिससे देश में लोकतन्त्र की जड़े मजबूत होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. 'पंचायती राज प्रशासन', डॉ. पारूल शर्मा, रितु पब्लिकेशन्स जयपुर।
2. 'पंचायती राज एवं दलित नेतृत्व', डॉ. पूरणमल, आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर।
3. 'लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एवं जनजातीय नेतृत्व', आशीष भट्ट, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर एवं नई दिल्ली।
4. 'भारत में पंचायती राज' डॉ. के. के. शर्मा, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
5. 'भारत में पंचायती राज', प्रमोद कुमार, अग्रवाल ज्ञान गंगा दिल्ली।
6. 'पंचायती राज', एस.के.डे., अशिया पब्लिशिंग हाउस।
7. पंचायती राज', पाण्ड़े, जयपुर पब्लिशिंग हाऊस, जयपर।

पता न्यू गोविन्द नगर गली नं. 01 रामगंज अजमेर Email–poojaaj633@gmail.com मो. नं. 8619939816, 7297003993

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 28-30

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

वर्तमान लोकतन्त्र और उमाशंकर चौधरी की कविता
'इस विकसित दौर में' के विशेष संदर्भ में

–डॉ. अंसा ए
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, सरकारी ब्रेनन कॉलेज, तलशशेरी, कन्नूर, केरल– ६७०१०६

कविता का अपने परिवेश से गहरा रिश्ता होता है। कविता में राजनीति का आधार 'विचार और अनुभव' दोनों स्थितियाँ हैं। कवि पहले अपने विचार का समर्थन करता है और फिर उसके माध्यम से अनुभव को प्रकट करता है। कविता में सत्ता के पक्ष और विपक्ष में अपने अनुकूल एवं विरोधी तत्वों को खुलकर बताने की परंपरा गोस्वामी तुलसीदास से चलकर वर्तमान कवियों तक आ गई है। वर्तमान हिन्दी कविता और राजनीति परस्पर गहरा संबंध रखकर आगे बढ़ रही है। इसकी प्रमुख नारा है– व्यवस्था विरोध, विरोध का आधार राजनीति जरूर है।

कविता सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन के हर पहलू का स्पर्श करती है तथा व्यंग्य के प्रखर हथियार से जन मानस को सोच–विचार के लिए बाध्य करती है। वर्तमान हिन्दी कविता में व्यंग्य का प्रयोग असामाजिक तत्वों व व्यवस्थाजन्य विडंबनाओं पर प्रहार करने हेतु होता है। कवियों ने इस हथियार का सही ढंग से इस्तेमाल किया है। उमाशंकर चौधरी हिन्दी के युवा कवियों में नामी चेहरे हैं। आपने वर्तमान राजनीति, लोकतन्त्र और वैश्वीकृत भारत की विद्रूपताओं तथा विसंगतियों को अपनी कविता का केंद्र विषय बनाया है। उनके बहुचर्चित काव्य संकलन 'कहते हैं तब शहंशाह सो रहे थे' में कवि इसी सच्चाई से हमें वाकिफ कराते हैं। प्रस्तुत काव्य संग्रह की एक मशहूर कविता है 'इस विकसित दौर में'। इसमें कवि जनतंत्र देश की कुत्सित राजनीति, इसमें व्याप्त मूल्यहीनता व अधोगति, व्यवस्था में फैली भ्रष्टाचार, सांस्कृतिक परिवेश में प्रस्फुटित खोखलेपन और राजनेता पर करारा व्यंग्य करते हुए इस दौर में जीने वाले आम जनता की बदलती मानसिकता तथा उसके क्षरित मानवीय मूल्यों की ओर इशारा करते हैं। वरिष्ठ आलोचक नामवर सिंह के शब्दों में–"उमाशंकर चौधरी की कविताएँ अपने मूल स्वर में राजनीतिक हैं और इनके विषय–वस्तु का क्षेत्र व्यापक है। यथार्थवादी विचार व भाव की इन कविताओं में स्वाभाविक रूप से एक बेचैनी है।"[१]

आज जनतंत्र का मतलब हो गया है– चुनाव, वोट, सत्ता और शासन। इसमें जनता का दायित्व सिर्फ वोट देने तक सीमित है। सत्ता हासिल करने के बाद शासक वर्ग जनता से मुँह फेर लेते हैं। अपनी सत्ता और राजनीतिक दल को कायम रखने के लिए वे अलग–अलग मार्ग अपनाते हैं। अपनी कार्य पूर्ति के लिए वे खुद कत्ल जैसे निष्ठुर कृत्य करने के बावजूद अपने अनुगामियों को भी हत्यारे बना देते हैं। इन हत्यारों के जरिए नेता अपनी स्वार्थलब्दी हेतु समाज में भयावह माहौल जैसे कि– आतंक, आगजनी, हत्या, लूटपाट पैदा करते हैं। इस दौर से होकर गुजरते आम जनता का दैनंदिन जीवन, उनके सोच विचार भी बदल चुके हैं। लोग समाज में घटते एक हत्या भी एक आम घटना के रूप में देखते हैं, क्योंकि यह आज समाज में एक दिनचर्या सी हो चुकी है। वह समय बीत चुका है कि जब लोग 'हत्या' नाम सुनकर अपना दिल थाम लेते थे और हत्यारे का नाम सुनकर व उसके आगमन पर पूरी गली में एक सन्नाटा छा जाता था। इस तथ्य को उभारते हैं निम्नांकित कवितांश :–

"अब यह बात काफी पुरानी हो चुकी है कि

कभी हम हत्यारों से डरा करते थेद्य
बीत गया वह वक्त जब उसके प्रवेश पर
सभी अपने किवाड़–खिड़की भिड़ा लेते थे
और अपने बच्चों को अपने कलेजे से
बिल्कुल बंदरिया की तरह
चिपटा लेते थे
अब वह वक्त चल गया।"[२]

यहाँ कवि ने सत्ता–लोलुपता, तात्कालिक स्वार्थता, क्षेत्रीयता, भ्रष्टाचार, जातिवाद, पूंजीवाद, हिंसा आदि कुप्रवृत्तियों से घिरी हुई वर्तमान राजनीति व राजनेताओं का चित्रण करके ऐसे राजनेताओं द्वारा अनुशासित देश की जनता की परिवर्तित मानसिकता पर अपना विचार प्रकट किया है।

आज देश के नेता गण सांप्रदायिक ताकतों के हाथ बिक चुके हैं। फलतः वे उनके इशारे पर नाचने वाले रह गए हैंद्य नेता लोग इस हद तक आदर्श रहित व विवेकहीन हो चुके है कि वे उनके आदर्शों का पालन करने के लिए सदा तैय्यार बैठे हैं :–

"वे हत्या कर ही नहीं सकते।
वे अपने हथियार पर कसकर मुट्ठी भींच तो सकते हैं
परंतु उसे चला नहीं सकते।"[३]

ऐसे दुर्घट जमाने से होकर गुजरने वाले मानव की मानसिकता में भारी बदलाव दृष्टिगोचर होता है। वह 'हत्या' को हत्या कहने से ही घबराता है। वह हँसी को हँसी, मनुष्य को मनुष्य और हत्यारे को हत्यारे कहने में ही अपने आपको रोकता है क्योंकि इन सांप्रदायिक ताकतों के आगे वह विवश, लाचार एवं असमर्थ है–

"इस विकसित दौर में इतिहास हमें छूट देता है, कि
जिस तरह हम हत्या को हत्या कहे बगैर
और हँसी को हँसी कहे बगैर अपने आपको
मनुष्य कहला सकते हैं
उसी तर्ज पर अब हत्यारे को हत्यारा कहने से ही
हम अपने आपको रोक सकते हैं।"[४]

सांप्रदायिक ताकतों का असर भारत के समस्त क्षेत्र में इतना व्याप्त हो चुका है कि हत्या, हथियार एवं हत्यारा आज अंडरवर्ल्ड से ज्यादा बाजार के अभिन्न शब्द बन चुके हैं। इन ताकतों– बाजारू संस्कार, उपभोक्ता संस्कार, विज्ञापनबाजी संस्कृति, मीडिया की प्रभुता आदि ने हमें अपने कब्जे में कर दिया है। इनके समक्ष समूचा विश्व नत मस्तक हैं। कवितांश हैं :–

"हत्या, हथियार और हत्यारा अब अंडरवर्ल्ड से ज्यादा बाजार
के शब्द हैं।"[५]

आजकल के लोकतन्त्र पर व्यंग्य करते हुए कवि यह साफ व्यक्त करते हैं कि राजनेताओं का चुनाव करके हम अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार रहे हैं। अर्थात इन्हें चुनकर हम खुद अपने जान को खतरे में डाल रहे हैं। जैसे कि हत्यारे के हाथ में हथियार सौंपकर हम निश्चिंत बैठे हैं, यह आज के लोकतन्त्र की विडंबना हैद्य इसे कवियों प्रकट करते हैं–

"लेकिन लोकतन्त्र की यह अपने–आप में
कितनी बड़ी उपलब्धि है कि
हत्या के निशाने पर कौन है, हमारे पास अब

उसे ध्यान में रखकर
हत्यारा और हथियार का चुनाव करने कि रियायत है।"[६]

लोकतन्त्र की विसंगतियों को दर्शाने के लिए कवि उमाशंकर चौधरी रघुवीर सहाय की 'रामदास' कविता का नमूना पेश करते हैं। इसमें रामदास जैसे तटस्थ, निरपेक्ष व्यक्तित्व की हत्या सारे आम खुली सडक पर हत्यारों द्वारा बड़ी निर्ममता से कर दी गई है। कवि 'रामदास' के जरिए हमें यह याद दिलाना चाहते हैं कि हमारे समाज में ऐसे कई रामदास हैं, जो सत्ता व शासक वर्ग के शोषण के खिलाफ आवाज उठाने के कारण उनकी क्रूरता व बर्बरता का शिकार होते जा रहे हैं। स्पष्ट है कि सत्ता के विरुद्ध टिकने वालों का अंजाम लोकतन्त्र में यही हैं :–

"सच! लोकतन्त्र में यह, आपको कहाँ जाना है,
उस अनुरूप बस पकड़ने जैसा है।"[७]

आखिर कवि कहते हैं कि ऐसे हत्यारे अगर यह फैसला ले लें कि वे अब सत्ताधारियों के इशारे पर नहीं नाचेंगे तो हमारी देश की राजनीति का क्या हाल होगी? कवि कि वाणी में–

"परंतु सोचने को यह सोचा जा सकता है कि
अगर एक दिन देश के सारे हत्यारे मिलकर
यह निर्णय ले लें कि अब वे
इशारे पर हत्या नहीं करेंगे
तब इस देश की राजनीति का क्या होगा?"[८]

जाहिर है कि हमारे लोकतान्त्रिक व्यवस्था को तहस–नहस करने वाले तथा राजनीति को भ्रष्ट से बदतर भ्रष्ट बनाने के उत्तरदायी देश की समूची व्यवस्था की बागडोर संभालने वाले सत्ताधारी वर्ग ही है।

विवेच्य कविता 'इस विकसित दौर में' में कवि उमाशंकर चौधरी ने 'हत्यारे' शब्द को विभिन्न अर्थ संदर्भ में प्रयुक्त किए हैं। यह शब्द दर असल लोकतन्त्र की हत्या के लिए जिम्मेदार शासक वर्ग और उनके इशारे पर नाचने वाले अनुयायी गण, सत्ता की बागडोर संभालने वाले अन्य अधिकारी वर्ग तथा इन सब के ऊपर अपना शिकंजा कसने वाली सांप्रदायिकताकतों के लिए प्रयुक्त है। कवि ने यहाँ वर्तमान राजनीतिक परिवेश की सत्ता–लोलुपता, स्वार्थता, खोखलेपन, सामंतवाद, पूँजीवाद, रुझान, विसंगतियों एवं विद्रूपताओं को आक्रोश के साथ–साथ व्यंग्यात्मक रूप में काव्याभिव्यक्ति दी है। आज के सत्ताधारी वर्ग अपना स्वार्थ सिद्धि हेतु जनता को क्षेत्र वाद, जाति वाद, धर्म वाद आदि में फंसाकर खुद की कुर्सी को सुदृढ़ रखने के लिए प्रयास रत हैं। प्रजा का कल्याण जो उनका मूल मंत्र होना चाहिए था वे उसे भुला बैठते हैं। जनता के हितैषी के बजाय वे उनका घातक बनकर राज करते हैं।

संदर्भ :–

१. उमाशंकर चौधरी– कहते हैं तब शहंशाह सो रहे थे, नामवर सिंह, आवरण पृष्ट से उद्धृत
२. उमाशंकर चौधरी– कहते हैं तब शहंशाह सो रहे थे, इस विकसित दौर में, पृ. सं. २४
३. वही, पृ. सं. २५
४. वही, पृ, सं. २५
५. वही, पृ, सं. २५
६. वही, पृ. सं. २५
७. वही, पृ. सं. २६
८. वही, पृ. सं. २६

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उमाशंकर चौधरी – कहते हैं तब शहंशाह सो रहे थे, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १८, इंस्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड, नई दिल्ली– ११०००३, दूसरा संस्करण २०११

मोबः 9995083552 ईमेल : anzaali2012@gmail.com

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 31-32

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

समाज और समरसता

–षीना.पी.एम, शोधार्थी
–डॉ. संजय. एल. मादार, शोध निर्देशक
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, धारवाड़, कर्नाटक।

आज के समाज में 'समरसता' का क्या मूल्य है यह सोचने की बात है। सामाजिक समरसता क्या है? इसकी चर्चा करना एवं से ठीक तरीके से समझना समाज एवं राष्ट्र की मूलभूत आवश्यकता है। पहले यह जानना जरूरी है कि सामाजिक समरसता का अर्थ क्या है। समरसता को हम संक्षेप में समानता कह सकते है। व्यापक रूप में कहूँ तो लोगों के बीच होनेवाले जो असमानताएँ, जैसे जाति, धर्म, वर्ण भाषा सभी को जड़मूल से उन्मूलन कर लोगों में परस्पर प्रेम और सौहार्द बढ़ाना ही समरसता है। पहले हमारे मन में ही यह भाव को जगाना है। समरसता भाव में, हमें सभी को अपने समान समझना है। सभी जीव ईश्वर सृष्टि है, तो इसका अर्थ है कि हम सब एक ही पिता के संतान है। जाति, धर्म सभी को अलग रूप में देखकर हमें मनुष्यमात्र बंधु है इसी के साथ आगे बढ़ना है।

पुरातन भारतीय संस्कृति को देखले तो उस में किसी के साथ कोई भेदभाव नहीं देख सकते। हमारे वेदों में भी कोई ऊँच–नीच का उल्लेख नहीं है। फिर भी समाज बढते जाने से जाति, धर्म भेद–भाव ऊँच–नीच सभी धीरे–धीरे होने लगा। ऐसे में हम कह सकते हैं कि इसी असमानता हम मानव की ही देन है। यहाँ समानता लाना भी हम ही है। हम ने देखा कि, यह जाति–भेद का दोष ही है जो समरसता का अभाव इधर लाया। एक समरसता में रहनेवाले लोगों का पारस्परिक जुडाव ही समरसता को प्रबल बना सकते है। प्राचीन काल से लेकर आजतक के सभी लेखों में कही न कही समरसता को पर्याप्त स्थान मिला है। समाज शब्द को सार्थक बनाने के लिए समरसता अतिआवश्यक है। समाज की व्याप्ति होते रहने के साथ साथ समरसता कम होने लगे। पहले मानव प्रकृति के साथ प्रकृति में ही रहे थे अब क्या हो रहा है। मानव अपने ही कर्मों केलिए या अपने ही आवश्यकता के लिए प्रकृति को भी अलग रखा है। जो मित्रता भाव प्रकृति से थे वह अब नहीं रहा है। मानव को यहाँ रहने के लिए पहले उसे प्रकृति के साथ समरसता लगाना चाहिए। यहाँ से समाज का उत्भव होता है। हमें समझना चाहिए कि हम प्रकृति की गोद में जनमे हैं। हमारे पूर्वज जो है यहाँ ही रहे थे। इसलिए प्रकृति के साथ समरसता का भाव होना आवश्यक है। जीवन में मानवीय मूल्यों को अधिक मात्रा में प्रधानता देना चाहिए।

समाज में रहना मानव की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। बहुत सारे व्यक्तियाँ मिलकर एक समाज का निर्माण हुआ है। गाँधीजी ने कहा था कि भारत का सुधार गाँव से होनी है क्यों कि यही गाँव ही भारत की आत्मा है। उसी तरह हमें भी समरसता का भाव अपने ही मन से करना चाहिए। मनुष्य को प्रकृति में रहकर वहाँ के हर जीवों के साथ समरसता रखनी चाहिए अर्थात्मनुष्य सभी जीवों को अपने जैसा मानकर व्यवहार करना चाहिए। प्रसिद्ध लेखिका महादेवी वर्मा जी जो है, उनकी हर एक कहानी में समरसता की भाव हम देख सकते हैं, जो जीवों और जीवों के बीच समरसता लानेवाली शांती और खुशी जो है वही होगा मानव का जीवन पूँजी। समरसता का अर्थ ही समाज को एकजुट करना है। सभी जीव और प्रकृति के साथ हमें समरसता का भाव होना अत्यावश्यक है। यह एक सामाजिक जरूरत है।

सामाजिक समरसता एक तरफ से एकता का चिंतन है। आत्मीयता का भाव है सामाजिक समरसता अद्वैत के सिद्धांत पर आधारित भारतीय संस्कृति की विशेषता है। समरसता–समता मूलक, बंधुत्व पर आश्रित समाज का विचार है, समरसता में संघर्ष, भेदभाव, प्रतिरोधात्मक आन्दोलन और प्रतिकार भाव नहीं है बल्कि इस में शांती, संस्कार एकता एवं प्रेम का भाव ही सम्मिलित है। समरसता से समाज में व्याप्त रूढियाँ और भेदभाव को मिटा सकते है। समरसता का परिणाम सुखद ही रहेगा क्योंकि इससे हमारा विचार एक हो जाएँगें। एक परिवार से लेकर गाँव, गाँव से लेकर शहर और यहाँ से एक राष्ट्र तक एकता का भाव बढ़ाना चाहिए यही सकारात्मक समरसता है। जब देश के लोग एक होंगे तब देश में एकता होगी और अगर देश में कोई समस्या होगी तो उसे दूर करने के लिए सभी लोग एक साथ मिलकर काम करेंगे यही समरसता को देश में लाना है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह हमेशा समाज के साथ रहकर अपने जीवन यापन करते हैं। हमारे यहाँ व्यक्ति और समाजके स्वार्थ भिन्न–भिन्न होने की बात को नहीं स्वीकारा गया। व्यक्ति और समाज का हित कभी अलग नहीं हो सकता है। हमारी संस्कृति ने अनेक चढ़ाव उतार देखे हैं और आगे चलकर भी ऐसे अनुभवों के लिए सहज समर्थ है। हमारे व्यावहारिक जीवन में अनेक दोष पैदा हो जाते है। ऐसी दोषों से बाहर निकलने के लिए समरसता आवश्यक है। मानव, समाज का अभिन्न अंग है और साहित्य समाज का दर्पण होते हैं। जैसा समाज वैसा साहित्य यही कारण होगा कि समरसता को लाने के लिए कई लेखकों ने अपनी रचनावों द्वारा कोशिश किया है। सिर्फ जात–पाँत को और छुआ–छूत को मिटाने के लिए ही नहीं बल्कि कुछ लेखक ऐसे थे। कि जो अपने लेखनों द्वारा समाज के अनेक असमानताओं को मिटाने की कोशिश किया है। गद्य के क्षेत्र में कहानी को मानवीय सभ्यता का आद्य अभिव्यक्ति माध्यम कहा जा सकता है। ये भाषा के आरंभिक आविष्कार है। इन कहानियों द्वारा समरसता की कोशिश हर समय हुआ है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक की साहित्य में समरसता की झलक देखने को मिलते हैं। समरसता जीवन की अभिन्न अंग है, जहाँ सानता है वहाँ सुख और शान्ति है। यह भी हम जान चुके हैकि समानता का भाव या समरसता केवल मानव के बीच में ही नहीं बल्की, प्रकृति, जीवजन्तु और पशु पक्षी सभी से होना अनिवार्य है। इस भाव को हमारे समाज में लाने के लिए हमारे साहित्यकारों ने बहुत कोशिश की है। लेकिन इसमें जो विरोधाभास हम देखते है कि, जो भी कहानी यो लेख हो उसमें असमानता की या भादभाव का ही वर्णन है अर्थात् मनुष्य के बीच में जो विषमता हो वही दर्शाया गया है।

यहाँ बहुत अधिक कहानियाँ है जिस में पारिवारिक विषमताएँ, सामाजिक विषमताएँ जैसे परिस्थितियाँ हो लेकिन समरसता की कहानियों बिरले ही मिले। तब भी हम यह जानते है कि जहाँ असमानता हो वही समानता का भाव जन्म लेते है। इसलिए यह कहना उचित है कि समाज में समरसता लाने के लिए हमें ही कोशिश करना होगा। स्वस्थ समाज व सफल राष्ट्र के लिए सामाजिक समरसता पहली जरूरत है। हम सबको समाज में रहकर निर्लिप्त भाव से देश और समाज के हित के लिए कार्य करना होता है। इसके लिए समाज को अपना परिवार समझना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यता का सटीक आकलन करके तदनुरूप ही कार्यों में प्रवृत्त होना चाहिए। जो मनुष्य सभी जीवों को अपने जैसा मानकर व्यवहार करता है उसको किसी प्रकार का दुख नहीं होता सच्चे अर्थों में यही समरसता है। वैचारिक दृष्टि से सभी मनुष्यों में समानता होनी चाहिए अर्थात् पारस्परिक के जितने भी कारण हो उनको तोड़कर सभी के साथ सौहार्द्रतापूर्वक व्यवहार में रहना चाहिए। समाज में सभी लोग एक है। सब को बराबर अधिकार है। मानव के बीच जो रिश्ता है जो संबंध है उस में परस्पर प्रेम और सहयोग की भावना का विकास होना है। जैसे बडों का आदर करना, पति पत्नी को पस में प्रेम पूर्ण और शान्तिप्रद व्यवहार करना भाई, बहन, माता और पिता सब परिवार में शान्तिप्रद तथा कल्याणकारी भाव से रहना चाहिए। सभी मिलकर प्रीतिपूर्वक समाज में रहने से और ऊँच नीच भाव न होकर एक साथ समाज की उनती के लिए काम करने से सामाजिक समरसता संपन्न होगा।

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 33-37
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

न्यायदर्शन स्थसन्निकर्षाधारेण अधिगमकौशल निरूपणम्

-NANDADULAL MANDAL, Assistant Professor
Dept. of Education, Central Sanskrit University, Ekalavya campus
-PALASH DAS, Research Scholar
Sankhya Yoga, LBS National Sanskrit University
-LABANI BAIRAGYA, B.Ed Student
Central Sanskrit University, Ekalavya campus

भूमिका :–

प्रत्येकाध्यापकः प्रभावात्मकम् अध्यापयितुम् इच्छति। तत्र केवलं छात्राणामाग्रहः मानसिकरुचिः इत्यादीनामुपरि निर्भरं न कृत्वा येन उपकरणसाहाय्येन कक्ष्यायां संयोगं स्थापयति तथा शिक्षार्थिना सह सार्थकरुपेण क्रियाप्रतिक्रिया कर्तुं साहाय्यतां प्रददाति तदेव शिक्षणाधिगमसामग्री। एतेषां संयोगः संगणकीय Input devices सदृशः अस्माकं चक्षु–कर्ण–नासिका–ज्विहा–त्वक् इत्यादि द्वारा अस्माभिः अधिगमं करोति। अधिगमक्षेत्रे सामग्रीणां साहाय्यं कथं भवतीति विषये एडगा`डेल् महोदयेन एका सारणी प्रदत्ता वर्तते।

१. अध्ययनेन १० प्रतिशतं ज्ञानं भवति।
२. श्रवणेन २० प्रतिशतं ज्ञानं भवति।
३. दर्शनेन ३० प्रतिशतं ज्ञानं भवति।
४. दर्शनश्रबणाभ्याम् ५० प्रतिशतं ज्ञानं भवति।
५. आलोचनामाध्यमेन ७० प्रतिशतं ज्ञानं भवति।
६. कृत्वा ८० प्रतिशतं ज्ञानं भवति।

चीनदेशियदार्शनिकः कन्फुसियासमहोदयः कथयति –

I hear and I forget. I see and
I remember. I do and I understand.

अधुना पश्यामः यत् अधिगमाय एतेषां प्रत्यक्षं कथं भवति। अतः प्रत्यक्षकरणाय केचन क्रमाः परिलक्ष्यन्ते। तत् न्यायदर्शनदृष्ट्वा अवलोकयामः।

न्यायमते इन्द्रियार्थसन्निकर्षात् उत्पन्नज्ञानं प्रत्यक्षज्ञानम्। "इन्द्रियः" इति शब्देन चक्षु–कर्ण–नासिका–ज्विहा–त्वक्–मनश्च एते षड् इन्द्रियं वोधयति। "अर्थः" इति शब्दः सत् वा वास्तविकपदार्थं वोधयति। सन्निकर्षः इति शब्दः इन्द्रियार्थस्य च एकप्रकारं विशेषसम्बन्धं वोधयति। तस्मात् अन्नंभट्टः "तर्कसंग्रहे" इन्द्रियार्थसन्निकर्षं प्रत्यक्षज्ञानस्य हेतु उच्यते। तस्य मतेन इन्द्रियार्थसन्निकर्षः षड्विधः। अन्नंभट्टः सन्निकर्षः इति शब्देन लोकिकसन्निकर्षमेव वोधयति। इन्द्रियस्य सम्मुखे उपस्थितमर्थेन वा विषयेन सह इन्द्रियस्य यः सन्निकर्षः भवति सः लौकिकसन्नकर्षः। न्यायमतानुसारेण चक्षुरादि इन्द्रियाणि षडप्रकाराणि परन्तु तदनुसारेण एव लोकिकसन्नकर्षः षडप्रकारकः इति न उच्यते। लौकिकप्रत्यक्षस्य विषयः षड्प्रकारत्वात् लौकिकसन्निकर्षं षड्प्रकारमिति उच्यते। षड्विधलौकिकसन्निकर्षवादः प्राचीनन्यायसम्प्रदायस्य प्रसिद्धमतम्।

प्राचीननैयायिकः उद्योतकरः अस्मिन् विषये सहमतं पोषयति। न्यायमतानुसारेण भावपदार्थस्य अभावपदार्थस्य च लौकिकप्रत्यक्षं भवितुं शक्यते। अस्य लौकिकप्रत्यक्षः सम्भवति लौकिकसन्निकर्षेण। अन्नंभट्टः तर्कसंग्रहे षड्विधलौकिकसन्निकर्षः इति स्वीकरोति– 1. संयोगः, 2. संयुक्तसमवायः, 3. संयुक्तसमवेतसमवायः, 4. समवायः, 5. समवेतसमवायः, 6. विशेषणविशेष्यभावः। नैयायिकाः लौकिकसन्निकर्षं विहाय सामान्यलक्षणं ज्ञानलक्षणं योगजलक्षणम् इति त्रिविधलौकिकसन्निकर्षः स्वीकरोति।

1. संयोगसन्निकर्ष :–

द्रव्यस्य प्रत्यक्षभवति संयोगसन्नकर्षेण। चक्षुरिन्द्रियेण अथवा त्वगिन्द्रियेण बाह्यद्रव्यस्य प्रत्यक्षं भवति। यदा घटस्य चाक्षुषप्रत्यक्षं भवति अथवा त्वाच् प्रत्यक्षं भवति तदा चक्षुरिन्द्रियेण वा त्वगिन्द्रियेन सह तस्य घटद्रव्यस्य संयोगं भवति। चक्षुरिन्द्रियः त्वगिन्द्रियश्च द्रव्यम् अपि च घटः एकं द्रव्यम्। अवयव– अवयवी भिन्नस्य द्रव्यद्वयस्य सम्बन्धः संयोगः एव भवति। अन्तरिन्द्रियमनसा आन्तरद्रव्यम् आत्मनः प्रत्यक्षे संयोगसन्निकर्षः भवति। मनः द्रव्यम्, आत्मा अपि द्रव्यम्। तस्मात् तेषां सम्बन्धः संयोगमेव भवति। अनेन प्रकारेण द्रव्यस्य प्रत्यक्षे सर्वत्र संयोगसन्निकर्षः भवति। अन्नंभट्टः तर्कसंग्रहदीपिकायामुच्यते– "आत्मा मनसा संयुज्यते, मनः इन्द्रियेन, इन्द्रियम् अर्थेन तत्र प्रत्यक्षज्ञानमुत्पद्यते।"

2. संयुक्तसमवाय :–

न्यायमतानुसारेण कस्यापि इन्द्रियग्राह्यद्रव्यस्य गुण– कर्म–सामान्यः वा जाति इत्यादीनां प्रत्यक्षं भवति संयुक्तसमवायसन्निकर्षेण। द्रव्यस्य प्रत्यक्षं संयोगसन्निकर्षेण कृते सति द्रव्यस्थितगुणस्य क्रियायाः जातेः वा प्रत्यक्षं संयोगसन्निकर्षेण न भवति। चक्षुरिन्द्रियेण घटरुपस्य प्रत्यक्षः संयोगसन्निकर्षेण भवितुं न शक्यते। चक्षुरिन्द्रियं द्रव्यम्, घटस्य रुपमपि एकं द्रव्यम्। द्वयोः मध्ये संयोगसन्निकर्षः भवितुं न शक्यते। न्यायमतानुसारेण चक्षुरिन्द्रियेन घटरुपस्यप्रत्यक्षे संयुक्तसमवायसन्निकर्षः भवति। अत्र चक्षुषा संयुक्तघटे रुपम् समवेतं भवति। अयम् परम्परासम्बन्धः। चक्षुरिन्द्रियेण गतिशीलबलस्य प्रत्यक्षे संयुक्तसमवायसन्निकर्षः भवति। अत्र चक्षुसंयुक्तवले तु गतिसमवेतं भवति। न्यायमतानुसारेण सामान्यः जातिः वा इन्द्रियग्राह्यः अपि भवितुं शक्यते। घटत्वः गोत्वः इत्यादिः जातिः इन्द्रियग्राह्यः। चक्षुरिन्द्रियेन गोत्वजातेः प्रत्यक्षे संयुक्तसमवायसन्निकर्षः भवति। अत्र चक्षुसंयुक्तं गोव्याक्तेः गोत्वजातिः समवेतं भवति। अनेन प्रकारेण घ्राणेन गन्धस्य रसनया रसस्य प्रत्यक्षे रसस्य प्रत्यक्षे संयुक्तसमवायसन्निकर्षं भवति।

3. संयुक्तसमवेतसमवाय :–

इन्द्रियग्राह्यगुणे कर्मणि वा अवस्थितस्य सामान्यस्य जातेः वा प्रत्यक्षे संयुक्तसमवेतसमवायसन्निकर्षं भवति। यदा चक्षुषा घटप्रत्यक्षं भवति तदा घटरुपमपि प्रत्यक्षं भवति। अपि च घटरुपे यः घटत्वजातिः अस्ति तदपि प्रत्यक्षं भवति। किन्तु घटस्य प्रत्यक्षं घटरुपस्य च प्रत्यक्षं येन सन्निकर्षेण भवति तेन सन्निकर्षेण रुपत्वजातेः प्रत्यक्षं भवितुं नार्हति। रुपे अवस्थितस्य रुपत्वजातेः प्रत्यक्षे संयुक्तसमवेतसमवायसन्निकर्षः भवति। अत्र चक्षुसंयुक्ते घटे घटरुपं समवेतं भवति वा समवायसम्बन्धे अस्ति। अपि च तस्मिन् घटरुपे रुपत्वजातिः समवेतं भवति। अनेन प्रकारेण चक्षुरिन्द्रियेण घटरुपे वर्तमानरुपत्वजातेः प्रत्यक्षं संयुक्तसमवायसमवेतसन्निकर्षेण जायते।

4. समवाय :–

न्यायमतानुसारेण आकाशनामकः अतिन्द्रियद्रव्यस्य शब्दनामकगुणस्य प्रत्यक्षं भवति श्रवनेन्द्रियेण। शब्दस्य प्रत्यक्षे समवायसन्निकर्षः भवति। न्यायमते श्रवणेन्द्रियस्यार्थम् आकाशम्। कर्णविवरवत्याकाशः एव श्रवणेन्द्रियः। आकाशः द्रव्यः, शब्दः आकाशस्य गुणः। द्रव्यस्य गुणस्य च सम्बन्धः समवायः भवति। सुतरां कर्णविवरवत्याकाशस्वरुपश्रवणेन्द्रियेण शब्दस्य प्रत्यक्षे समवायसन्निकर्षः भवति।

5. समवेतसमवाय :–

वयं श्रवणेन्द्रियेण केवलं शब्दप्रत्यक्षं न कुर्मः, भिन्नविशेषविशेषः शब्दस्य अनुगतधर्मः शब्दत्वजातेः अपि प्रत्यक्षं कुर्मः। कर्णः इन्द्रियेण शब्दत्वजातेः प्रत्यक्षे समवेतसमवायसन्निकर्षः भवति। अत्र शब्दत्वजातिः शब्दे समवेतं भवति। अपि च यः शब्दः यः शब्दः कर्णविवरवत्वाकाशे समवेतं भवति।

6. **विशेषणविशेष्यभावम् :–**

न्यायमतानुसारेण भावपदार्थवत् अभावस्यापि प्रत्यक्षं भवति। न्यायमते अभावः स्वतन्त्रपदार्थः, अभावस्य ज्ञानम् इन्द्रियेण भवति। अभावस्य ग्राहकः इन्द्रियः। अभावप्रत्यक्षे विशेषणविशेष्यभावसन्निकर्षं भवति। न्यायमते सामान्यतः अभावः यस्मिन् अधिकरणे भवति तस्य विशेषणं भवति। "घटाभाववत् भूतलम्" – अनेन प्रकारेण यदा भूतले घटाभावस्य चाक्षुषप्रत्यक्षं भवति तदा विशेषणविशेष्यभावसन्निकर्षं भवति। उक्तज्ञाने भूतलः विशेष्यः घटाभावः भूतलस्य विशेषणम्। अत्र चक्षुरिन्द्रियसंयुक्तभूतले घटाभावविशेषणः। अनेन प्रकारेण विशेषणविशेष्यभावसन्निकर्षेण भूतले घटाभावस्य चाक्षुप्रत्यक्षं भवति। विशेषणविशेष्यभावसन्निकर्षः समासेन विशेषणता सन्निकर्षोऽपि वक्तुं शक्यते। "घटाभाववत् भूतलम्" – अनेन प्रकारेण अभावस्य ज्ञाने सति विशेषणतासन्निकर्षः भवति। "भूतले घटो नास्ति।" – अनेन प्रकारेण अभावस्य प्रत्यक्षे सति घटाभावः विशेष्यः भूतलश्च विशेषणं भवति। तस्मात् भूतले घटाभावः– अनेन प्रकारेण अभावस्य प्रत्यक्षस्थले विशेष्यतासन्निकर्षः भवति, यतोहि तस्मिन् ज्ञाने घटाभावः विशेष्यः भवति। अन्नंभट्टः दीपिकायाम् उच्यते– विशेषणता विशेष्यता च अतिरिक्तः सम्बन्धः नास्ति। विशेषणता विशेषणस्वरुपः। विशेष्यता विशेष्यस्वरुपः। विशेष्यता विशेषणता च स्वरुपसम्बन्धः। स्वरुपसम्वन्धः सम्वन्धतीतः भिन्नं न भवति। भूतलः घटाभावस्य च सम्वन्धे भूतलः घटाभावात् भिन्नं न भवति, सः भूतलः घटाभावस्वरुपः। एषः स्वरुपसम्वन्धः। सः स्वरुपसम्वन्ध एव विशेषणता विशेष्यता च। विश्वनाथः सिद्धान्तमुक्तावल्यामुच्यते– अभावस्य प्रत्यक्षे विशेषणता कारणम्। भूतले घटाभावस्य प्रत्यक्षे इन्दियसंयुक्तविशेषणता, संख्यादिरुपाभावस्य प्रत्यक्षे इन्दियसंयुक्तसमवेतविशेषणता, शब्दाभावस्य प्रत्यक्षेश श्रोत्रावच्छिन्नविशेषणता, क आदौ खव्तस्य अभावस्य प्रत्यक्षे श्रोत्रावच्छिन्नसमवेतविशेषणता, कत्वाभावे गत्वाभावस्य प्रत्यक्षे श्रोतावच्छिन्नविशेषणविशेष्यता कारणः भवति। तथापि विशेषणता भिन्नं न भवतियविशेषणतात्वरुपे तं विशेषणतां एकैव वक्तुं शक्यते। अथवा प्राचीननैयायिकसम्मतः षड्विधः सन्निकर्षवादः व्याहतः भवति।

अलौकिकसन्निकर्षम् :–

नैयायिकाः लौकिकसन्निकर्षं विहाय त्रिविधम् अलौकिकसन्निकर्षमपि स्वीकुर्वन्ति। ते अलौकिकसन्निकर्षाः यथा– 1. सामान्यलक्षणम् 2. ज्ञानलक्षणम् 3.योगजलक्षणम् । यदा कोऽपि विषयः इन्दियस्य निकटवर्ती न भवति अपि च इन्दियस्य सम्मुखे उपस्थितं न भवति, यदा कोऽपि विषयः इन्दियेन सन्निकर्षसमये उत्तपन्नं न भवति अथवा सः विषयः इन्दियस्य ग्रहनयोग्यं न भवति, तदा तस्य विषयसमूहस्य प्रत्यक्षं येन सन्निकर्षेण भवति सः अलौकिकसन्निकर्षः। एतत् सर्वं सन्निकर्षम् अलौकिकसन्निकर्षमुच्यतृ, यतः षड्प्रकारकस्य लोकिकसन्निकर्षस्य अत्र कार्यं न भवति। अलौकिकसन्निकर्षजन्यं प्रत्यक्षम् अलौकिकप्रत्यक्षमुच्यते। अतः न्यायमतेन अलौकिप्रत्यक्षं त्रिविधं यतोहि अलौकिकसन्निकर्षः त्रिविधः।

सामान्य लक्षण सन्निकर्ष :–

न्यायमतानुसारेण कस्यापि एकस्य धूमेन सहितं चक्षुसंयोगे सति तस्य धुमस्य यथा चाक्षुषप्रत्यक्षं भवति तथा अन्यदेशे अन्यकाले च स्थितसर्वधूमस्यापि चाक्षुषप्रत्यक्षं भवति। किन्तु देशान्तरीयकालान्तरीयधूमसमुहः एकस्मिन् स्थले अनुपस्थितत्वात् तैः सह चाक्षुषः लौकिकसन्निकर्षः न भवति। तथापि चक्षुसंयुक्तधूमवत् अनुपस्थितस्य धूमादेः अपि प्रत्यक्षं भवति। चक्षुसंयुक्तरुपं लौकिकसन्निकर्षेण चक्षुषः निकटस्थधूमस्य प्रत्यक्षसमये अनुपस्थितस्य अपरधूमस्यापि यत् प्रत्यक्षं भवति, तत् अलौकिकसन्निकर्षेण जायते। नव्यन्यायमतानुसारेण एकस्य धूमस्य प्रत्यक्षकाले सर्वधूमस्य प्रत्यक्षे धूमत्वविषयकसामान्यस्य ज्ञानमेव सामान्यलक्षणालौकिकसन्निकर्षम्। प्राचीनन्यायमतेन सामान्यलक्षणशब्दस्य अन्तर्गतः लक्षणमिति शब्दस्यार्थः स्वरुपः। अतएव तेषां मतानुसारेण सामान्यस्वरुपः सामान्यमात्रं वा भवति सामान्यलक्षणसन्निकर्षम्। किन्तु एतत् वक्तुं न शक्यते यतोहि सामान्यमात्रसन्निकर्षे सति धूमत्वसामान्यनित्यता सर्वदा सकलधूमे अवस्थित्वात् सर्वस्य सर्वथा सकलधूमस्य प्रत्यक्षं भवेत्। किन्तु तत् न परिलक्षते। अपि च सामान्यमात्रसामान्यलक्षणसन्निकर्षे सति धूलिसमुहे धूमस्य अनन्तरं सर्वधूमविषयकं यत् ज्ञानं तस्यापि उपपत्तिः न जायते। यतः तत्र धूमत्वेन सह इन्द्रियस्य सम्बन्धं नास्ति। तस्मात् सामान्यमात्रसन्निकर्षं न उक्त्वा इन्द्रियस्बन्धः विशेष्यकज्ञानप्रकारभूतं सामान्यं सामान्यलक्षणसन्निकर्षं वक्तव्यम्। रेनु समहे धूमस्य धूमज्ञानस्थले इन्द्रियेण सह धूमस्य लौकिकं सम्बन्धं न भवति। किन्तु इन्द्रियसम्बन्धधूलिसमुहे धूमत्वप्रकारकं भवति। तत् धूमत्वमेव इन्द्रिय

सम्बन्ध विशेष्यक ज्ञानप्रकारीभूत सामान्यम्। सः धूमत्वसामान्यः सर्वधूमे अवस्थितत्वात् धूलिसमुहे धूमभ्रमकाले सर्वधूमस्य अलौकिकं प्रत्यक्षं भवति। तस्मात् कारणात् सामान्यमात्रं सन्निकर्षं नोक्त्वा इन्दियसम्बन्ध विशेष्यकज्ञाने प्रकारीभूतं सामान्यमेव सामान्य लक्षण सन्निकर्षं वक्तव्यम्। सामान्य लक्षण सन्निकर्षेण सामान्यधर्मस्याश्रयस्य सर्वपदार्थस्य प्रत्यक्षं भवति। किन्तु न्यायमतानुसारेण सामान्य लक्षणाजन्यं सामान्याश्रयस्य ज्ञानार्थं सामान्यस्य किमपि एकमाश्रयम् इन्द्रियेण सम्बन्धः भवितुं शक्यते। यदि तद् भवति तर्हि धूमेण सह चक्षुषः संयोगस्य फलतः धूमः एवं रुपं ज्ञानमुत्पन्नानन्तरं धूमेण सह चक्षषः संयोगस्याभावात् अपि सामान्य लक्षण सन्निकर्षेण अनुपस्थितः सर्वधूमस्य अलौकिक प्रत्यक्षमुत्पन्नं भवति। किन्तु तत् न भवति तस्मात् उच्यते यत् सामान्य लक्षण सन्निकर्षेण सर्वधूमस्य अलौकिक प्रत्यक्षस्थले धूमत्वसामान्यस्य आश्रयः कोऽपि एकः धूमः इन्द्रियेण सहितं लौकिकसम्बन्धे सम्बन्धं भवितुं शक्यते। नव्यन्यायमते तु ज्ञायमानं सामान्यं न, सामान्य विषय ज्ञानैव सामान्य लक्षण सन्निकर्षः।

ज्ञान लक्षण सन्निकर्षः :–

ज्ञानलक्षण प्रत्यक्षे ज्ञानमेव प्रत्यक्षजनकं भवति। ज्ञानस्वरुपः सन्निकर्षः ज्ञान लक्षण सन्निकर्षः। अत्र प्रश्नः जायते यत् सामान्य लक्षणं ज्ञानलक्षणं च उभयाः सन्निकर्षः यदि ज्ञानरुपं भवति तर्हि तयोर्मध्ये भेदः कः? अस्योत्तरि नैयायिकाः उच्यते यत् सामान्य लक्षण सन्निकर्षेण सामान्याश्रयस्य च ज्ञानं भवति। किन्तु ज्ञानलक्षणसन्निकर्षक्षेत्रे यस्य ज्ञानसन्निकर्षं भवति तस्य एव अलौकिकं प्रत्यक्षं भवति। आसक्तिः आश्रयानान्तु सामान्यज्ञानम् इष्यते। विषयीयस्य तस्यैव व्यापारज्ञानलक्षणम्।

ज्ञान लक्षण सन्निकर्षक्षेत्रे इन्द्रियेण सह अस्य विषयस्य सन्निकर्षं भवति येन विषयेन सह इन्द्रियस्य सन्निकर्षं साधारणतः भवितुं न शक्यते। चक्षुषा चन्दनरसौरभस्य यत् प्रत्यक्षं भवति तत् ज्ञानलक्षणप्रत्यक्षमिति। व्यापारः एव भवति यत्– कोऽपि व्यक्तिः नास,तया संयुक्त–समवायलौकिकसन्निकर्षेण चन्दनसौरभं ग्राह्यति। तस्य गन्धस्य ज्ञानजन्यसंस्कारः व्यक्तेः आत्मनि वर्तते। अन्यसमये यदि व्यतक्तिः दूर्वर्ती चन्दनं दृष्ट्वा तस्य "सुरभि चन्दनम्" एव प्रत्यक्षँ भवति, तर्हि तत् प्रत्यक्षं भवति। ज्ञानलक्षणप्रत्यक्षस्यय उदाहरणं भवति, इदम् अलौकिकप्रत्यक्षम्। चन्दनसौरभस्य यत् चाक्षुषप्रत्यक्षं अत्र भवति तत् लौकिकसन्निकर्षेण कदापि न भविष्यति। तत् प्रत्यक्षं अत्र ज्ञानलक्षणम् अलौकिक सन्निकर्षेण जायते। चक्षुः गन्धग्रहणे कदापि समर्थं न भवितुं शक्यते। तथाप अत्र गन्धस्य प्रत्यक्षं चक्षुषा भवति। सुतरां चक्षुषा सह चन्दनसौरभस्य अलौकिकसन्निकर्षँ भवितुं न शक्यते। तस्मात् ज्ञानलक्षणः अलौकिक सन्निकर्षरुपेण अवश्यस्वीकर्तव्यम्।

योगजलक्षण सन्निकर्षद्वारा अधिगम :–

न्यायमतानुसारेण योगजालौकिकप्रत्यक्षं योगीनां सिद्धते। एतत् प्रत्यक्षम् अयोगीनां भवितुं न शक्यते। वयं केवलं निकटस्थः तथा च वर्तमानकालसम्बन्धी वस्तु एव प्रत्यक्षं कर्तुं शक्नुमः। परन्तु योगी दुरस्थ–पश्चात, सूक्षमः– बृहत्, अतीत–भविष्यत्कालिकवस्तुनः अपि प्रत्यक्षं कर्तुं समर्थः भवति। प्रत्यक्षस्य उपपत्तये नैयायिकाः योगजसन्निकर्षं स्वीकुर्वन्ति। अस्य सन्निकर्षस्यार्थः योगजधर्मसन्निकर्षः। नैयायिकाः उच्यते – "कोऽपि व्यक्तिः यदि दीर्घकाल निरवच्छिन्नभावेण यत्नशीलं भूत्वा योगाभ्यासं करोति तर्हि तेन योगसाधनेन तस्यात्मनि एकविशेषप्रकारकं धर्ममुत्पन्नं भवति। सः धर्मः योगजधर्मः। तेन धर्मेन सर्वदेशस्य सर्वकालस्य वस्तुना सह इन्द्रियस्य सन्निकर्षं भवति। तस्य भलतः योगी सर्ववस्तु प्रत्यक्षं कृत्वा सर्वज्ञं भवति।" यौगीणां इदं प्रत्यक्षं षडविधलौकिकसन्निकर्षेण, सामान्यलक्षणं ज्ञानलक्षणं सन्निकर्षेण च भवितुं न शक्यते। योगीनां एतत् प्रत्यक्षजनिताधिगमः योगजसन्निकर्षेण भवति। तस्मात् इदं प्रत्यक्षं योगजालौकिकं प्रत्यक्षमुच्यते।

सः योगयुक्तयोगी युञ्जानयोगी भेदेन योगीप्रकारद्वयत्वात् योगजधर्ममपि प्रकारद्वयं वर्तते। योगाभ्यासेन सिद्धिप्राप्तयोगी युक्तयोगी। युक्तयोगी योगजधर्मेण आकाशपरमाण्वादि वस्तु सर्वदा प्रत्यक्षं करोति। किन्तु युञ्जानयोगी अर्थात् यः योगाभ्यासेरतः परन्तु अधुनापि सिद्धिं न प्राप्तं, सः सर्वदा सर्ववस्तुप्रत्यक्षं कर्तुं न शक्तोति। सर्ववस्तुनः प्रत्यक्षाय युञ्जानयोगिनः चिन्ताविशेषापि सहकारी भवति।

उपसंहार :–

अत्र उल्लेखयोग्यं यत् नैयायिकाः विविधयुक्तिसहकारेण प्रकारत्रयम् अलौकिकसन्निकर्षं स्वीकारत्वेपि अन्य भारतीय

दार्शनिकेषु अधिकांशः एव सामान्य लक्षण ज्ञान लक्षणसन्निकर्षं च न स्वीकूर्वन्ति। विशिष्टनव्यनैयायिकः रघुनाथशिरोमणिः सामान्य लक्षणसन्निकर्षं न स्वीकरोति। वेदान्त दार्शनिकाः अपि सामान्यलक्षणं ज्ञान लक्षण सन्निकर्षं च न स्वीकुर्वन्ति। वेदान्तिगणाः उच्यन्ते सामान्यलक्षणम् अलौकिकसन्निकर्षं स्वीकारम् अयोक्तिकम्। तेषां मतानुसारेण एकं धूमं बह्णिं च प्रत्यक्षकाले धूमत्वस्य बह्णित्वस्य च सामाण्यस्य ज्ञानरुप सामान्य सन्निकर्षेण सर्बधूमस्य सर्वबह्णेः ज्ञाने सति कोऽपि एकस्मिन् क्षेत्रे धूमात् बह्णे अनुमानस्य प्रयोजनियता न वर्तते।

वेदान्तगणस्य मतानुसारेण ज्ञान लक्षणा लौकिक सन्निकर्षरुपेण स्वीकारम् अयोक्तिकम्। तेषां मतानुसारेण ज्ञान लक्षण प्रत्यक्षं स्वीकारत्वे सति प्रत्यक्षानुमिति ज्ञानस्य मते कोऽपि भेदः भवितुं न शक्यते। तेषां वक्तव्यं दुरस्थितचन्दनसौरभस्य यत् ज्ञानं तत् अनुमानेन व्याख्या कर्तुं शक्यते। तस्मात् ज्ञान लक्षण सन्निकर्षं स्वीकारम् अप्रयोजनियम्। सांख्य–वेदान्त–मिमांसादर्शने च योगजसन्निकर्षं स्वीकरोति। अस्माकं शास्त्रेषु विद्यमान अधिगमत्त्वम् आधुनिक मनोविज्ञानिकापेक्षया अधिकं विज्ञानसम्मतं वर्तते। यतो हि आधुनिक मनोविज्ञानिनः कथयन्ति अधिगमाय प्रत्यक्षविधिः समीचीनमिति किन्तु न्यायदर्शनस्थ सन्निकर्षः प्रत्यक्षकर्णाय महति उपकरोति। यदि सन्निकर्षः न स्यात् तर्हि प्रत्यक्षम् आकाशकुशुमवत् भवति। अतएव न्यायदर्शने विद्यमान सन्निकर्षः अधिगमे साहाय्यं विदधाति।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. गोस्वामी, नारायणचन्द्रः. तर्कसंग्रहः. कोलकाता. संस्कृत पुस्तक भाण्डार, बङ्गाव्द–1423.
2. वाग्ची, दीपककुमार. तर्कसंग्रह औ तर्कसंग्रह दीपिका. कोलकाता. मित्रम्, सन्–2012.
3. रायचौधरि, अनामिका. भाषापरिच्छेदः. कोलकाता. संस्कृत पुस्तक भाण्डार, सन्–2015.
4. गुप्ता, डॉ. अलका. शिक्षाशास्त्र आधार सामग्री. शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद–211002,
5. योगेन्द्रजीत भाई, शिक्षा मनोविज्ञान अग्रवाल पब्लिकेशन्स, 28 / 115, ज्योति ब्लक, सञ्जय प्लेस्, अग्रा–2.

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 38-41

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਗਿਆਨੀ ਨਰੈਣ ਸਿੰਘ ਦੀ ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ ਦੀ ਟੀਕਾਕਾਰੀ: ਇਕ ਅਧਿਐਨ

-ਡਾ. ਸਤਵੰਤ ਸਿੰਘ
ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ, ਸਕੂਲ ਆਫ਼ ਹਿਊਮੈਨਟੀਜ਼ ਲਵਲੀ ਪ੍ਰੋਫੈਸ਼ਨਲ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਫਗਵਾੜਾ

ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਦੇ ਨਾਂ ਹੇਠ ਪ੍ਰਚੱਲਿਤ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਰਚਨਾਵਾਂ ਦਾ ਸੰਗ੍ਰਹਿ 'ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ' ਇਤਿਹਾਸਕ ਅਤੇ ਸਾਹਿਤਕ ਪੱਖ ਤੋਂ ਇਕ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਗ੍ਰੰਥ ਹੈ ? ਇਸ ਵਿਚਲੀਆਂ ਰਚਨਾਵਾਂ ਦੇ ਲਿਖਾਰੀ ਬਾਰੇ ਪ੍ਰਮਾਣਿਕ ਜਾਣਕਾਰੀ ਦੀ ਘਾਟ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਪਿਛਲੇ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਇਸ ਦੇ ਅਸਲ ਕਰਤਾ ਜਾਂ ਲਿਖਾਰੀ ਦੇ ਪ੍ਰਸ਼ਨ 'ਤੇ ਵਾਦ-ਵਿਵਾਦ ਹੁੰਦਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ? ਵੱਖ-ਵੱਖ ਥਾਵਾਂ ਤੋਂ ਪ੍ਰਾਪਤ ਇਹਨਾਂ ਰਚਨਾਵਾਂ ਦੇ ਉਤਾਰੇ ਵਿਚਲੀਆਂ ਰਚਨਾਵਾਂ ਘੱਟ-ਵੱਧ ਹੋਣ ਕਾਰਨ, 'ਚਰਿਤਰੋਪ੍ਰਖਿਆਨ' ਦੇ ਸਿਰਲੇਖ ਹੇਠ ਦਰਜ 'ਇਸਤਰੀਆਂ ਦੇ ਚਰਿੱਤਰਾਂ' ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦੀਆਂ ਕਥਾਵਾਂ, 'ਅਵਤਾਰਾਂ ਦੀਆਂ ਕਥਾਵਾਂ' ਕਾਰਨ ਇਹਨਾਂ ਦੇ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਦੀਆਂ ਰਚਨਾਵਾਂ ਹੋਣ 'ਤੇ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਉੱਠਦਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ? ਇਸ ਲਈ ਇਸ ਨੂੰ ਕਦੇ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਦੇ ਦਰਬਾਰੀ ਕਵੀਆਂ ਦੇ ਨਾਂ ਨਾਲ ਜੋੜਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਕਦੇ ਕੁਝ ਰਚਨਾਵਾਂ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਦੀਆਂ ਮੰਨ ਕੇ ਬਾਅਦ ਵਿਚ ਰਲੇਵਾਂ ਹੋਇਆ ਮੰਨ ਲਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ?

ਇਹਨਾਂ ਰਚਨਾਵਾਂ ਦਾ ਕੋਈ ਵੀ ਇਤਿਹਾਸਕ ਗ੍ਰੰਥ ਪ੍ਰਾਪਤ ਨਹੀਂ ਹੋਇਆ ਹੈ ? 'ਗੁਰਮਤ ਗ੍ਰੰਥ ਪ੍ਰਚਾਰਕ ਸਭਾ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਨੇ ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ ਦੀਆਂ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਬੀੜਾਂ ਇੱਕਠੀਆਂ ਕਰਕੇ ਸੋਧ-ਸੋਧਾਈ ਕੀਤੀ ? ਪਰ ਇਹਨਾਂ ਬੀੜਾਂ ਵਿਚ ਕੋਈ ਵੀ ਅਸਲ ਬੀੜ ਨਹੀਂ ਸੀ ਸਿਰਫ ਉਤਾਰੇ ਹੀ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਏ ਸਨ ? ਇਸ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਸਭਾ ਨੇ ਆਪਣੀ ਇਕ ਵਿਸਤ੍ਰਿਤ ਰਿਪੋਰਟ ਪੇਸ਼ ਕੀਤੀ ? ਜਿਸ ਨੂੰ ਬਾਅਦ ਵਿਚ ਅਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਬਜ਼ਾਰ ਮਾਈ ਸੇਵਾ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਨੇ ਇਸ ਗ੍ਰੰਥ ਦਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਇਸ ਵਿਚ ਦਰਜ ਰਚਨਾਵਾਂ ਦਾ ਸਰੂਪ ਨਿਸ਼ਚਿਤ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ?" (ਡਾ. ਰਤਨ ਸਿੰਘ ਜੱਗੀ, ਸ੍ਰੀ ਦਸਮ-ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਪਾਠ ਸੰਪਾਦਨ ਅਤੇ ਵਿਆਖਿਆ, ਪੰਨਾ-18) ਹੁਣ ਇਹ ਨਿਸ਼ਚਿਤ ਕੀਤੀਆਂ ਰਚਨਾਵਾਂ ਵਾਲਾ ਗ੍ਰੰਥ ਹੀ 'ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ' ਦੇ ਨਾਂ ਹੇਠ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਹੈ ? ਇਸ ਸਭ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ 'ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ' ਵਿਚ ਦਰਜ ਰਚਨਾਵਾਂ ਇਤਿਹਾਸਕ ਪੱਖ ਤੋਂ ਅਤੇ ਵਿਸ਼ੇ-ਵਸਤੂ, ਰੂਪਕ, ਭਾਸ਼ਾ ਪੱਖ ਤੋਂ ਬਹੁਤ ਮੱਹਤਵਪੂਰਨ ਹਨ ? ਜਮਾਤੀ ਸਮਾਜ ਅੰਦਰ ਧਰਮ ਵੀ ਇਕ ਜਮਾਤ ਦੇ ਹਿੱਤ ਹੀ ਪੂਰਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ? ਇਸ ਦਿਸ਼ਾ ਵਿਚ ਦੇਖਿਆਂ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਅਤੇ ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ ਆਪਣੇ ਸਮੇਂ ਦੀ ਮੁਗਲ ਸਲਤਨਤ ਅਤੇ ਬ੍ਰਹਮਣਵਾਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿਚ ਪੈਦਾ ਹੋਏ ਵਿਚਾਰ ਹਨ ? ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿਚ ਦਰਜ ਬਾਣੀ ਜਿੱਥੇ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਰਾਗਾਂ, ਲੋਕ-ਸਾਹਿਤਕ ਰੂਪਾਂ ਅਤੇ ਆਮ ਲੋਕਾਈ ਦੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਚ ਬੜੇ ਠਰੰਮੇ ਨਾਲ ਆਪਣੀ ਗੱਲ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਉੱਥੇ ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ ਦਾ ਸਰੂਪ ਵਧੇਰੇ ਪਦਾਰਥਕ, ਬਗਾਵਤੀ ਅਤੇ ਜੋਰਦਾਰ ਛੰਦਾਂ, ਸਵੱਯਾਂ ਤੇ ਪੌੜੀਆਂ ਆਦਿ ਜਨਤਕ ਸੁਰਾਂ ਵਿਚ ਰਚਿਆ ਗਿਆ ਹੈ ? (ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ) 'ਵਿਸ਼ੇ ਵਸਤੂ ਦਾ ਰਸ ਸੰਗਰਾਮੀ ਤੇ ਬਗਾਵਤੀ ਹੈ ? ਜੋ ਹਿੰਦੂ, ਮੁਸਲਿਮ ਧਰਮਾਂ ਦੀ ਜਨਤਾ ਨੂੰ ਮਾਲਕ ਗੁਲਾਮ, ਉਚ ਨੀਚ, ਜਾਤ-ਪਾਤ, ਰਾਓ-ਰੰਕ ਆਦਿ ਵਰਗਾਂ ਵਿਚ ਵੰਡ ਕੇ ਰਾਜ ਕਰਦੀਆਂ ਸ਼੍ਰੇਣੀਆਂ ਦੀ ਸੇਵਾ ਕਰਵਾ ਰਹੇ ਭੇਖਾਂ, ਸੰਸਕਾਰਾ, ਪਰਪਾਟੀਆਂ, ਕਰਮ-ਕਾਂਡਾਂ, ਦਿਨ-ਦਿਹਾਰਾਂ ਤੇ ਲਿਖਤਾਂ ਉੱਤੇ ਹਮਲਾ ਕਰਦਾ ਤੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਇਹ ਸਭ ਕੁਝ ਛੱਡ ਕੇ 'ਇਕਸ' ਦੇ ਮਗਰ ਲਗਣ ਲਈ ਪੁਕਾਰਦਾ ਹੈ ?' (ਗੁਰਚਰਨ ਸਿੰਘ ਸਹਿੰਸਰਾ, ਇਤਿਹਾਸਕ ਪਦਾਰਥਵਾਦੀ ਆਲੋਚਣਾ, ਪੰਨਾ-89)

ਗਿਆਨੀ ਜੀ ਨੇ ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ ਦੇ ਟੀਕੇ ਵਿਚ 'ਅਕਾਲ-ਪੁਰਖ ਦੇ ਸਰੂਪ', 'ਸ਼੍ਰਿਸਟੀ ਰਚਨਾ', 'ਆਤਮਾ-ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ,' ਮਨੁੱਖੀ ਆਦਰਸ਼, ਨੈਤਕਿਤਾ ਆਦਿ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਸੰਕਲਪਾਂ ਦੀ ਵਿਆਖਿਆ ਕੋਈ ਉਚੇਚੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ਹੈ ? ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਟੀਕੇ ਦਾ ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਅਧਾਰ 'ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ' ਰਚਨਾ ਦੇ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਪਹਿਲੂਆਂ ਦੀ ਪਰਖ-ਪੜਚੋਲ ਅਤੇ ਵਿਆਖਿਆ ਕਰਨ ਦੀ ਥਾਂ ਸਾਧਾਰਨ ਸ਼ਾਬਦਿਕ ਅਰਥਾਂ ਤੱਕ ਸੀਮਤ ਹੈ ? ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ ਦੇ ਨਾਇਕ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਦੇ ਸਰੂਪ ਸੰਬਧੀ ਆਏ ਸ਼ਬਦਾਂ 'ਏਕੰਕਾਰਾ' ਅਤੇ 'ਪੁਰਖੁ' ਦੇ ਅਰਥ ਕਰਮਵਾਰ 'ਇਕ ਓਅੰਕਾਰ' ਅਤੇ ਵਿਆਪਕ ਕੀਤੇ ਹਨ ? ਉਪਰੋਕਤ ਸ਼ਬਦਾਂ ਦੇ ਅਰਥ ਕਰਦਿਆਂ ਸੰਪਰਦਾਈ

ਪ੍ਰਣਾਲੀ ਦੇ ਮਾਪਦੰਡ ਨਹੀਂ ਅਪਣਾਏ ? ਅਕਾਲ ਉਸਤਤ ਦਾ ਨਾਇਕ ਨਿਰਾਕਾਰ ਹੈ ? ਮਿਸਾਲ ਵਜੋਂ:

ਅਲਖ ਰੂਪ ਅਛੈ ਅਨਭੇਖਾ ?
ਰਾਸ ਰੰਗ ਜਿਹ ਰੂਪ ਨ ਰੇਖਾ ?
ਬਰਨ ਚਿਹਨ ਸਭਹੂੰ ਤੇ ਨਿਆਰਾ ?
ਆਦਿ ਪੁਰਖ ਅਦੈਵ ਅਬਿਕਾਰਾ ?

(ਪੰਡਿਤ ਨਰੈਣ ਸਿੰਘ ਜੀ ਗਿਆਨੀ, ਸ੍ਰੀ ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਸਟੀਕ, ਪੰਨਾ-61)

ਅਰਥ: (ਮੈਂ ਉਸ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਅਗੇ ਨਮਸਕਾਰ ਕਰਕੇ ਸੀਸ ਨਿਵਾਉਂਦਾ ਹਾਂ) ਜੋ ਅਲਖ ਹੈ ? ਜਿਸ ਨੂੰ ਕੋਈ ਨਹੀਂ ਜਾਣ ਸਕਦਾ, ਜੋ ਨਾਸ ਰਹਿਤ ਹੈ, ਜਿਸ ਦਾ ਕੋਈ ਖਾਸ ਭੇਸ ਨਹੀਂ ? ਜਿਸ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਦੇ ਮੋਹ ਦੀ ਰੰਗਣ ਨਹੀਂ ਚੜ ਸਕਦੀ ਤੇ ਜਿਸ ਦਾ ਕੋਈ ਖਾਸ ਰੂਪ ਜਾਂ ਚਿੰਨ ਨਹੀਂ ? ਜੋ ਵਰਨਾਂ (ਬ੍ਰਹਾਮਣ, ਖੱਤਰੀ, ਵੈਸ ਤੇ ਸ਼ੂਦਰ) ਦੇ ਚਿੰਨਾਂ ਤੋਂ ਵੱਖਰਾਂ ਹੈ ? (ਭਾਵ ਜਿਸ ਦੀ ਕੋਈ ਜਾਤ ਨਹੀਂ) ਜੋ ਰਚਨਾ ਦਾ ਮੂਲ (ਮੁੱਢ) ਹੈ ਤੇ ਸਰਬ ਵਿਆਪਕ ਹੈ, ਜੋ ਦਵੈਤ ਤੇ ਵਿਕਾਰਾਂ ਤੋਂ ਰਹਿਤ ਹੈ ?

ਗਿਆਨੀ ਨਰੈਣ ਸਿੰਘ ਨੇ ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ ਦਾ ਨਾਇਕ 'ਨਿਰਾਕਾਰ' ਸ਼ਕਤੀ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਕੀਤਾ ਹੈ ਅਤੇ ਜਿਸ ਦੇ ਤੁੱਲ ਹੋਰ ਕੋਈ ਹਸਤੀ ਨਹੀਂ ਮੰਨੀ ਹੈ ? ਜਿਵੇਂ ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ ਵਿਚ ਥਾਂ-ਥਾਂ 'ਦੈਵੀ ਸ਼ਕਤੀ' ਦੇ 'ਨਿਰਾਕਾਰੀ' ਸਰੂਪ ਦਾ ਜਿਕਰ ਆਉਂਦਾ ਹੈ ? ਉਹ 'ਸੰਸਾਰੀ ਸੀਮਾਵਾਂ ਤੋਂ ਪਰੇ', 'ਖੁੱਦ ਉਪਜਣ ਵਾਲਾ' ਅਤੇ 'ਸਾਰੀ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਤੇ ਆਪਣਾ ਪਸਾਰਾ ਕਰਨ ਵਾਲਾ' ਹੈ ? ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਦੇ ਤਿੰਨ ਸ਼੍ਰੇਸ਼ਟ ਦੇਵ ਬ੍ਰਹਮਾ, ਵਿਸ਼ਨੂੰ, ਮਹੇਸ਼ ਅਤੇ ਵੇਦ, ਪੁਰਾਨ, ਕੁਰਾਨ ਵੀ 'ਨਿਰਕਾਰ' ਦਾ ਰੱਹਸ ਜਾਨਣ ਤੋਂ ਅਸਮਰੱਥ ਹਨ ? ਟੀਕਾਕਾਰ ਨੇ ਆਪਣੇ ਟੀਕੇ ਵਿਚ ਇਨਾਂ ਵਿਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟ ਕੀਤਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਹੀ ਤੁਕਾਂ ਦੇ ਅਰਥ ਕੀਤੇ ਹਨ ? ਮਿਸਾਲ ਵਜੋਂ:

ਨ ਜੰਤ੍ਰ ਮੈ ਨ ਮੰਤ੍ਰ ਬਸਿ ਆਈ ?
ਪੁਰਾਨ ਔ ਕੁਰਾਨ ਨੇਤਿ ਨੇਤਿ ਕੈ ਬਤਾਵਈ ?
ਨ ਕਰਮ ਮੈ ਨ ਧਰਮ ਮੈ ਨ ਭਰਮ ਮੈ ਬਤਾਈਐ ?
ਅੰਗਜ ਆਦਿ ਦੇਵ ਹੈ ਕਹੁ ਸੁ ਕੈਸਿ ਪਾਈਐ ? (ਪੰਨਾ-127)

ਅਰਥ : ਉਹ ਪ੍ਰਭੂ ਨਾ ਕਿਸੇ ਜੰਤ੍ਰ ਤੇ ਨਾ ਕਿਸੇ ਤੰਤ੍ਰ ਦੇ ਅਧੀਨ ਹੈ ਤੇ ਨਾ ਹੀ ਉਹ ਕਿਸੇ ਮੰਤ੍ਰ ਦੇ ਜਪਣ ਨਾਲ ਵਸ ਵਿਚ ਆਉਂਦਾ ਹੈ ? ਪੁਰਾਣ ਤੇ ਕੁਰਾਨ ਉਸ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਨੂੰ ਬੇਅੰਤ ਬੇਅੰਤ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ ਉਹ ਅਕਾਲ ਪੁਰਖ ਨਾ ਕਿਸੇ ਕਰਮ ਦੇ ਬੰਧਨ ਵਿਚ ਹੈ ਨਾ ਕਿਸੇ ਧਰਮ ਵਿਚ ਬੱਝਾ ਹੈ ਨਾ ਹੀ ਉਸ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦਾ ਭਰਮ ਹੈ ? ਉਹ ਆਦਿ ਦੇਵ(ਪਰਮੇਸ਼ਰ) ਨਾਮ ਰਹਿਤ ਹੈ ? ਇਹ ਦੱਸੋ ਉਸ ਨੂੰ ਕਿਸ ਜੁਗਤੀ ਨਾਲ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ? ਇਸ ਤਰਾਂ 'ਅਕਾਲ-ਉਸਤਤਿ' ਵਿਚ ਇਕ ਅਜਿਹੀ ਸ਼ਰੋਮਣੀ ਸੱਤਾ ਦਾ ਗੁਣਗਾਨ ਹੈ ਇਸ ਦੇ ਮੁਕਾਬਲੇ ਸਾਰੇ ਦੇਵੀ ਦੇਵਤੇ, ਅਵਤਾਰ, ਧਰਮ, ਗ੍ਰੰਥ, ਤੀਰਥ ਇਸ਼ਨਾਨ, ਧਾਰਮਿਕ ਅਨੁੰਸ਼ਠਾਨ ਵਿਅਰਥ ਹਨ ? 'ਧਾਰਮਿਕ ਚੜਤਲ ਦੇ ਇਸ ਦੌਰ ਵਿਚ ਹੀ ਕੁਦਰਤ ਬਾਰੇ ਗਿਆਨ ਵਧੇਰਾ ਵਿਗਿਆਨਕ ਰੂਪ ਲੈਂਦਾ ਹੈ ? ਸਥਾਪਿਤ ਅਤੇ ਸਥਿਰ ਕੀਮਤਾਂ ਵਿਰੁੱਧ ਚਿੰਤਨ ਨੂੰ ਹਿਰਦੇ ਦੀ ਧੁਰ ਦੀ ਅਵਾਜ ਜਾਂ ਬਾਣੀ ਮੰਨਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ? ਮਿਥਿਹਾਸਕ-ਪੌਰਾਨਿਕ ਪਾਤ੍ਰਾਂ ਅਤੇ ਘਟਨਾਵਾਂ ਨੂੰ ਨਵੇਂ ਅਰਥ ਮਿਲਦੇ ਹਨ ? ਦੇਵਤੇ ਅਤੇ ਰੱਬ ਵਿਚੋਂ ਸਰੇਸ਼ਟਤਾ ਚਿਤਵੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ਼ਟ ਪੂਜਯ ਲੋਕ ਹਿਤੈਸ਼ੀ ਬਣਦੇ ਹਨ-ਹਰ ਕੋਈ ਆਪਣੇ ਜਾਂ ਸਮਾਜਿਕ ਇਸ਼ਟ ਤੱਕ ਸਿੱਧੀ ਪਹੁੰਚ ਅਪਣਾਉਂਦਾ ਹੈ ?' (ਕਿਰਪਾਲ ਸਿੰਘ ਆਜ਼ਾਦ, ਗੁਰਬਾਣੀ ਇਨਕਲਾਬੀ ਹੈ ਕਿ ?, ਪੰਨਾ-29) ਇੰਝ 'ਇਸ਼ਟ' ਨੂੰ ਲੋਕ ਹਿਤੈਸ਼ੀ ਬਣਾਉਂਦੇ ਹੋਏ 'ਹਿੰਦੂ ਧਰਮ ਦੇ ਕਰਮ-ਕਾਂਡਾਂ ਵਿਚੋਂ ਕੱਢ ਕੇ ਅਤੇ 'ਸੱਤਵੇਂ ਅਸਮਾਨ ਵਿਚ ਬੈਠੇ ਕ੍ਰੋਧਵਾਨ ਅਲਾਹ' ਦੀ ਥਾਂ ਇਕ ਮਿੱਤਰ, ਸਨੇਹੀ ਦਾ ਬਿੰਬ ਸਿਰਜਦੇ ਹੋਏ ਉਸਦੇ 'ਸ਼ਕਤੀ ਅਤੇ ਭਗਤੀ' ਦੇ ਸਰੂਪ ਨੂੰ ਸਥਾਪਿਤ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ? ਟੀਕਾਕਾਰ ਦੁਆਰਾ'ਅਕਾਲ-ਉਸਤਤਿ' ਦੇ ਨਾਇਕ ਦੀ ਸਰਵ ਉੱਚਤਾ ਦੇ ਕੀਤੇ ਅਰਥ ਮਿਸਾਲ ਵਜੋਂ ਦੇਖੇ ਜਾ ਸਕਦੇ ਹਨ ?

ਕਈ ਇੰਦ੍ਰ ਬਾਰ ਬੁਹਾਰ ?ਕਈ ਬੇਦ ਅਉ ਮੁਖਚਾਰ ?
ਕਈ ਰੁੱਦ੍ਰ ਛੁੱਦ੍ਰ ਸਰੂਪ ? ਕਈ ਰਾਮ ਕ੍ਰਿਸ਼ਨ ਅਨੂਪ ?

(ਪੰਡਿਤ ਨਰੈਣ ਸਿੰਘ ਜੀ ਗਿਆਨੀ, ਉਹੀ ਪੰਨਾ-81)

ਅਰਥ: ਕਈ ਇੰਦਰ ਆਦਿ ਦੇਵਤੇ ਉਸ ਦੇ ਦਰ ਤੇ ਝਾੜੂ ਦੀ ਸੇਵਾ ਕਰਦੇ ਹਨ ? ਉਸ ਦੇ ਰਚੇ ਹੋਏ ਕਈ ਵੇਦ ਤੇ ਬ੍ਰਹਮਾ ਹਨ ?

ਕਈ ਤੁਛ ਹਸਤੀ ਵਾਲੇ ਸ਼ਿਵ ਜੀ ਹਨ ਤੇ ਕਿੰਨੇ ਹੀ ਬੜੇ ਸੁੰਦਰ ਸਰੂਪ ਵਾਲੇ ਰਾਮ ਕ੍ਰਿਸ਼ਨ ਅਨੂਪ ਆਦਿ ਹਨ ?

ਗਿਆਨੀ ਜੀ ਦਾ ਟੀਕਾ ਭਗਤੀਪਰਕ ਟੀਕਾ ਹੈ ? ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਟੀਕਾ ਕਰਦਿਆਂ ਸ਼ਰਧਾਮਈ ਸ਼ੈਲੀ ਵਿਚ ਟੀਕੇ ਦੇ ਅਰਥ ਕੀਤੇ ਹਨ ? ਇਸੇ ਲਈ ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਟੀਕਾ ਸਿਰਫ ਕੋਸ਼ਗਤ ਅਰਥਾਂ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਤ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ ? ਆਪਣੇ ਤੋਂ ਪਹਿਲੇ ਸੰਪਰਦਾਈ ਟੀਕਾਕਾਰਾਂ ਵਾਂਗ ਗੁਰਬਾਣੀ ਜਾਂ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿਚੋਂ ਸੰਕੇਤ ਜਾਂ ਹਵਾਲੇ ਦੇਣ ਦੀ ਰੁਚੀ ਵੀ ਨਹੀਂ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦੀ ? ਟੀਕਾਕਾਰ ਨੇ ਤੁਕ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿਚ ਸੰਪੂਰਨ ਮੰਨਦਿਆਂ ਤੁਕਵਾਰ ਅਰਥ ਕੀਤੇ ਹਨ ? ਟੀਕਾਕਾਰਾਂ ਦੁਆਰਾ ਟੀਕਾ ਕਰਦਿਆਂ ਹਿੰਦੂ ਗ੍ਰੰਥਾਂ, ਵੇਦਾਂ ਉਪਨਿਸ਼ਦਾਂ ਵਿਚੋਂ ਹਵਾਲੇ ਦੇਣ, ਕਥਾ-ਕਹਾਣੀਆਂ ਦੇਣ ਜਾਂ ਅਰਥਾਂ ਨੂੰ ਵੈਦਿਕ ਦਰਸ਼ਨਧਾਰਾ ਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਲੈ ਕੇ ਆਉਣ ਦਾ ਰੁਝਾਨ ਰਿਹਾ ਹੈ ? ਪਰ ਗਿਆਨੀ ਨਰੈਣ ਸਿੰਘ ਦੇ ਟੀਕੇ ਦੀ ਖੂਬਸੂਰਤੀ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਨੇ ਆਪਣੇ ਟੀਕੇ ਵਿਚ ਥਾਂ-ਥਾਂ ਵੇਦਾਂ, ਪੁਰਾਣਾਂ, ਸ਼ਾਸਤਰਾਂ, ਦੇਵੀ-ਦੇਵਤਿਆਂ ਅਤੇ ਪੌਰਾਣਿਕ ਪਾਤਰਾਂ ਦੀ ਪ੍ਰੋੜਤਾ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ? ਜਿਸ ਕਾਰਨ ਉਸ ਦਾ ਟੀਕਾ ਸਰਲ ਤੇ ਸਪੱਸ਼ਟ ਹੈ ਅਤੇ ਆਮ ਪਾਠਕ ਦੇ ਸਮਝ ਆ ਸਕਣਯੋਗ ਹੈ ?

ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ ਦਾ ਨਾਇਕ ਕੋਈ ਇਕ ਦੇਸ਼, ਕੌਮ, ਧਰਮ, ਜਾਤ, ਨਸਲ, ਵੇਦ, ਕੁਰਾਨ ਆਦਿ ਦੀ ਪ੍ਰਤਿਨਿੱਧਤਾ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ ਸਗੋਂ ਸਭ ਪ੍ਰਕਾਰ ਦੇ ਵਿਤਕਰੇ ਉਲੰਘ ਕੇ 'ਇਕਸ' ਭਾਵ ਇੱਕਮੁੱਠ ਹੋ ਜਾਣ ਦੀ ਜੋਰਦਾਰ ਨਸੀਹਤ ਦਿੰਦਾ ਹੈ ? 'ਉਹਨਾਂ (ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ) ਦੀ ਰਚਨਾ ਜਾਪੁ, ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ, 33 ਸਵਈਏ ਤੇ ਸ਼ਬਦ ਹਜਾਰੇ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਤੌਰ 'ਤੇ ਪੜਨਯੋਗ ਹਨ ? ਇਹਨਾਂ ਵਿਚ ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਰੱਬੀ ਏਕਤਾ ਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਏਕਤਾ 'ਤੇ ਪੂਰਾ ਜੋਰ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ? ਤਾਂ ਕਿ ਇਨਕਲਾਬੀ ਲਹਿਰ ਦਾ ਸੰਗਠਨ ਪੱਕੀਆਂ ਨੀਂਹਾ 'ਤੇ ਖੜਾ ਹੋਵੇ ?' (ਪ੍ਰੋ. ਪਿਆਰਾ ਸਿੰਘ ਪਦਮ, ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ ਦਰਸ਼ਨ, ਪੰਨਾ-5) ਮਨੁੱਖੀ ਏਕਤਾ ਦੀ ਕਿੰਨੀ ਜੋਰਦਾਰ ਪੁਕਾਰ ਹੈ ! ਮਿਸਾਲ ਵਜੋਂ:

ਕੋਊ ਭਇਓ ਮੁੰਡੀਆ ਸੰਨਿਆਸੀ ਕੋਊ ਜੋਗੀ ਭਇਓ ?
ਕੋਊ ਬ੍ਰਹਮਚਾਰੀ ਕੋਊ ਜਤੀ ਅਨੁਮਾਨਬੋ ?
ਹਿੰਦੂ ਤੁਰਕ ਕੋਊ ਰਾਫਜੀ ਇਮਾਮ ਸਾਫੀ ?
ਮਾਨਸ ਕੀ ਜਾਤ ਸਭੈ ਏਕੈ ਪਹਿਚਾਨਬੋ ?   (ਪੰਨਾ-98-99)

ਏਕੇ ਨੈਨ ਏਕੈ ਕਾਨ ਏਕੈ ਦੇਹ ਏਕੈ ਬਾਨ ?
ਖਾਕ ਬਾਦ ਆਤਮ ਔ ਆਬ ਕੋ ਰਲਾਉ ਹੈ ?9   (ਪੰਨਾ- 100)

ਇਸੇ ਕਾਰਨ ਟੀਕਾਕਾਰ ਨੂੰ ਹਿੰਦੂ ਇਤਿਹਾਸ-ਮਿਥਿਹਾਸ ਵਿਚੋਂ ਪ੍ਰਮਾਣ ਦੇਣ ਦੀ ਲੋੜ ਨਹੀਂ ਜਾਪੀ ? ਕਿਉਂਕਿ ਜਿਸ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਕਰਮ ਕਾਂਡਾ ਨੂੰ ਰੱਦ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਹੈ ਉਸ ਵਿਚੋਂ ਹੀ ਪ੍ਰਮਾਣ ਦੇਣ ਨਾਲ ਅਰਥਾਂ ਵਿਚ ਵਿਰੋਧਤਾਈਆਂ ਪੈ ਜਾਣੀਆਂ ਸੁਭਾਵਿਕ ਸਨ ਪਰ ਤੁਕ ਨੂੰ ਅਧਾਰ ਬਣਾ ਕੇ ਅਰਥ ਕਰਨ ਨਾਲ ਸਤਹੀ ਅਰਥਾਂ ਤੱਕ ਹੀ ਪਹੁੰਚ ਬਣੀ ਰਹਿੰਦੀ ਹੈ ? ਜਿਸ ਕਾਰਨ ਸਿਧਾਂਤਕ ਸੰਕਲਪਾਂ ਦੇ ਅਰਥਾਂ ਨੂੰ ਖੋਲਣ ਵਿਚ ਟੀਕਾਕਾਰ ਅਸਫ਼ਲ ਹਇਆ ਹੈ ? ਮਿਸਾਲ ਵਜੋਂ:

ਬੇਦ ਕਤੇਬ ਨ ਭੇਦ ਲਖਿਓ ?
ਸਭ ਹਾਰਿ ਪਰੇ ਹਰਿ ਹਾਥ ਨ ਆਇਓ ? (ਪੰਨਾ-167)

ਅਰਥ: ਵੇਦਾਂ ਕਤੇਬਾਂ ਦਾ ਪਾਠ ਕਰਨ ਵਾਲਿਆ ਨੇ ਪ੍ਰਭੂ ਦੇ ਭੇਦ ਨੂੰ ਨਹੀਂ ਜਾਣਿਆ ? ਸਭ ਢੂੰਡਦੇ ਹਾਰ ਗਏ, ਪਰ ਉਹ ਹਰੀ ਕਿਸੇ ਦੇ ਹਥ ਨਹੀਂ ਆਇਆ ?

'ਅਕਾਲ-ਉਸਤਤਿ' ਵਿਚ 10 ਦੋਹਰੇ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਰੂਪ ਵਿਚ ਦਿੱਤੇ ਗਏ ਹਨ ? ਜਿਸ ਵਿਚ ਧਰਮ, ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ, ਆਤਮਾ, ਕਰਮ, ਮੌਤ, ਸਵਰਗ, ਨਰਕ, ਰਾਜਾ, ਕੰਗਾਲ, ਸੂਰਮਾ, ਦਾਤਾ ਆਦਿ ਦੇ ਸਰੂਪ ਸੰਬੰਧੀ ਪ੍ਰਸ਼ਨ ਉਠਾਏ ਗਏ ਹਨ ਪਰ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਉੱਤਰ ਨਹੀਂ ਦਿੱਤੇ ਮਿਲਦੇ ? ਟੀਕਾਕਾਰ ਨੇ ਇਹਨਾਂ ਦੋਹਰਿਆਂ ਵਿਚਲੇ ਪ੍ਰਸ਼ਨਾਂ ਦੇ ਉੱਤਰ ਹੋਰ ਟੀਕਾਕਾਰਾਂ ਵਲੋਂ ਆਪਣੇ ਆਪ ਗਲਤ ਉੱਤਰ ਦੇਣ 'ਤੇ ਇਤਰਾਜ ਉਠਾਇਆ ਹੈ ? ਉਹਨਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਟੀਕੇ ਵਿਚ ਇਹਨਾਂ ਪ੍ਰਸ਼ਨਾਂ ਦੇ ਉੱਤਰ ਭਾਈ ਕਾਨ ਸਿੰਘ ਨਾਭਾ ਦੇ ਅਧਿਕਾਰ ਢੰਗ ਨਾਲ ਦਿੱਤੇ ਹਨ ?

ਟੀਕੇ ਨੂੰ ਜੇਕਰ ਰਚਨਾ ਵਿਧਾਨ ਦੀ ਨੁਕਤਾ ਨਜ਼ਰ ਤੋਂ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਟੀਕਾਕਾਰ ਨੇ ਮੂਲ ਸਹਿਤ ਟੀਕਾ ਕੀਤਾ ਹੈ ?'ਅਕਾਲ-ਉਸਤਤਿ' ਵਿਚੋਂ ਦੋ-ਦੋ ਪੰਕਤੀਆਂ ਦੇ ਕੇ ਅਰਥ ਕੀਤੇ ਗਏ ਹਨ ? ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ ਵਿਚ ਅਨੇਕਾਂ ਛੰਦ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਹੋਈ ਹੈ ਪਰ ਟੀਕਾਕਾਰ ਨੇ ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ ਦੇ ਛੰਦ ਵਿਧਾਨ ਬਾਰੇ ਆਪਣੇ ਟੀਕੇ ਵਿਚ ਕੋਈ ਚਰਚਾ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ ਹੈ ? ਉਹਨਾਂ ਨੇ

ਸਿਰਫ ਵਿਸ਼ਾ-ਵਸਤੂ ਨੂੰ ਹੀ ਆਪਣੇ ਟੀਕੇ ਦਾ ਅੰਗ ਬਣਾਇਆ ਹੈ ? ਟੀਕਾ ਕਰਦਿਆਂ ਔਖੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਦੇ ਪਦ-ਅਰਥ ਦੇ ਕੇ ਉਸ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਅਰਥ ਕੀਤੇ ਹਨ ਅਤੇ ਇਕ ਤੁੱਕ ਦੇ ਇਕ ਹੀ ਅਰਥ ਕੀਤੇ ਹਨ ? 'ਭਾਵਰਥ, ਵਿਆਖਿਆ, ਨਿਰੁਕਤ ਆਦਿ ਕਿਤੇ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾਗੁਰਮਤਿ ਸਿਧਾਂਤਾਂ ਜਾਂ ਸਾਧਨਾਂ ਜਾਂ ਮਰਯਾਦਾ ਦੀ ਉਚੇਚੀ ਵਿਆਖਿਆ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ, ਕੇਵਲ ਸ਼ਾਬਦਿਕ ਟੀਕਾ ਕੀਤਾ ਹੈ ?' (ਡਾ. ਤਾਰਨ ਸਿੰਘ, ਗੁਰਬਾਣੀ ਦੀਆਂ ਵਿਆਖਿਆ ਪ੍ਰਣਾਲੀਆਂ, ਪੰਨਾ-277) ਟੀਕਾਕਾਰ ਨੇ 'ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ' ਵਿਚ ਆਏ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਇਤਿਹਾਸਕ ਨਾਂਵਾ, ਥਾਂਵਾ ਤੇ 'ਕੋਈ ਵਿਸ਼ੇਸ ਟਿੱਪਣੀ ਦੇਣ ਜਾਂ ਵਿਆਖਿਆ ਕਰਨ ਲਈ ਕਿਤੇ ਵੀ ਕੋਈ ਵੱਖਰੇ ਤੌਰ 'ਤੇ ਹਵਾਲੇ ਅਦਿ ਦੇਣ ਦਾ ਵਿਧਾਨ ਨਹੀਂ ਅਪਣਾਇਆ ? ਟੀਕੇ ਦੀ ਭਾਸ਼ਾ ਸਰਲ ਪੰਜਾਬੀ ਹੈ ? ਟੀਕੇ ਵਿਚ ਵਰਤੇ ਗਏ ਸ਼ਬਦੀ ਰੂਪਾਂ ਦਾ ਮੁਹਾਂਦਰਾ ਅਜੋਕੀ ਪੰਜਾਬੀ ਦੇ ਨੇੜੇ ਹਨ ? ਜਿਸਨ ਕਾਰਨ ਟੀਕੇ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਵਿਚ ਕੋਈ ਔਖਿਆਈ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੀ ? ਕਿਤੇ ਕਿਤੇ ਸੰਕਲਪਿਕ ਸ਼ਬਦਾਂ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਵੇਲੇ ਸਾਧ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਹੋਈ ਹੈ ? ਟੀਕਾ ਕਰਦਿਆਂ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਵਿਆਕਰਨਿਕ ਰੂਪਾਂ ਨੂੰ ਅਧਾਰ ਨਹੀਂ ਬਣਾਇਆ ਗਿਆ ?

ਸਾਰ ਰੂਪ ਵਿਚ ਕਿਹਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਗਿਆਨੀ ਨਰੈਣ ਸਿਘ ਦਾ ਟੀਕਾ ਭਗਤੀਪਰਕ ਟੀਕਾ ਹੈ ? ਟੀਕੇ ਦਾ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਆਧਾਰ, ਸ਼ਿਲਪ-ਵਿਧਾਨ, ਸ਼ੈਲੀ ਮੱਧਕਾਲੀ ਜੀਵਨ ਬੋਧ ਅਤੇ ਨੇਮਾਂ 'ਤੇ ਆਧਾਰਿਤ ਹੈ ? ਉਨਾਂ ਦੀ ਟੀਕਾਕਾਰੀ ਚਿੰਤਨ ਦੇ ਨਵੇਂ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਆਧਾਰਾਂ ਨੂੰ ਲੈ ਕੇ ਨਹੀਂ ਚਲਦੀ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਨਵੇਂ ਅਧਿਐਨ ਢੰਗਾਂ ਨੂੰ ਅਪਣਾਉਂਦੀ ਹੈ ? ਟੀਕੇ ਦਾ ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਧਰਾਤਲ ਭਾਰਤੀ ਅਦਵੈਤਵਾਦੀ ਧਾਰਨਾਵਾਂ ਹਨ ? ਜੋ 'ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ' ਵਿਚਲੇ ਵਸਤੂ ਬੋਧ ਨੂੰ ਮੱਧਕਾਲੀ ਜੀਵਨ ਬੋਧ ਨਾਲ ਮੇਚਦੀਆਂ ਹਨ ? ਟੀਕਾਕਾਰ ਨੇ 'ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ' ਦੇ ਇਸ਼ਟ 'ਨਿਰਾਕਾਰ' ਦਾ ਸਰੂਪ 'ਬ੍ਰਹਮ' ਦੇ ਸਮਾਂਤਰ ਉਸਾਰਿਆ ਹੈ ? ਜਿਸ ਨੂੰ ਇਕੋ ਇਕ ਸਭ ਤੋਂ ਸ਼੍ਰੋਮਣੀ ਸ਼ਕਤੀ ਮੰਨਿਆ ਗਿਆ ਹੈ ਅਤੇ ਜਿਸ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚ ਕੋਈ ਵੀ ਕਰਮ, ਧਰਮ, ਗ੍ਰੰਥ ਅਤੇ ਗਿਆਨ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਦਾ ? ਮਨੁੱਖ 'ਨੇਕ ਅਮਲਾਂ' ਨਾਲ ਹੀ 'ਉਸ ਦੇ ਪਿਆਰ ਦਾ ਪਾਤਰ' ਬਣ ਸਕਦਾ ਹੈ ? ਸ਼ਿਲਪ ਵਿਧਾਨ ਅਤੇ ਭਾਸ਼ਾ ਪੱਖ ਤੋਂ ਟੀਕੇ ਦਾ ਸਰੂਪ ਸਧਾਰਨ ਭਾਂਤ ਦਾ ਹੈ ਇਸ ਸੰਦਰਭ ਤੋਂ ਟੀਕਾਕਾਰ ਦੀ ਕੋਈ ਵਿਸ਼ੇਸ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਨਹੀਂ ਮੰਨੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ? ਟੀਕਾਕਾਰ ਆਪਣੇ ਟੀਕੇ ਵਿਚ 'ਅਕਾਲ-ਉਸਤਤਿ' ਦੀਆਂ ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਪਰਪਾਟੀਆਂ ਨਾਲ ਸੰਬਾਦ ਰਚਾਉਣ ਵਿਚ ਅਸਫ਼ਲ ਰਿਹਾ ਹੈ ? ਇਹ ਆਪਣੇ ਵਿਸ਼ੇ ਤੇ ਸਰੂਪ ਪੱਖੋਂ ਭਗਤੀਪਰਕ, ਸੰਖੇਪ ਤੇ ਸਧਾਰਨ ਟੀਕਾ ਹੈ ?

ਪੁਸਤਕ ਸੂਚੀ :-

1. ਸਹਿੰਸਰਾ, ਗੁਰਚਰਨ ਸਿੰਘ, ਇਤਿਹਾਸਕ ਪਦਾਰਥਵਾਦੀ ਆਲੋਚਣਾ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ. ਫਕੀਰ ਸਿੰਘ ਐਂਡ ਸੰਨਜ਼, ਮਿਤੀ ਹੀਨ
2. ਕਿਰਪਾਲ ਸਿੰਘ (ਆਜ਼ਾਦ), ਗੁਰਬਾਣੀ ਇਨਕਲਾਬੀ ਹੈ ਕਿ ?, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, ਰਵੀ ਸਾਹਿਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, 1981
3. ਜੱਗੀ, ਰਤਨ ਸਿੰਘ, ਗੁਰਸ਼ਰਨ ਕੌਰ ਜੱਗੀ, ਸ੍ਰੀ ਦਸਮ-ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਪਾਠ ਸੰਪਾਦਨ ਅਤੇ ਵਿਆਖਿਆ (ਭਾਗ ਪਹਿਲਾ), ਗੋਬਿੰਦ ਸਦਨ, 1999
4. ਤਾਰਨ ਸਿੰਘ (ਡਾ.), ਗੁਰਬਾਣੀ ਦੀਆਂ ਵਿਆਖਿਆ ਪ੍ਰਣਾਲੀਆਂ, ਪਟਿਆਲਾ ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, 1997
5. ਨਰੈਣ ਸਿੰਘ (ਗਿਆਨੀ), ਸ੍ਰੀ ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਸਟੀਕ, (ਸੈਂਚੀ ਪਹਿਲੀ) ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ ਚਤਰ ਸਿੰਘ, ਜੀਵਨ ਸਿੰਘ, ਮਿਤੀ ਹੀਨ
6. ਪਦਮ, ਪਿਆਰਾ ਸਿੰਘ, ਦਸਮ ਗ੍ਰੰਥ ਦਰਸ਼ਨ, ਪਟਿਆਲਾ, ਕਲਮ ਮੰਦਿਰ, 1968

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 42-47

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ಭಾರತೀಯ ಮಹಿಳಾ ಶಿಕ್ಷಣ ಪದ್ಧತಿ

ಡಾ. ಮಂಜುಳಾ ಚವ್ಹಾಣ

ಶಿಕ್ಷಣ ಮತ್ತು ಸಂಸ್ಕೃತಿಗೆ ಪ್ರಸಿದ್ಧಿ ಪಡೆದಂತಹ ರಾಷ್ಟ್ರವೆಂದರೆ ಅದು ಭಾರತ. ಇಲ್ಲಿಯ ಶಿಕ್ಷಣ ಪದ್ಧತಿಯನ್ನು ಅವಲೋಕಿಸಿದ ರಾಷ್ಟ್ರಗಳು ನಮ್ಮ ದೇಶ ಹಾಗೂ ಸಂಸ್ಕೃತಿಯನ್ನು ಹಾಡಿ, ಹೂಗಳಿ ಎಲ್ಲರ ಗುರು ಎಂಬ ಪದವಿಯನ್ನು ಪಡೆದುಕೊಂಡಿದೆ. ಪ್ರಾಚೀನ ಕಾಲದಿಂದಲೂ ನಮ್ಮ ಸಂಸ್ಕೃತಿ ಮತ್ತು ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕೆ ತನ್ನದೇ ಆದ ಪ್ರತಿಷ್ಠೆ, ಗೌರವವಿದೆ. ವೇದ ಉಪನಿಷ್ಯತಗಳ ತಿಳುವಳಿಕೆ ಇರಬಹುದು ಅಥವಾ ಜೀವನದ ಕಟುಸತ್ಯಗಳ ಸಾರ ಇರಬಹುದು. ಎಲ್ಲವು ಭಾರತೀಯರ ಜೀವಾಳವಾಗಿದೆ.

ಸಮಾಜದ ಉನ್ನತಿಯಲ್ಲಿ ನಮ್ಮ ಪ್ರಾಚೀನ ಶಿಕ್ಷಣ ಪದ್ಧತಿ ತುಂಬಾ ಸಹಾಯಕವಾಗಿದೆ. ಧರ್ಮ ಸೂತ್ರಗಳಲ್ಲಿ ತಾಯಿಯೇ ಮೊದಲ ಗುರು. ತಾಯಿಯೇ ಜೀವನದ ದಾರಿಯನ್ನು ತೋರುವ ಮಾರ್ಗದರ್ಶಿ. ಆದರೆ ಇದನ್ನು ಇನ್ನೊಂದು ದೃಷ್ಟಿಕೋನದಿಂದ ಅವಲೋಕಿಸಿದಾಗ ನಮ್ಮ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯಲ್ಲಿ ಬ್ರಾಹ್ಮಣರಿಗೆ ವೇದಗಳ ಅಧ್ಯಯನ ಮತ್ತು ಕ್ಷತ್ರಿಯರಿಗೆ ರಕ್ಷಕರು ಅಂದರೆ ಯುಧದಲ್ಲಿ ಪಾಲ್ಗೋಳುವುದು. ವೈಶ್ಯರು ಆರ್ಥ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯಲ್ಲಿ ತೊಡಗಿದ್ದರು, ಶೂದ್ರರು ಮೇಲಿನವರ ಸೇವೆ ಮಾಡಿಕೊಂಡು ಜೀವನ ನಡೆಸುವುದೇ ನಮ್ಮ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯಾಗಿತ್ತು. ಇನ್ನೂ ಸ್ತ್ರೀಯರನ್ನು ಕೂಡ ಶೂದ್ರರಂತೆ ಎಣಿಸಲಾಗುತ್ತಿತ್ತು. ಸ್ತ್ರೀಯು ಬೇರೆಯವರ ಆಧೀನದಲ್ಲೇ ತನ್ನ ಜೀವನವನ್ನು ನಡೆಸಬೇಕಾಗಿತ್ತು. ಬಾಲ್ಯದಲ್ಲಿ ತಂದೆಯ ರಕ್ಷಣೆಯಲ್ಲಿ, ಯೌವನದಲ್ಲಿ ಗಂಡನ ಹಾಗೂ ವೃದ್ಧಾಪ್ಯದಲ್ಲಿ ಮಗನ ರಕ್ಷಣೆಯಲ್ಲಿ ಇರಬೇಕಾಗಿತ್ತು. ಅವಳು ಕೇವಲ ತಂದೆ, ಗಂಡ, ಮಗನ ಸೇವೆಯಲ್ಲಿ ಜೀವನವನ್ನು ನಡೆಸುತ್ತಿದ್ದಳು. ಅಂದರೆ ಅವಳು ಶೂದ್ರಳೇ? ಎಂಬುದು ಅವರ ಅನಿಸಿಕೆ. ಅದಕ್ಕಾಗಿ ಅವಳಿಗೆ ಶಿಕ್ಷಣ ಕೊಡುವುದು ಅವಶ್ಯಕವಲ್ಲ ಎಂಬುದನ್ನು ತಿಳಿಸುತ್ತಾ ಬಂದರು.

ಪ್ರಾಚೀನ ಶಿಕ್ಷಣ ಪದ್ಧತಿಯನ್ನು ನೋಡಿದಾಗ ಒಂದು ಕಡೆ ಸ್ತ್ರೀಯನ್ನು ದೇವತೆಯೆಂದು ಪೂಜಿಸಿದರು. ಇನ್ನೊಂದು ಕಡೆ ತಮ್ಮದೇ ಮನೆಯಲ್ಲಿರುವ ಮಗಳು, ಹೆಂಡತಿ, ತಾಯಿಯನ್ನು ತುಚ್ಛವಾಗಿ ಕಾಣುತ್ತಿರುವುದು ಕಂಡುಬರುತ್ತದೆ ಮತ್ತು ಆಲೋಚನೆಗೆ ಎಡೆಮಾಡಿ ಕೊಡುತ್ತಿದೆ. ಒಂದೇ ಸಮಾಜದಲ್ಲಿ ಇಷ್ಟು ರೀತಿಯ ಮತಭೇದಗಳು ಹೇಗೆ? ಅನ್ನುವುದನ್ನು ನಾವು ಯೋಚಿಸಬಹುದು.

ಇನ್ನೊಂದು ಕಡೆ ಪ್ರಾಚೀನ ಶಿಕ್ಷಣ ಪದ್ಧತಿಯಲ್ಲಿ ಮಹಿಳೆಯರಿಗೆ ಶಿಕ್ಷಣ ಕೊಡಿಸುವ ನಿಟ್ಟಿನಲ್ಲಿ ಕೆಲಸ ಕಾರ್ಯಗಳೂ ನೆಡೆದು ಬಂದಿವೆ. ಅವರಿಗೆ ಹೊರಗೆ ಹೋಗಿ ಅಂದರೆ ಆಶ್ರಮಗಳಲ್ಲಿ ಉಳಿದು ಶಿಕ್ಷಣ ಪಡೆಯಲಿಕ್ಕಾಗದಿದ್ದರು, ಮನೆಯಲ್ಲೆ ಶಿಕ್ಷಣ ಕೊಡಿಸುವ ವ್ಯವಸ್ಥೆ ಮಾಡಲಾಗಿತ್ತು. ಕೆಲವರಿಗೆ ಪುರುಷರೊಂದಿಗೆ ಸರಿಸಮಾನವಾಗಿ ಕುಳಿತು ಶಿಕ್ಷಣ ಪಡೆಯುವ ಅವಕಾಶವು ದೊರಕಿತು ಅವರೆಂದರೆ ಅಪಾಲಾ, ಘೊಷ, ಲೋಪಮುದ್ರಾಮ್ ಗಾರ್ಗಿ, ಮೈತ್ರೆಯಿ ಹೀಗೆ ಹಲವಾರು ಬಾಷೆಗಳಿಗೆ ಈ ಅವಕಾಶ ದೊರೆಯಿತು. ಇವರು ಪುರುಷರಷ್ಟೇ ಮೇಧಾವಿಗಳಾಗಿದ್ದರು ಇವರುಗಳು ಪಾಂಡಿತ್ಯದಲ್ಲಿಯು ಮೆಧಾವಿಗಳಾಗಿದ್ದರು. ವರ್ಣಾಶ್ರಮ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯಲ್ಲಿ ಯಾವ ಗುಂಪಿನ ಮಹಿಳೆಯರಿಗೆ ಈ ಶಿಕ್ಷಣ ಒದಗಿಸಲಾಗಿತ್ತು ಎಂಬುದಕ್ಕೆ ಯಾವುದೇ ಪುರಾವೆಗಳು ದೊರಕಿಲ್ಲ.

ಭೌದ್ಧ ಧರ್ಮಸಾರುವಂತೆ, ಎಲ್ಲರೂ ಸಮಾನರು. ಮಾನವರೆಲ್ಲರೂ ಒಂದೇ. ಎಲ್ಲ ಜಾತಿ, ಧರ್ಮದ ಜನರಿಗೆ ಸ್ವಾತಂತ್ರ್ಯ ಹಾಗೂ ಸಮಾನತೆಯನ್ನು ಒದಗಿಸುತ್ತ ಎಲ್ಲರನ್ನು ತನ್ನೊಂದಿಗೆ ಕರೆದುಕೊಂಡು ಹೋದರು. ಧಾರ್ಮಿಕವಾಗಿ, ಆಧ್ಯಾತ್ಮಿಕವಾಗಿ ಎಲ್ಲರನ್ನು ಶಿಕ್ಷಿತರನ್ನಾಗಿ ಮಾಡಿದರು. ಆದರೆ ಸ್ತ್ರೀಯರಿಗೆ ಸನ್ಯಾಸವನ್ನು ನಿರಾಕರಿಸಿದರು. ನಂತರದ ದಿನಗಳಲ್ಲಿ ಸ್ತ್ರೀಯರಿಗೆ ಸನ್ಯಾಸಿ ಧಿಕ್ಷೆಯನ್ನು ಪಡೆಯಲು ಅವಕಾಶ ಒದಗಿಸಿದರು. ಆದರೆ ಈ ಧೀಕ್ಷೆ ಪುರುಷರಿಗಿಂತ ಕಠಿಣವಾಗಿತ್ತು. ಆದರೂ ಆಗ ಅನೇಕ ಸ್ತ್ರೀಯರು ಧೀಕ್ಷೆಯನ್ನು ಪಡೆದು ಭೌದ್ಧ ಸನ್ಯಾಸಿನಿಗಳಾಗಿ ಜೊತೆಗೆ ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ಪಡೆದು ಇತಿಹಾಸದಲ್ಲಿ ತಮ್ಮ ಹೆಸರನ್ನು ಮಾಡಿದ್ದಾರೆ.

ಮನುಸ್ಮೃತಿಯ ಕಾಲದಲ್ಲಿ ಸ್ತ್ರೀಯರ ಶಿಕ್ಷಣ ಸಂಪೂರ್ಣವಾಗಿ ನಿಂತುಹೋಯಿತು. ಮನು ಹೇಳಿದಹಾಗೆ ಸ್ತ್ರೀ ಮತ್ತು ಶೂದ್ರ ಇವರಿಬ್ಬರು ಒಂದೆ, ಇವರು ವೇದಾಧ್ಯಯನ ಮಾಡುವುದಕ್ಕೆ ಅರ್ಹರಲ್ಲ. ರಾಜಕುಮಾರಿಯರು, ಮಹಾರಾಣಿಯರು ಐತಿಹಾಸಿಕ ಕಥೆಗಳಲ್ಲಿ ಕೇಳಬಹುದು ಎಂದು ಕೇವಲ ದಾಖಲೆಗಳು ಸಿಗುತ್ತವೆ. ಆದರೆ ಸಾಮಾನ್ಯ ಮಹಿಳೆಯರ ಶಿಕ್ಷಣದ ಬಗ್ಗೆ ಯಾವುದೇ ದಾಖಲೆ ಸಿಗುವುದಿಲ್ಲ.ಮಹಿಳೆಯರು ಕೇವಲ ಗೃಹ ಕೆಲಸಕ್ಕೆ ಸೀಮಿತವಾಗಿದ್ದು. ಮಹಿಳೆ ಔಪಚಾರಿಕ ಮತ್ತು ಅನೌಪಚಾರಿಕ ಶಿಕ್ಷಣದಿಂದ ವಂಚಿತಳಾದಳು. ೧೨ನೇ ಆತಮಾನದಲ್ಲಿ ಮಹಿಳೆಯರು ಔಪಚಾರಿಕ ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ಪಡೆಯದಿದ್ದರು ವಚನಗಳ ರಚನೆಯಲ್ಲಿ ತೊಡಗಿರುವುದನ್ನು ಕಾಣುತ್ತೇವೆ. ಇವರು ಅತ್ಯುತ್ತಮ ಉದಾಹರಣೆ ಎಂದರೆ ಅಕ್ಕಮಹಾದೇವಿ. ಇವರೊಬ್ಬರೆ ಗುರು ಮಠದಲ್ಲಿ ಶಿಕ್ಷಣ ಪಡೆದವರೆಂದು ಸಾಕ್ಷಿ ಆಧಾರಗಳು ದೊರಕುತ್ತವೆ.

ಸ್ವಾತಂತ್ರ್ಯ ಪೂರ್ವದಲ್ಲಿ ಸ್ತ್ರೀ ಶಿಕ್ಷಣ

೧೯ ನೇ ಶತಮಾನ ಮಹಿಳೆಯರಿಗೆ ಅತಂತ್ಯ ಸಂಘರ್ಷದಿಂದ ಕೂಡಿದ ಶತಮಾನವಾಗಿತ್ತು. ಸತಿ ಪದ್ಧತಿ, ಬಾಲ್ಯ ವಿವಾಹ ಹಾಗೂ ವಿಧವಾ ಪದ್ಧತಿಯಿಂದ ನರಳಾಡುತ್ತಿದ್ದು. ಸಾಮಾಜಿಕ ಆರ್ಥಿಕ ಮತ್ತು ಧಾರ್ಮಿಕವಾಗಿಯು ಪರಿಸ್ಥಿತಿ ಅತ್ಯಂತ ಕೆಳಮಟ್ಟದಲ್ಲಿ ಇಳಿದಿತ್ತು. ಅನೇಕ ಧಾರ್ಮಿಕ ಆಚರಣೆಗಳ ನೆರಳಿನಲ್ಲಿ ಸ್ತ್ರೀಯರ ಶೋಷಣೆಯನ್ನು ಮಾಡಲಾಗುತ್ತಿತ್ತು. ಇಂತಹ ಪರಿಸ್ಥಿತಿಯಲ್ಲಿ ಒಂದು ಸಾಮಾಜಿಕ ಸುಧಾರಣಾ ಚಳುವಳಿ ಹಾಗೂ ಬ್ರಿಟಿಷರ ಶಿಕ್ಷಣ ನೀತಿಗಳು ತುಂಬಾ ಸಹಾಯಕ ಎನಿಸಿದವು. ಇಂತಹ ಪಿಡುಗುಗಳನ್ನು ಹೋಗಲಾಡಿಸಬೇಕೆಂದರೆ ಮಹಿಳೆಯರಿಗೆ ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ನೀಡಿದಾಗ ಮಾತ್ರ ಅದು ಸಾಧ್ಯ ಎಂಬುದು ಅರಿವಾಗಲಾರಂಬಿಸಿತು. ಕೇವಲ ಮಹಿಳೆಯರ ಉದ್ದಾರವಲ್ಲ ಜೊತೆಗೆ ಸಮಾಜದ ಉದ್ದಾರವು ಸಾಧ್ಯ.

ಮಹಿಳೆಯು ಕೇವಲ ಒಳ್ಳೆಯ ತಾಯಿಯಾಗಿ, ಹೆಂಡತಿಯಾಗಿ ಹಾಗೂ ಮಗಳಾಗಿ ಕೇವಲ ಕುಟುಂಬಕಷ್ಟೇ ಸೀಮಿತವಾಗಿರದೇ, ತನ್ನ ವಯಕ್ತಿಕ ಮತ್ತು ಭೌದ್ಧಿಕ ಬೆಳವಣಿಗೆಯಲ್ಲಿ ತೋಡಗಬೇಕು. ದೇಶದ ಪ್ರಗತಿಯಲ್ಲಿ ಅವಳ ಮಹತ್ವದ ಸ್ಥಾನವಿದೆ ಎಂಬ ಅರಿವು ಮೂಡಿಸಲಾಯಿತು. ಬ್ರಿಟಿಷರ ಉದ್ದೇಶ, ಸ್ತ್ರೀಯರ ಸ್ಥಿತಿಯನ್ನು ಸುಧಾರಿಸುವುದಲ್ಲದೇ ಜೊತೆಗೆ ಧರ್ಮ ಪ್ರಚಾರ ಹಾಗೂ ಭಾರತೀಯ ಸಮಾಜವನ್ನು ನಾಗರಿಕ ಸಮಾಜವಾಗಿ ಬೆಳೆಸುವುದಾಗಿತ್ತು, ಜೊತೆಗೆ ತಮ್ಮ ಹಿರೆಮೆಯನ್ನು ತೋರಿಸುವುದಾಗಿತ್ತು. ಇದನ್ನು ಒಂದು ಸಾಧನವಾಗಿ ಬಳಸಿಕೊಂಡು ತಮ್ಮ ಕೆಲಸವನ್ನು ಸುಲಭ ಮಾಡಿಕೊಳ್ಳುವುದೇ ಮುಖ್ಯ ಗುರಿಯಾಗಿತ್ತು.

ಬ್ರಹ್ಮ ಸಮಾಜ, ಪ್ರಾರ್ಥನಾ ಸಮಾಜ, ಆರ್ಯ ಸಮಾಜಗಳು ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ಸಂಪೂರ್ಣವಾಗಿ ಬೆಂಬಲಿಸಿದವು. ಕೇಶವ, ಅನಿಬೇಸೆಂಟ್ ಸ್ತ್ರೀ ಶಿಕ್ಷಣದ ಬೆಳವಣಿಗೆಗೆ ಕೆಲಸ ಮಾಡಿದರು. ಪಂಡಿತ ರಮಾಬಾಯಿ ಇವರು ಬಾರತದೆಲ್ಲೆಡೆ ಪ್ರವಾಸ ನಡೆಸಿ ಪ್ರಚಾರ ಮಾಡಿದರು. ವಿದೇಶಕ್ಕೆ ಹೋಗಿ ಅಲ್ಲಿನ ಶಾಲೆ, ಸಂಸ್ಥೆಗಳಿಗೆ ಭೇಟಿ ನೀಡಿ ಶಿಕ್ಷಣ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯ ಬಗ್ಗೆ ಅಭ್ಯಾಸ ನಡೆಸಿದರು, ಜೊತೆಗೆ ಹಣ ಸಂಗ್ರಹಿಸಿ ಭಾರತಕ್ಕೆ ಬಂದು ಹೆಣ್ಣು ಮಕ್ಕಳ ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕಾಗಿ ವಿನಿಯೋಗಿಸಿದರು. ಮಹಿಳಾ ಶಿಕ್ಷಣದ ಪಠ್ಯಕ್ರಮದಲ್ಲೂ ಹೊಸ ವಿಚಾರಗಳನ್ನು ತರಲು ಪ್ರಯತ್ನಿಸಿದರು.

ಮಹಾತ್ಮಾ ಗಾಂಧೀಜಿಯವರು ಹೆಣ್ಣು ಮಕ್ಕಳ ಶಿಕ್ಷಣದ ಮಹತ್ವವನ್ನು ಎತ್ತಿ ಹಿಡಿದರು. ಆದರೆ ಅವರೂ ಕೂಡ ಸಾಂಪ್ರದಾಯಿಕ ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕೆ ಹೆಚ್ಚು ಮಹತ್ವ ಕೂಟ್ಟರು. ಸ್ವಲ್ಪ ಮಟ್ಟಿನ ಗಣಿತ ಜ್ಞಾನ, ಕರಕುಶಲ ಕೆಲಸ, ಸ್ವಚ್ಛತೆ, ಆರೋಗ್ಯ, ಹೊಲಿಗೆ, ಇಂಗ್ಲೀಷ ಹಾಗೂ ಪ್ರಾದೇಶಿಕ ಭಾಷೆಯನ್ನು ಕಲಿಯುವುದಕ್ಕೆ ಅವರ ಶಿಕ್ಷಣ ಸೀಮಿತಗೊಂಡಿತು. ಆದರೆ ಪುರುಷರಿಗೆ ವಿಜ್ಞಾನ, ತತ್ವಜ್ಞಾನ, ಗಣಿತ, ತಂತ್ರಜ್ಞಾನ, ವಿದೇಶಿ ಭಾಷೆ, ಕಲಾ ವಿಷಯಗಳನ್ನು ಕಲಿಯಲು ಪ್ರೋತ್ಸಹ ಸಿಕ್ಕಿತು. ಆದರೆ ಕೇವಲ ಕ್ರಾಂತಿಕಾರರ ಗಂಡು ಮಕ್ಕಳಂತೆ ಹೆಣ್ಣು ಮಕ್ಕಳಿಗೂ ಸರ್ವತೋಮುಖ ಅಭಿವೃದ್ಧಿಗೆ ಶಿಕ್ಷಣ ನೀಡಬೇಕೆಂದು ಪ್ರತಿಪಾದಿಸಿದರು ಹೀಗೆ ಕ್ರಮೇಣ ಕಲಿಯುವ ವಿಷಯಗಳ ವ್ಯಾಪ್ತಿ ವಿಶಾಲವಾಗುತ್ತಾ ಹೋಯಿತು.

ಸ್ವಾತಂತ್ರ್ಯೋತ್ತರ ಭಾರತದಲ್ಲಿ ಮಹಿಳಾ ಶಿಕ್ಷಣ ಬೆಳವಣಿಗೆ

ಸ್ವತಂತ್ರ ಭಾರತವಾದಾಗ್ಯೂ ಸ್ತ್ರೀ ಶಿಕ್ಷಣದ ಬಗ್ಗೆ ಇದ್ದಂತಹ ನಿಲುವು ಈಗಲೂ ಮುಂದುವರೆಯಿತು. ಸಾಮಾಜಿಕ ರಾಜಕೀಯ, ಧಾರ್ಮಿಕ ಮತ್ತು ಸಾಂಸ್ಕೃತಿಕ ಕಟ್ಟುಪಾಡುಗಳು ಸ್ತ್ರೀ, ಪುರುಷರ ನಡುವೆ ತಾರತಮ್ಯ ತೋರುತ್ತದೆ. ಸ್ವಾತಂತ್ರ್ಯದ ಬಳಿಕ ದೇಶವನ್ನು ಆರ್ಥಿಕವಾಗಿ ಬೆಳಸಬೇಕಾಗಿತ್ತು ಆದಕಾರಣ ಆರ್ಥಿಕ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯನ್ನು ಬೆಳೆಸುವುದಕ್ಕೆ ಹೆಚ್ಚಿನ ಮಹತ್ವ ನೀಡಲಾಯಿತು. ಪಂಚವಾರ್ಷಿಕ ಯೋಜನೆಗಳಲ್ಲಿ ಜನರ ಶಿಕ್ಷಣ, ಆರೋಗ್ಯ, ಉದ್ಯೋಗ ಮತ್ತು ಆದಾಯವನ್ನು ಹೆಚ್ಚಿಸುವುದಕ್ಕೆ ಹೆಚ್ಚಿನ ಗಮನ ನೀಡಲಾಯಿತು.

ಅನಕ್ಷರತೆ, ಕೆಳಮಟ್ಟದ ಶಿಕ್ಷಣ, ಕೌಶಲ್ಯ ತರಬೇತಿಯನ್ನು ಕಂಡ ಸರ್ಕಾರ ಶಿಕ್ಷಣ ವ್ಯವ್ಥೆಯನ್ನು ಸುಧಾರಿಸಿ ಜನರ ಶಿಕ್ಷಣಮಟ್ಟವನ್ನು ಉತ್ತಮ ಪಡಿಸಲು ಪ್ರಯತ್ನಿಸಿತು ಆದರೆ ಲಿಂಗ, ಧರ್ಮ, ಪ್ರದೇಶ ಹಾಗೂ ವರ್ಗಾಧಾರಿತವಾಗಿ ಶಿಕ್ಷಣ ಅಭಿವೃದ್ಧಿಯನ್ನು ಅವಲೋಕಿಸಿದಾಗ.

೧) "ಡಾ॥ ಎಸ್. ರಾಧಾಕೃಷ್ಣನ್ ಅವರ ನೇತೃತ್ವದಲ್ಲಿ ಸ್ಥಾಪನೆಗೊಂಡ ಯೂನಿವರ್ಸಿಟಿ ಎಜುಕೇಶನ್ ಕಮಿಷನ(೧೯೪೮-೪೯) ಕೂಡ ಸಂಪ್ರದಾಯ ದೃಷ್ಟಿಕೋನದಿಂದ "ಒಳ್ಳೆ ಕುಟುಂಬ ವ್ಯವಸ್ಥೆ ಒಳ್ಳೆ ಪುರುಷನನ್ನ ನಿರ್ಮಿಸುತ್ತದೆ ತಾಯಿಯು ಶ್ರೇಷ್ಠ ಗುರುವಾದರಿಂದ ಮಕ್ಕಳಿಗೆ ನಡತೆ ಮತ್ತು ಬುದ್ಧಿವಂತಿಕೆಯನ್ನು ಬೆಳೆಸುವಲ್ಲಿ ಪ್ರಮುಖಪಾತ್ರ ವಹಿಸುವುದರಿಂದ ಸ್ತ್ರೀಯರಿಗೆ ಇತಿಹಾಸ ಹಾಗೂ ಸಾಹಿತ್ಯದಂತಹ ವಿಷಯಗಳನ್ನು ಕಲಿಸಬೇಕು" ಎಂದು ಅಭಿಪ್ರಾಯ ಪಟ್ಟಿತು.

೨) ಸೆಕೆಂಡರಿ ಎಜುಕೇಷನ ಕಮಿಟಿ(೧೯೫೨-೫೩) ಈ ಸಮಿತಿಯು ಇಬ್ಬರಿಗೂ ಸಮಾನ್ಯ ಶಿಕ್ಷಣ ಅವಕಾಶ ನೀಡಬೇಕು.

ಪ್ರಸ್ತುತ ಸಮಾಜಿಕ ಪರಿವರ್ತನೆಯ ಹಂತದಲ್ಲಿ ಸ್ತ್ರೀ ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ಪ್ರತ್ಯೇಕವಾಗಿ ಪರಿಗಣಿಸುವುದು ಸೂಕ್ತವಲ್ಲ ಎಂದು ಹೇಳಿತು.

ಹೀಗೆ ಹತ್ತು ಹಲವಾರು ಅಡೆತಡೆಗಳೊಂದಿಗೆ ಸಮಾಜದ ಮಧ್ಯೆ ಆರಂಭವಾದ ಶಿಕ್ಷಣ ಸ್ತ್ರೀಯರನ್ನು ಸದೃಢವನ್ನಾಗಿಸುತ್ತ ಹೋಯಿತು. ವರ್ಷದಿಂದ ವರ್ಷಕ್ಕೆ ಹೆಚ್ಚಾಗುತ್ತ ಹೋಗುತ್ತಿದ್ದ ಅನಕ್ಷರತೆ ಈ ಪಿಡುಗನ್ನು ಹೋಗಲಾಡಿಸಲು ಸಮೀತಿಯು ಕೇಲವು ಸುಧಾರಣ ಕ್ರಮಗಳನ್ನು ಸೂಚಿಸಿತು.

- ಮಹಿಳೆಯರನ್ನು ಕೀಳಾಗಿ ನೋಡುವ ಸಾಂಪ್ರದಾಯದ ಮನೋಭಾವವನ್ನು ಬದಲಾಯಿಸುವುದು.
- ಪಠ್ಯದಲ್ಲಿ ಮಹಿಳೆಯರ ಸಾಮರ್ಥ್ಯ ಹಾಗೂ ಆಸಕ್ತಿಗಳನ್ನು ಸಕಾರಾತ್ಮಕವಾಗಿ ಸೇರಿಸುವುದು.
- ಹುಡುಗರ ಶಾಲೆಯಲ್ಲಿ ಶಿಕ್ಷಕಿಯರನ್ನು, ಹುಡುಗಿಯರ ಶಾಲೆಯಲ್ಲಿ ಶಿಕ್ಷಕರನ್ನು ನೇಮಿಸವುದು.
- ಹೆಚ್ಚೆಚ್ಚಾಗಿ ಮಹಿಳಾ ಶಿಕ್ಷಕಿಯರನ್ನು ನೇಮಿಸುವ ಯೋಜನೆಯನ್ನು ಪರಿಶೀಲಿಸುವುದು.

2000 ದಶಕದಲ್ಲಿ ಮಹಿಳಾ ಶಿಕ್ಷಣದ ಬೆಳವಣಿಗೆ

ಮಹಿಳಾ ಸಮಾನತೆ, ಆಶಾಕಿರಣಕ್ಕೆ ಬೇಕಾಗುವ ಹೊಸ ಯೋಜನೆಗಳ ಪರಿಣಾಮವಾಗಿ ಮಹಿಳಾ ಶಿಕ್ಷಣ ಮಟ್ಟದಲ್ಲಿ ಸ್ವಲ್ಪ ಮಟ್ಟಿಗೆ ಪ್ರಗತಿಯನ್ನು ಸಾಧಿಸಿದೆ. ಸರ್ಕಾರ ಹೆಣ್ಣು ಮಕ್ಕಳ ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕೆ ಮೀಸಲಿಟ್ಟಿರುವ ಹಣ ಸ್ವಲ್ಪ ಮಟ್ಟಿಗೆ ಹೆಣ್ಣುಮಕ್ಕಳಿಗೆ ದೊರಕಬಹುದೆಂದು ಆಶಿಸಬಹುದು. 2000 ದಶಕದಲ್ಲಿ ಸ್ತ್ರೀ ಶಿಕ್ಷಣ ಪ್ರಗತಿ ಕಂಡುಬಂದರೂ ಅದರ ಗತಿ ತುಂಬಾ ನಿಧಾನವಾಗಿದೆ. ನಗರ ಪ್ರದೇಶಗಳಲ್ಲಿ ಶೇ. 46 ಪ್ರತಿಶತದಲ್ಲಿದ್ದಾರೆ ಮತ್ತು ಗ್ರಾಮೀಣ ಪ್ರದೇಶದಲ್ಲಿ ಶೇ. 30.73 ರಷ್ಟಿದೆ. ಆದ ಕಾರಣ ಗ್ರಾಮೀಣ ಭಾಗಗಳಲ್ಲಿ ಸಾಕ್ಷರತಾ ಮಹತ್ವವನ್ನು ಸಾರಬೇಕಾಗಿದೆ.

ಮಹಿಳಾ ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕಿರುವ ಅಡ್ಡಿಗಳು

ಎಲ್ಲಾ ಹಂತಗಳಲ್ಲಿ ಮಹಿಳಾ ಶಿಕ್ಷಣ ಪ್ರಗತಿ ಸಾಧಿಸಿದ್ದರೂ ನಿರೀಕ್ಷೆ ಮಾಡಿದಷ್ಟು ಆಗದಿರುವುದು ಕಂಡು ಬರುತ್ತದೆ. ಎಲ್ಲಾ ರೀತಿಯ ಅಡೆ ತಡೆಗಳಿಂದ ಮಹಿಳೆ ಹೊರಗೆ ಬಂದು ಸ್ವಂತ ನಿರ್ಧಾರ ತೆಗೆದುಕೊಂಡು ಉನ್ನತಿ ಸಾಧಿಸುವುದು. ಭಾರತದಂತಹ ದೇಶದಲ್ಲಿ ಸಾಧ್ಯವಾಗದ ಮಾತಾಗಿದೆ. ಪರಂಪರೆ ಧರ್ಮದ ಹಾಗೂ ಸಮಾಜದ ವ್ಯವಸ್ಥೆಯ ಮಧ್ಯದಲ್ಲಿ ಸಿಲುಕಿಕೊಂಡು ತನಗೆ ಬೇಕಾದ ಕನಿಷ್ಠ ಬೇಡಿಕೆಯನ್ನು ಪೂರೈಸಿಕೊಳ್ಳಲಾಗುತ್ತಿಲ್ಲ.

ಸ್ತ್ರೀ ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕೆ ವರ್ಣಾಶ್ರಮ, ಜಾತಿ ಪದ್ಧತಿಗಳು ಅಡ್ಡಿಯಾಗಿವೆ. ವರ್ಣಾರ್ಶಮಗಳು ಕೇವಲ ಪುರುಷರಿಗೆ ಅನ್ವಯವಾಗುವಂತೆ ರಚಿಸಲಾಗಿದ್ದರಿಂದ ಹಿಂದುಳಿದ ಸ್ತ್ರೀಯರಿಗೆ ಲಿಂಗ ಮತ್ತು ಜಾತಿಯ ಸಲುವಾಗಿ ತುಳಿತಕ್ಕೊಳಗಾಗಿದ್ದಾರೆ ಹಾಗೂ ಶಿಕ್ಷಣದಿಂದ ವಂಚಿತರಾಗಿರುವುದು ಕಂಡು ಬಂದಿದೆ. ಸ್ತ್ರೀಯನ್ನು ಸರಸ್ವತಿ ಎಂದೇ ಪೂಜಿಸುವ ನಮ್ಮ ದೇಶದ ಸಂಸ್ಕೃತಿ. ಮನೆಯ ಸ್ತ್ರೀಯರನ್ನ

ತುಚ್ಛವಾಗಿ ಕಾಣುವ ಮತ್ತು ಅವರಿಗೆ ಶಿಕ್ಷಣದ ಅವಶ್ಯಕತೆ ಇಲ್ಲ ಎಂದು ಪ್ರತಿಪಾದಿಸುವ ಸಮಾಜದ ಇನ್ನೊಂದು ರೂಪವಾಗಿದೆ.

ಕೆಲವರು ಆರ್ಥಿಕವಾಗಿ ಪ್ರಬಲರಾಗಿರುವುದಿಲ್ಲ, ದಿನ ಗೂಲಿಯ ಮೇಲೆ ಜೀವನ ನಡೆಸುವುದೇ ಕಷ್ಟಕರವಾದ ಸಂದರ್ಭದಲ್ಲಿ ಹೆಣ್ಣು ಮಕ್ಕಳಿಗೆ ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ಕೊಡಿಸುವುದು ಯೋಚನೆ ಮಾಡುವ ಹಾಗಿಲ್ಲ. ಇನ್ನು ಕೇಲವರು ಹೆಣ್ಣು ಮಕ್ಕಳನ್ನು ಶಾಲೆಗೆ ಕಳುಹಿಸಿದರೆ ಅವರು ಅತ್ಯಾಚಾರಕೊಳಗಾದರೆ ಸಮಾಜದ ದೃಷ್ಠಿಯೇ ಅವರಿಗಾಗಿ ಬದಲಾಗಿ ಬಿಡುವುದು.

ಚಿಕ್ಕ ವಯಸ್ಸಿನಲ್ಲಿ ವಿವಾಹ, ಅರ್ಧದಲ್ಲಿಯೇ ಶಿಕ್ಷಣಕ್ಕೆ ಕತ್ತರಿ ಬೀಳುವುದು. ಇನ್ನು ಅಕ್ಕನ ಮದುವೆಯಾಗಿ ಬಾಣಾಂತಕ್ಕೆ ಮನೆಗೆ ಬಂದಾಗ ತಂಗಿಯು ಅವಳ ಬಾಣಂತನದ ಕೆಲಸ ಕಾರ್ಯಗಳಲ್ಲಿ ತೊಡಗುವಳು. ಇಂಥ ಸಮಯದಲ್ಲಿ ಶಿಕ್ಷಣ ಹಿಂದೆ ಉಳಿಯುವುದು. ಒಂದೇ ಕುಟುಂಬದಲ್ಲಿ ನಾಲ್ಕು ಹೆಣ್ಣುಮಕ್ಕಳಿದ್ದು, ಒಂದು ಗಂಡು ಮಗ ಇದ್ದಾಗ ಸಂಪೂರ್ಣವಾಗಿ ಆ ಗಂಡುಮಗುವಿಗೆ ಎಲ್ಲ ರೀತಿಯ ಸೌಕರ್ಯಗಳನ್ನು ಒದಗಿಸಿ, ನಾಲ್ಕು ಹೆಣ್ಣು ಮಕ್ಕಳಲ್ಲಿ ಒಬ್ಬಳಿಗೆ ಶಿಕ್ಷಣ ಕೊಡಿಸಿ ಇನ್ನೊಳಿದ ಮೂರು ಹೆಣ್ಣು ಮಕ್ಕಳಿಗೆ ಮನೆಕೆಲಸಕ್ಕೆ ಬಳಸಿಕೊಳ್ಳುವುದು ಮತ್ತು ಬೇಗ ಬೇಗ ಮದುವೆ ಮಾಡಿ ಜವಾಬ್ದಾರಿಯಿಂದ ಮುಕ್ತಿ ಪಡೆಯುವುದಾಗಿರುತ್ತದೆ.

ಹೀಗೆ ಹೆಣ್ಣು ಶಾಲೆಗೆ ಹೋಗದಿರುವುದಕ್ಕೆ ಸಾವಿರಾರು ಅಡೆ ತಡೆಗಳು ಕಾರಣವಾಗುವುದು ಆದರೆ ಈಗ ಹೆಣ್ಣು ಮಕ್ಕಳು ಉಧ್ಯೋಗ ಮಾಡಲೇಬೇಕಾದ ಪರಿಸ್ಥಿತಿ ಬಂದಿರುವುದರಿಂದ ಶಿಕ್ಷಣವನ್ನು ಹೊಂದಲೇ ಬೇಕಾದಂತಹ ಅನಿವಾರ್ಯತೆ ಒದಗಿ ಬಂದಿದೆ. ಆದರೂ ಇದು ನಗರ ಪ್ರದೇಶಗಳಿಗೆ ಹೆಚ್ಚು ಸೀಮಿತವಾಗಿರುವುದನ್ನು ಕಾಣುತ್ತೇವೆ.

ಆಕರ ಗ್ರಂಥಗಳು

- ಮಹಿಳಾ ಅಧ್ಯಯನ – ಡಾ. ಹೇಮಲತಾ ಎಚ್.ಎಮ್.
- ಪಿಎಚ್.ಡಿ ಮಹಾಪ್ರಬಂಧ ಪುಸಕ್ತ ರೂಪದಲ್ಲಿ
- ೧೬ ವರ್ಷ ಅಧ್ಯಾಪಕರಾಗಿ ಕಾರ್ಯ ನಿರ್ವಹಿಸುತ್ತಿರುವೆ
- ಹಿಂದಿ ಭಾಷೆಯಲ್ಲಿ – ೪ ಕಥಾ ಸಂಕಲನ
- ಕನ್ನಡ ಭಾಷೆಯಲ್ಲಿ – ೧ ಕಥಾ ಸಂಕಲನ

- ಹಿಂದಿ ಪಠ್ಯಕ್ರಮದಲ್ಲಿ ಪುಸ್ತಕಗಳ ಸಂಪಾದಕಿಯಾಗಿ ಸೇವೆ ಸಲ್ಲಿಸಿದ್ದೆನೆ
- ಸುಮಾರು ಕಥೆಗಳ ಅನುವಾದ – ಕನ್ನಡದಿಂದ ಹಿಂದಿ ಮತ್ತು ಹಿಂದಿಯಿಂದ ಕನ್ನಡಕ್ಕೆ
- 2 ರಾಜ್ಯ ಪ್ರಶಸ್ತಿ
- 1 ರಾಷ್ಟ್ರ ಪ್ರಶಸ್ತಿ
- 1 ಅಂತರಾಷ್ಟ್ರೀಯ ಪ್ರಶಸ್ತಿ (ನೇಪಾಳದ ಅವಧಿ ಸಂಸ್ಥಾನದಿಂದ)
- ಹವ್ಯಾಸಗಳು – ಒದುವುದು, ಕಥೆ ಬರೆಯುವುದು, ಕವಿತೆ ರಚನೆ, ಸಂಗೀತ, ಆಟ ಇತ್ಯಾದಿ

ಡಾ. ಮಂಜುಳಾ ಚವ್ಹಾಣ

ಹಿಂದಿ ವಿಭಾಗಾಧ್ಯಕ್ಷರು,

ಬಿ.ವ್ಹಿ.ವ್ಹಿ.ಸಂಘ
ಅಕ್ಕಮಹಾದೇವಿ ಮಹಿಳಾ ಕಲಾ, ವಿಜ್ಞಾನ, ವಾಣಿಜ್ಯ ಮಹಾವಿದ್ಯಾಲಯ,
ಬಾಗಲಕೋಟ – 587101
ಕರ್ನಾಟಕ.

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 48-52

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤਕ ਪਰਿਪੇਖ

-Lovepreet Singh

Research Scholar, Department of modern indian language, Aligarh muslim university, Aligarh

ਸੁਹਜ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਵਸਤੂਆਂ ਦੀ ਕਲਾਤਮਿਕਤਾ ਅਤੇ ਸੁੰਦਰਤਾ ਨਾਲ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਕਲਾ ਦਾ ਓਹ ਅਧਿਐਨ ਹੈ ਜਿਸ ਰਾਹੀਂ ਕਲਾ ਚੇਤਨਾ, ਚੇਤਨਤਾ ਪ੍ਰਫੁਲਿੱਤ ਅਤੇ ਰਸ ਭਰਪੂਰ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਹਰ ਕਲਾਕ੍ਰਿਤੀ ਦਾ ਇਕ ਰੂਪ ਹੈ ਜਿਸ ਦਾ ਠੋਸ ਸਿਧਾਂਤ ਹੈ।

ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਸ਼ਬਦ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਚ ਅੰਗ੍ਰੇਜ਼ੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਸ਼ਬਦ 'ਐਸਥੇਟਿਕਸ'(aesthetics) ਦੇ ਸਮਾਨਾਰਥੀ ਰੂਪ ਵਿਚ ਆਇਆ। Aesthetics ਸ਼ਬਦ ਰੋਮਨ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਮੂਲ ਸ਼ਬਦ ਐਸਥੇਟਿਕਾ ਤੋਂ ਬਣਿਆ ਹੈ। ਸ਼ਬਦ ਦੇ ਕੋਸ਼ਗਤ ਅਰਥ ਅਨੁਸਾਰ ਸੁਹਜ ਦਰਸ਼ਨ ਦੀ ਓਹ ਸ਼ਾਖਾ ਹੈ ਜੋ ਸੁੰਦਰਤਾ ਦੇ ਅਸੂਲਾਂ ਅਤੇ ਸਿਧਾਂਤਾਂ ਦੀ ਉਪਯੋਗਿਤਾ ਨੂੰ ਸਪਸ਼ਟ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਪ੍ਰੋ. ਬੇਅਰਡਸਲੇ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ :-

" ਸੁਹਜ ਫਿਲਾਸਫੀ ਦੀ ਇਕ ਸ਼ਾਖਾ ਹੈ ਜਿਸ ਦੇ ਵਿਸ਼ੇ ਕਲਾ ਦੀਆਂ ਸਮੱਸਿਆਂਵਾਂ ਹਨ । ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਸੰਕਲਪ ਤਰਕ-ਵਿਤਰਕ ਅਤੇ ਵਾਦ ਵਿਵਾਦ ਦੁਆਰਾ ਸੁਲਝਾਏ ਜਾਂਦੇ ਹਨ। ਜਿਵੇਂ ਕਲਾ ਤੇ ਸੁੰਦਰਤਾ, ਦੁਖਾਂਤ ਤੇ ਮੈਲੋਡਰਾਮਾ, ਸੁੰਦਰਤਾ ਤੇ ਕੋਝ, ਕਲਾ ਦਾ ਕਾਰਜ, ਪ੍ਰਭਾਵ ਤੇ ਅਭਿਵਿਅਕਤੀ , ਰੁਮਾਂਸ ਤੇ ਯਥਾਰਥਕਤਾ, ਇਤਿਆਦਿ।"(1)

ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਤੱਤਾਂ ਨਾਲ ਹੋਇਆ ਅਤੇ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੁਆਰਾ ਬਣਾਈ ਇਸ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦੇ ਹਰੇਕ ਤੱਤ ਵਿਚ ਸੁਹਜ ਸਮਾਇਆ ਹੋਇਆ। ਜਿਹੜਾ ਕਿ ਭਿੰਨ-ਭਿੰਨ ਰੂਪਾਂ ਵਿੱਚ ਆਨੰਦ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਬਰਸਾਤ ਦੀ ਰੁੱਤ ਵਿੱਚ ਆਸਮਾਨ ਤੇ ਬਣਿਆ ਸੱਤ ਰੰਗਾ ਇੰਦਰਧਨੁਸ਼ ਜਾਂ ਬਸੰਤ ਦੀ ਰੁੱਤ ਵਿੱਚ ਰੁੱਖਾਂ ਨੂੰ ਲੱਗੇ ਹੋਏ ਨਵੇਂ ਫਲ ਅਤੇ ਫੁੱਲ ਮਨੁੱਖੀ ਮਨ ਨੂੰ ਖੁਸ਼ੀ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਸੁਹਜ ਕੇਵਲ ਬਾਹਰੀ ਜਗ ਵਿਚ ਹੀ ਨਹੀਂ ਬਲਕਿ ਆਂਤਰਿਕ ਜਗਤ ਵਿੱਚ ਮਜੂਦ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਵਸਤੂਆਂ ਵਿੱਚ ਰੁਚੀ ਪੈਦਾ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਸੁਹਜ ਤੋਂ ਬਗੈਰ ਵਸਤੂ ਨੀਰਸ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਅਨੁਭਵ ਦੇ ਅਧਾਰ ਤੇ ਹੀ ਵਸਤੂ ਵਿਚ ਸੁਹਜ ਨੂੰ ਦੇਖ ਸਕਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਚੇਤਨ ਜਾਂ ਅਵਚੇਤਨ ਰੂਪ ਵਿਚ ਸਵੀਕਾਰਦਾ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਇੱਕ ਭੌਤਿਕ ਯਥਾਰਥਕ ਹੋਣ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ ਮਾਨਸਿਕ ਅਨੁਭਵ ਵੀ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਦੇ ਭੌਤਿਕ ਯਥਾਰਥ ਨੂੰ ਅਸੀਂ ਵਿਵਹਾਰਿਕ ਸੁਹਜ ਅਤੇ ਮਾਨਸਿਕ ਅਨੁਭਵ ਨੂੰ ਆਤਮਕ ਸੁਹਜ ਮੰਨ ਸਕਦੇ ਹਾਂ।

ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਨੂੰ ਪਰਿਭਾਸ਼ਿਤ ਕਰਦੇ ਹੋਏ 'philosophy of fine arts' ਦੀ ਭੂਮਿਕਾ ਵਿਚ ਲਿਖਿਆ ਹੈ ਕਿ:-

"ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਸੂਰਜ ਦੇ ਸੰਪੂਰਨ ਖੇਤਰ ਨਾਲ ਮੰਨਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ, ਪਰੰਤੂ ਸਹੀ ਅਰਥਾਂ ਵਿੱਚ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਲਲਿਤ ਕਲਾਵਾਂ ਦੇ ਮਾਧਿਅਮ ਤੋਂ ਅਭਿਵਿਅਕਤ ਸੁਹਜ ਨਾਲ ਹੈ।"(2)

ਸੁਹਜ ਸਾਸਤਰ ਦੇ ਨਾਮਕਰਣ ਵਿੱਚ ' ਬਾਮਗਟਨ ' ਦਾ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਸਥਾਨ ਹੈ। ਬਾਮਗਟਨ ਦਾ ਜਨਮ 1714 ਈਸਵੀ ਵਿੱਚ ਬਰਲਿਨ ਵਿਚ ਹੋਇਆ। ਬਾਮਗਟਨ ਆਪਣੇ ਗੁਰੂ ਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਦਾ ਸਮਰਥਕ ਸੀ। ਉਸ ਨੇ ਸਭ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਨੂੰ ਵਿਗਿਆਨਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਬਾਮਗਟਨ ਨੇ 1750 ਈਸਵੀ ਵਿੱਚ 'Aesthetics' ਨਾਂ ਦੀ ਪੁਸਤਕ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਿਤ ਕੀਤੀ। ਜਿਸ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਨੂੰ ਵਿਗਿਆਨਕ ਵਿਧੀ ਦੇ ਤੌਰ ਤੇ ਅਪਨਾਇਆ ਗਿਆ। ਇਸ ਗੱਲ ਤੋਂ ਇਹ ਸਪਸ਼ਟ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਬਾਮਗਟਨ ਨੂੰ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਜਨਮ ਦਾਤਾ ਕਿਹਾ ਜਾਵੇ, ਤਾਂ ਉਸ ਵਿਚ ਕੋਈ ਅਤਿਕਥਨੀ ਨਹੀਂ ਹੋਵੇਗੀ।

Aesthetic ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਚ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦੇ ਨਾਂ ਨਾਲ ਜਾਣਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਹਿੰਦੀ ਵਿਚ ਇਸ ਸ਼ਬਦ ਨੂੰ ਸੌਂਦਰਯ ਸ਼ਾਸਤਰ , ਸੌਂਦਰਯ ਦਰਸ਼ਨ, ਸੌਂਦਰਯ ਵਿਗਿਆਨ, ਕਲਾ ਸ਼ਾਸਤਰ, ਕਲਾ ਦਰਸ਼ਨ, ਬੋਧ ਸ਼ਾਸਤਰ, ਰਸ ਸ਼ਾਸਤਰ ਅਤੇ ਉਰਦੂ ਵਿਚ ਇਸ ਨੂੰ ਜੁਮਾਲੀਆਤ ਨਾਂ ਨਾਲ ਜਾਣਿਆ ਜਾਂਦਾ।

ਸੁਹਜ ਉਹ ਭਾਵ ਹੈ ਜਿਸਦੇ ਨਾਲ ਵਿਅਕਤੀ ਦਾ ਮਨ ਪ੍ਰਸੰਨ ਅਤੇ ਪ੍ਰਫੁਲਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇੰਦਰੀਆਂ ਤੋਂ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕੀਤੇ ਭਾਵਾਂ ਤੋਂ ਮਨੁੱਖੀ ਮਨ ਨੂੰ ਇਕ ਆਨੰਦ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਭਾਵ ਹੀ ਸੁਹਜ ਤੱਤ ਅਨੁਭਵ ਦਾ ਵਿਸ਼ਾ ਹੈ ਜਿਸ ਤੋਂ ਆਨੰਦ, ਪ੍ਰਸੰਨਤਾ, ਪ੍ਰਫੁੱਲਤਾ ਨੂੰ ਮਹਿਸੂਸ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।

ਭਾਰਤੀ ਸੌਂਦਰਯ ਸ਼ਾਸ਼ਤਰ ਵਿਚ ਕਲਾ ਦੇ ਤਿੰਨ ਪ੍ਰਯੋਜਨ ਨਿਰਧਾਰਤ ਕੀਤੇ ਗਏ ਹਨ:- ਸਤਿਅਮ, ਸ਼ਿਵਮ, ਸੁੰਦਰਮ। ਅਰਥਾਤ ਕਲਾ ਉਹ ਹੈ ਜੋ ਸੱਚ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰੇ, ਮੰਗਲਕਾਰੀ ਹੋਵੇ ਅਤੇ ਦੇਖਣ ਵਿੱਚ ਸੋਹਣੀ ਲੱਗੇ।ਭਾਰਤੀ ਪਰੰਪਰਾ ਵਿਚ ਸੁਹਜ ਦਾ ਵਿਵੇਚਨ ਪੁਰਾਤਨ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਹੁੰਦਾ ਆ ਰਿਹਾ ਹੈ।ਸੁਹਜ ਦਾ ਵਿਵੇਚਨ ਭਾਰਤ ਦੇ ਪ੍ਰਾਚੀਨ ਗ੍ਰੰਥ ਰਿਗਵੇਦ ਤੋਂ ਹੀ ਉਪਲਬੱਧ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਸੁਹਜ ਦੇ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਸਮਾਨ ਅਰਥੀ ਸ਼ਬਦ ਜਿਵੇਂ ਕਾਂਤ,ਮਨੋਰਮ, ਕਾਂਤੀ, ਆਭਾ,ਸੁਆਦ,ਕਲਿਆਣ ਆਦਿ। ਵੈਦਿਕ ਯੁੱਗ ਵਿੱਚ ਸੁਹਜ ਇਕ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਸਰੂਪ ਧਾਰਨ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਿਆ, ਪਰ ਉਸ ਵਿੱਚ ਸੁਹਜ ਦੇ ਚਿੰਤਨ ਦੀ ਵਿਕਸਿਤ ਪਰੰਪਰਾ ਜ਼ਰੂਰ ਮੌਜੂਦ ਸੀ। ਅਧਿਆਤਮਕ ਨਜ਼ਰੀਏ ਤੋਂ ਉਸ ਯੁੱਗ ਵਿਚ ਪ੍ਰਾਪਤ ਸੁੰਦਰਤਾ ਕੋਈ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਮਹੱਤਵ ਨਹੀਂ ਸੀ ਰੱਖਦੀ ਕਿਉਂਕਿ ਅਸਲ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਉਸ ਸਮੇਂ ਦੇ ਵਿਦਵਾਨ ਅੰਤਰ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਤੋਂ ਪ੍ਰਭੂ ਭਗਤੀ ਭਾਵਨਾ ਵਿੱਚ ਵਧੇਰੇ ਲੀਨ ਸੀ। ਪ੍ਰਕਰਤਿਕ ਸੁੰਦਰਤਾ ਦੇ ਪੱਖ ਤੋਂ ਭਾਰਤ ਇਕ ਅਮੀਰ ਦੇਸ਼ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਸੁੰਦਰਤਾ ਤੋਂ ਚੰਗੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਜਾਣੂ ਹੈ। ਪੁਰਾਤਨ ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਵਿੱਚ ਬੇਸ਼ੱਕ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਤੇ ਵਿਸਤ੍ਰਿਤ ਚਰਚਾ ਨਹੀਂ ਹੋਈ ਪਰ ਵੈਦਿਕ ਸਾਹਿਤ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਦਰਸ਼ਨ, ਕਾਵਿ ਸ਼ਾਸਤਰ, ਕਲਾ ਸਿਰਜਣਾ ਆਦਿ ਸਭ ਵਿੱਚ ਇਸ ਦੇ ਸੰਕੇਤ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦੇ ਹਨ।

ਪੱਛਮ ਵਿੱਚ ਸੁਹਜ ਦੀਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਦਾ ਅਧਿਐਨ ਦਰਸ਼ਨ ਸ਼ਾਸਤਰ ਵਿਚ ਸੁਕਰਾਤ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਹੁੰਦਾ ਆ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਪੱਛਮ ਵਿੱਚ ਲੰਬੇ ਸਮੇਂ ਤੱਕ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਸਬੰਧ ਦਰਸ਼ਨ ਸ਼ਾਸਤਰ ਨਾਲ ਹੀ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਪਲੈਟੋ ਨੇ ਵੀ ਇਨ੍ਹਾਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ ਨੂੰ ਸਿਧਾਂਤਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਪੇਸ਼ ਕਰਨ ਦੇ ਜਤਨ ਕੀਤੇ।

" ਸਭ ਤੋ ਪਹਿਲਾਂ ਸੁਹਜ ਨੂੰ ਆਂਤਰਿਕ ਤੱਤ ਮੰਨਣ ਵਾਲਾ ਵਿਦਵਾਨ ਪਲੈਟੋ ਹੈ ਜੋ ਅਧਿਆਤਮਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦਾ ਧਾਰਨੀ ਹੈ। ਪਲੈਟੋ ਦਾ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ ਜੇ ਕੋਈ ਵਸਤੂ ਸੁੰਦਰ ਹੈ ਉਹ ਇਸ ਕਰਕੇ ਸੁੰਦਰ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਰੱਬੀ ਸੁੰਦਰਤਾ ਦਾ ਹੀ ਇਕ ਹਿੱਸਾ ਹੈ।"(3)

ਅੰਗਰੇਜੀ ਕਵੀ ਕੀਟਸ ਨੇ ਸੁੰਦਰਤਾ ਨੂੰ ਪਰਿਭਾਸ਼ਿਤ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਕਿਹਾ ਹੈ ਕਿ:-

" ਸੁੰਦਰ ਵਸਤੂ ਸਦਾ ਆਨੰਦ ਦਿੰਦੀ ਹੈ, ਇਸ ਲਈ ਮਨੁੱਖ ਇਸ ਦੀ ਖੋਜ ਵਿੱਚ ਵਰ੍ਹੇ ਗੁਜ਼ਾਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਸੁੰਦਰਤਾ ਦੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਨੂੰ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰਨ ਲਈ ਸਾਡੀਆਂ ਇੰਦਰੀਆਂ ਦਾ ਸਹਿਯੋਗੀ ਹੋਣਾ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ। ਇਹ ਸਾਰਾ ਕੁਝ ਰੁਚੀ ਉੱਤੇ ਨਿਰਭਰ ਕਰਦਾ ਹੈ।"(4)

ਪੱਛਮ ਦੇ ਮਹਾਨ ਵਿਦਵਾਨ ਅਰਸਤੂ ਨੇ ਕਲਾਕਾਰ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਦਾ ਸਨਮਾਨ ਕਿਹਾ ਹੈ। ਅਰਸਤੂ ਦੇ ਵਿਚਾਰ ਅਨੁਸਾਰ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਦਾ ਨਿਰਮਾਣ ਬਾਹਰੀ ਸ਼ਕਤੀਆਂ ਕਾਰਨ ਹੀ ਨਿਯੰਤਰਣ ਵਿਚ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਜਦੋਂ ਕਿ ਕਲਾਕਾਰ ਧਾਤੂ ਜਾਂ ਪੱਥਰ ਨੂੰ ਬਾਹਰੀ ਯਤਨਾਂ ਨਾਲ ਆਕਾਰ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਉਦਾਹਰਣ ਦੇ ਲਈ ਜਿਵੇਂ ਕੋਈ ਮੂਰਤੀਕਾਰ ਆਪਣੇ ਜਤਨਾਂ ਨਾਲ ਇਕ ਪੱਥਰ ਨੂੰ ਸਮੂਰਤ ਕਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਅਰਸਤੂ ਨੇ ਕਾਵਿ ਅਤੇ ਦਰਸ਼ਨ ਦੇ ਸਬੰਧਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਉਘਾੜ ਕੇ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ। ਉਸ ਅਨੁਸਾਰ ਕਾਵਿ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਦਾ ਚਿਤਰਨ ਕਰਨ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਜੀਵਨ ਦੀ ਯਥਾਰਥਕਤਾ ਨੂੰ ਵੀ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਅਰਸਤੂ ਨੇ ਕਾਵਿ ਨੂੰ ਇਤਿਹਾਸ ਨਾਲੋਂ ਮਹਾਨ ਦੱਸਿਆ ਹੈ। ਕਿਉਂਕਿ ਇਤਿਹਾਸ ਬੀਤੇ ਹੋਏ ਸਮੇਂ ਦਾ ਵਰਨਣ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਕਾਵਿ ਭਵਿੱਖ ਵਿੱਚ ਵਾਪਰਨ ਵਾਲੇ ਦੀ ਤਸਵੀਰ ਨੂੰ ਵੀ ਉਘਾੜ ਦਾ ਹੈ।

ਸੁਹਜ ਚੇਤਨ ਅਤੇ ਅਵਚੇਤਨ ਮਨ ਦੀਆਂ ਦੋਵੇਂ ਪ੍ਰਵਰਤੀਆਂ ਨਾਲ ਸੰਵਾਦ ਰਚਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਨਾਲ ਸਬੰਧਿਤ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨ ਦਾ ਸਬੰਧ ਕਲਾ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਕਲਾ ਦੀ ਅਨੁਭੂਤੀ ਤੱਕ ਪੁੱਜਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਵਿਚ ਵਸਤੂ ਦਾ ਸੋਹਣਾ ਜਾਂ ਕਰੂਪ ਲੱਗਣਾ ਮਨੁੱਖੀ ਮਨ ਦੀ ਰੁਚੀ ਤੇ ਨਿਰਭਰ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਮਾਨਸਿਕ ਸੰਰਚਨਾ ਤੋਂ ਹੀ ਵਸਤੂ ਦਾ ਸੁਹੱਪਣ ਉਘੜਦਾ ਹੈ। ਵਸਤੂਆਂ ਦੇ ਗੁਣ ਮਨੁੱਖੀ ਸਵੈ ਗੁਣਾਂ ਨੂੰ ਨਿਰਧਾਰਤ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਇਸ ਧਾਰਨਾ ਤੋਂ ਇਹ ਸਪਸ਼ਟ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖੀ ਮਨ ਨਿਰਜਿੰਦ ਵਸਤੂਆਂ ਤੋਂ ਵੀ ਸੁਹਜ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮਨੋਵਿਗਿਆਨ ਦੀ ਤੁਲਨਾ ਵਿੱਚ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਦਾਇਰਾ ਬਹੁਤ ਸੀਮਤ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਕਲਾਵਾਂ ਦਾ ਘੇਰਾ ਬਹੁਤ ਵਿਸ਼ਾਲ ਹੈ।ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਸਿਰਫ ਕਲਾ ਤੱਕ ਹੀ ਸੀਮਤ ਨਹੀਂ ਰਹਿੰਦਾ ਸਗੋਂ ਕਲਾ ਦੇ ਅਨੇਕਾਂ ਵਿਸ਼ਿਆਂ ਨਾਲ ਵੀ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਸੰਗੀਤ, ਚਿੱਤਰ, ਮੂਰਤੀ ਆਦਿ।

ਕਲਾਕਾਰ ਸਮਾਜ ਤੋ ਕਿ ਜੋ ਅਨੁਭਵ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਉਸੇ ਅਨੁਭਵ ਦੇ ਰਾਹੀਂ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਗਤੀ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਦੀ ਸੁਹਜ ਮੂਲ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਸਮਾਜਿਕ ਵਿਕਾਸ ਅਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸੰਬੰਧਾਂ ਤੋਂ ਦੂਰ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੀ। ਕਿਸੇ ਵੀ ਸਮਾਜ

ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਦੇ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਸੁਹਜ ਮੂਲ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਓਹਦੇ ਸਮੁੱਚੇ ਇਤਿਹਾਸਕ ਵਿਕਾਸ ਦਾ ਹੀ ਪਰਿਣਾਮ ਹੈ। ਕਲਾਕਾਰ ਹੋਰਨਾਂ ਮਨੁੱਖਾਂ ਨੂੰ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦੇ ਵੱਖਰੇ ਨਜ਼ਰੀਏ ਨਾਲ ਦੇਖਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਆਪਣੀ ਸੰਵੇਦਨਾ ਰਾਹੀਂ ਜੋ ਕੁਝ ਸਿਰਜਦਾ ਹੈ ਉਸ ਨਾਲ ਇਕ ਆਨੰਦ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਸਿਰਜਣਾ ਅਤੇ ਸੰਵੇਦਨਾ ਦੇ ਆਪਸੀ ਸੁਮੇਲ ਨਾਲ ਹੀ ਸੁਹਜ ਦੀ ਉਤਪਤੀ ਹੁੰਦੀ ਹੈ।

ਕਲਾ ਸਬੰਧੀ ਅਰਸਤੂ ਆਪਣੇ ਵਿਚਾਰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ ਕਲਾ ਨੂੰ ਸਿਰਜਣਾ ਮੁੱਖੀ ਆਖਦਾ ਹੈ ਉਸ ਅਨੁਸਾਰ:-
" ਕਲਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਕ੍ਰਿਤੀ ਦੀ ਨਕਲ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਸਿਰਜਣਾ (ਅਨੁਕਰਨ) ਕਹਿਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ।"(5)

ਕਾਵਿ ਨਾਲ ਸਬੰਧ ਰੱਖਣ ਵਾਲੇ ਸੁਹਜਾਤਮਕ ਰੂਪਾਂ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਭਾਵ ਤੇ ਰੂਪਕ ਪੱਖ ਤੋਂ ਵਸਤੂ ਦੇ ਗੁਣ ਨਾਲ ਜੁੜਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਕਾਵਿ ਵਿੱਚ ਸੁਹਜ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਆਨੰਦ ਨਾਲ ਹੈ ਅਤੇ ਰੂਪ ਦਾ ਸੰਬੰਧ ਵਸਤੂ ਦੇ ਗੁਣ ਨਾਲ ਹੈ । ਕਾਵਿ ਵਿਚ ਸੁਹਜ ਦਾ ਨਿਰਣਾ ਕਾਵਿ ਸ਼ਾਸਤਰ ਤੋ ਮਿਲਦਾ ਹੈ। ਜਿਸਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਕਾਵਿ ਵਿੱਚ ਅਲੰਕਾਰ , ਛੰਦ, ਸੰਗੀਤ, ਚਿੱਤਰ ਆਦਿ ਦਾ ਪ੍ਰਤੱਖ ਪ੍ਰਭਾਵ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਕਲਾ ਦੀਆਂ ਹੋਰ ਕਲਾਵਾਂ ਜਿਵੇਂ ਮੂਰਤੀ ਕਲਾ, ਚਿੱਤਰਕਾਰੀ, ਇਮਾਰਤ ਸਾਜੀ ਆਦਿ ਪ੍ਰੱਤਖਣ ਤੋਂ ਹੀ ਆਨੰਦ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ। ਕਵਿਤਾ ਵਿਚ ਸੁਹਜ ਕਿਵੇਂ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਇਸ ਦਾ ਅੰਦਾਜਾ ਪ੍ਰੋ. ਮੋਹਨ ਸਿੰਘ ਦੀਆਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਸਤਰਾਂ ਤੋਂ ਲਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ:-

" ਕਵਿਤਾ ਸੁੰਦਰਤਾਈ ਉੱਚੇ ਨਛੱਤ੍ਰੀਂ ਵਸਦੀ
ਆਪਣੇ ਸੰਗੀਤ ਲਹਿਰੇ ਅਪਣੇ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਲਸਦੀ
ਇਕ ਸ਼ਾਮ ਨੂੰ ਏ ਓਥੋਂ ਹੇਠਾਂ ਪਲਮਦੀ ਆਈ
ਰਸ ਰੰਗ ਨਾਲ ਕੰਬਦੀ ਸੰਗੀਤ ਥਰਥਰਾਈ।" (6)

ਸੂਰਜ ਇਕ ਪਸਾਰੀ ਨਾ ਹੋ ਕੇ ਬਹੁ-ਪਸਾਰੀ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਦਾ ਕੋਈ ਮਿੱਥਿਅਕ ਆਧਾਰ ਨਹੀਂ ਹੈ ਕਿ ਇਸ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਸੈਂਚੇ ਵਿੱਚ ਪਾਕੇ ਦੇਖਿਆ ਜਾਵੇ ਤੇ ਓਸਦੇ ਗੁਣਾਂ, ਔਗੁਣਾਂ ਦੀ ਪੜਤਾਲ ਕੀਤੀ ਜਾਵੇ। ਕੋਈ ਵਸਤੂ ਰੂਪ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਹੀ ਕੋਈ ਵਸਤੂ ਭਾਵ ਦੇ ਅਧਾਰ ਤੇ ਸੁਹਜ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਜਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਇੱਕ ਕੋਇਲ ਰੂਪਗਤ ਅਧਾਰ ਤੇ ਕੋਈ ਸੁਹਜ ਨਹੀਂ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰਦੀ ਕਿਉਂਕਿ ਉਸ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਉਸ ਦਾ ਕੋਈ ਸੁਹੱਪਣ ਨਜ਼ਰ ਨਹੀਂ ਆਉਂਦਾ ਪਰ ਉਹ ਆਪਣੀ ਸੁਰੀਲੀ ਅਵਾਜ਼ ਸਦਕਾ ਸਭਨਾਂ ਦੇ ਦਿਲਾਂ ਨੂੰ ਮੋਹ ਲੈਂਦੀ। ਕੋਇਲ ਰੂਪ ਦੇ ਆਧਾਰ ਤੇ ਸੁੰਦਰ ਨਾ ਹੋ ਕੇ ਭਾਵਾਂ ਦੇ ਰਾਹੀਂ ਸੁਹਜ ਸਿਰਜਦੀ ਹੈ।ਭਾਵ ਉਹ ਵੇਗ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿੱਚ ਜ਼ਜਬੇ,ਵਲਵਲੇ,ਤਰੰਗ ਅਤੇ ਉਤੇਜਨਾ ਸਮਾਈ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਕੁਝ ਮਨੁੱਖ ਅਧਿਆਤਮਿਕਤਾ ਦੇ ਧਾਰਨੀ ਹੋ ਕੇ ਨੈਤਿਕ ਪੱਖੋਂ ਉੱਚਾ ਉਠ ਕੇ ਇਸ ਪਦਾਰਥਕ ਜਗਤ ਨੂੰ ਨਕਾਰਦੇ ਹਨ। ਪਰ ਕੁਝ ਲੋਕਾਂ ਦਾ ਸੁਹਜ ਕੇਵਲ ਪਦਾਰਥਕ ਜਗਤ ਵਿਚ ਹੀ ਹੈ। ਉਰਦੂ ਦਾ ਸਾਇਰ ਉਮਰ ਖਿਆਮ ਆਪਣੀ ਇੱਕ ਰਵਾਈ ਵਿਚ ਆਪਣੇ ਵਿਚਾਰ ਵਿਅਕਤ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ:-

" ਜੋ ਸਮਾਂ ਅਸੀਂ ਮਸੀਤ ਵਿਚ ਨਸ਼ਟ ਕੀਤਾ ਹੈ, ਉਨ੍ਹਾਂ ਸਮਾਂ ਮੈਅ ਖਾਨੇ ਵਿਚ ਪੀਣ ਤੇ ਮਸਤ ਰਹਿਣ ਵਿਚ ਸਫਲ ਕਰੀਏ।" (7)

ਕਲਪਨਾ ਕਲਾ ਦੇ ਹਰ ਇੱਕ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਸੁਹਜ ਪੈਦਾ ਕਰਨ ਵਿੱਚ ਆਪਣੀ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਕਲਪਣਾ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅਮੂਰਤ ਭਾਵਾਂ ਨੂੰ ਸਮੂਰਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਇਹ ਗੱਲ ਸੱਚ ਹੈ ਕਿ ਕੋਰੀ ਕਲਪਨਾ ਨੂੰ ਸੁਹਜ ਜਾਂ ਆਨੰਦ ਨਹੀਂ ਆਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ। ਕਲਪਨਾਂ ਦਾ ਕੋਈ ਵੀ ਰੂਪ ਹੋਵੇ ਉਸ ਦਾ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਯਥਾਰਥ ਨਾਲ ਕਿਤੇ ਨਾ ਕਿਤੇ ਮੇਲ ਹੋਣਾ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ। ਜਿਵੇਂ ਕੋਈ ਕਲਾਕਾਰ ਜਾਂ ਸਾਹਿਤਕਾਰ ਆਪਣੀ ਕਲਪਨਾ ਰਾਹੀਂ ਰਚਨਾ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਤੀਕ, ਬਿੰਬ ਆਦਿ ਜੋੜਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਪ੍ਰਤੀਕਾਂ ਜਾਂ ਬਿੰਬਾ ਦਾ ਸਬੰਧ ਮਨੁੱਖੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਨਾਲ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਕਿਸੇ ਸਾਹਿਤਕਾਰ ਜਾਂ ਕਲਾਕਾਰ ਦੀ ਰਚਨਾ ਕੋਰੀ ਕਲਪਨਾ ਬਣ ਕੇ ਹੀ ਰਹਿ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਉਹ ਪਾਠਕ ਜਾਂ ਸਰੋਤੇ ਆਨੰਦ ਨਹੀਂ ਦੇ ਸਕਦੀ। ਕਲਪਨਾ ਦੀ ਉਡਾਰੀ ਦਾ ਹੋਣਾ ਕਲਾਕਾਰ ਵਿਚ ਲਾਜ਼ਮੀ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਕਲਪਨਾ ਤੋਂ ਬਿਨਾ ਕਲਾ ਦੀ ਉਸਾਰੀ ਨਹੀਂ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ ਪਰ ਅਰਥਾਂ ਤੋਂ ਬਾਂਝੀ ਕਲਪਨਾ ਸਿਰਫ ਕਲਪਨਾ ਬਣ ਕੇ ਰਹਿ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਜੋ ਕਿ ਆਨੰਦ ਨਹੀਂ ਦੇ ਸਕਦੀ।

ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਆਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਇੱਕ ਅਜਿਹਾ ਵਿਗਿਆਨ ਹੈ ਜਿਹੜਾ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਵਿਚ ਵਿਆਪਕਤਾ ਅਤੇ ਸਦੀਵਤਾ ਨਾਲ ਜੁੜਿਆ ਹੋਇਆ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਵਸਤੂਗਤ ਸੁੰਦਰਤਾ ,ਆਤਮਿਕ ਆਨੰਦ , ਮਾਨਸਿਕ ਅਨੁਭੂਤੀ, ਕੁਦਰਤੀ ਨਜਾਰੇ, ਕਲਾਕ੍ਰਿਤੀਆਂ, ਸਾਹਿਤ, ਚਿੱਤਰਕਾਰੀ, ਮੂਰਤੀਕਲਾ ਆਦਿ ਦਾ ਵਿਗਿਆਨਕ ਅਧਿਐਨ ਕਰਨ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਕਲਾ ਦੇ ਸਮਾਜਿਕ ਹਿਤਾਂ ਨੂੰ ਵੀ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਘੇਰਾ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਗੋਚਰ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਨੂੰ ਅਣਦਿੱਸਦੇ ਸੰਸਾਰ ਦੇ ਦਰਸ਼ਨ ਕਰਵਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਅਧਿਆਤਮਵਾਦੀਆਂ ਅਨੁਸਾਰ ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ ਦਾ ਅਰਥ ਦੇ ਅਖੀਰਲੇ ਪੜਾਅ ਤੇ ਜਾ ਕੇ ਪੂਰਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਅਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆ

1. ਸੁਹਜ ਸ਼ਾਸਤਰ, ਡਾ. ਰੌਸ਼ਨ ਲਾਲ ਅਹੂਜਾ, ਪੰਨਾ ਨੰਬਰ 2
2. ਸੁਹਜ ਸਾਸ਼ਤਰ ਦੀ ਰੂਪ ਰੇਖਾ, ਪੰਨਾ ਨੰਬਰ 12
3. Dictionary of world literature, J.T. Shipley
4. ਸੌਂਦਰਯ ਸਾਸ਼ਤਰ, ਡਾ. ਸਰੋਜ ਚਮਨ , ਪੰਨਾ ਨੰਬਰ 149
5. History of Aesthetic, Bosanquest, page 63

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 53-56

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मध्यमवर्ग के लोगों की जीवन शैली : मुगलकाल के विशेष संदर्भ में

–कविता,

प्राईमरी अध्यापिका, गवर्नमैंट प्राईमरी स्कूल, बापोड़ा ब्रांच, भिवानी (हरियाणा)

सार :–

प्राचीनकाल से ही भारतीय सभ्यता और संस्कृति का संपूर्ण विश्व में अपना अलग स्थान रहा है। भारतीय समाज अपने अध्यात्म, दर्शन, जीवनशैली और रहन–सहन के कारण बाहरी लोगों के लिए आकर्षण का केन्द्र रहा है। विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक सिन्धु घाटी सभ्यता में भी उच्च कोटी के रहन–सहन और जीवन शैली के साक्ष्य प्राप्त हुए है। प्राचीनकाल से लेकर मध्यकाल तक एक सामान्य व्यक्ति के जीवनशैली में कोई खास परिवर्तन दिखाई नहीं देता है। पूर्व मध्य काल में तुर्कों के शासन की स्थापना होने के पश्चात भारतीय समाज के लोगों का संपर्क अन्य समुदाय के लोगों के साथ हुआ जिससे सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा मिला। मुगलों के आगमन तक भारतवासियों के जीवनशैली में अनेक प्रकार की विविधताओं का समावेश हो चुका था। समाज में दो प्रमुख समुदाय हिन्दु और मुसलमान एक दुसरे के साथ इस कदर घुल मिल गये थे कि स्वयं को भारतवासी कहने में गर्व का अनुभव करते थे। हिन्दु समाज जाति और मत के आधार पर अनेक भागों में विभाजित था। मुसलमानों ने भी हिन्दुओं से जातिप्रथा को अपना लिया था। दोनों समुदाय के आचार व्यवहार में बहुत अन्तर होने के बाबजुद भी वे आपस में मिल जुलकर प्रेम और भाईचारे के साथ रहते थे। दोनों समुदायों के आपसी मेलजोल और सांस्कृतिक आदान–प्रदान के परिणाम स्वरूप धर्म निरपेक्षता का ऐसा वातावरण बना जिसने मुगलकालीन समाज को विशिष्टता प्रदान की।

विशिष्ट शब्द : सभ्यता, संस्कृति, अध्यात्म, दर्शन, आकर्षण, समुदाय।

परिचय :–

मुगलकाल में भारतीय समाज मुख्य रूप से दो समुदायों में विभाजित था। प्रथम हिन्दू और द्वितीय मुसलमान। हिन्दु समुदाय के लोग भारतदेश के प्राचीन निवासी थे तथा मुसलमान धर्म परिवर्तन करके या बाहर से आाये हुए लोग थे। हिन्दु समाज जाति, धर्म, मत और व्यवसाय के आधार पर अनेक वर्गों में विभाजित था। इसमें मुख्य रूप से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र आते थे। मुस्लिम समाज में भी हिन्दुओं की भांति अनेक जाति और वर्ग थे। समाज में सभी वर्गों के लोग आपस में मिलजुल कर रहते थे। अकबर के शासनकाल में सामाजिक सद्‌भाव का पर्याप्त विकास हुआ। भारतीय सीमा में रहने वाले हिन्दु, मुसलमान समेत अन्य सभी धर्म और संप्रदाय के लोगों ने स्वयं का भारतीयकरण कर लिया था। सभी समुदाय के लोग एक दुसरे के रीति रिवाज और परम्पराओं का सम्मान करते थे। इस सांस्कृतिक मेलमिलाप के परिणामस्वरूप जीवनशैली में विविधता आई और गंगा यमूनी संस्कृति का मार्ग प्रशस्त हुआ।

शोध प्रविधि : अपने इस शोध आलेख में मैने द्वितियक सामग्री का प्रयोग किया है।

अवलोकन :–

मुगलकालीन समाज में उच्चवर्गीय लोगों का रहन सहन तो बहुत हीं उच्च कोटि का था परन्तु मध्यम वर्ग के लोग सामान्यतः साधारण स्तर का जीवन व्यतीत करते थे। इनके मकान साधारण और छोटे होते थे। मकान में तीन या चार कमरे और अन्दर की तरफ आँगन तथा बाहर की तरफ दलान होता था। अतिथियों के लिए एक अलग कमरा होता

था। एक कमरा बैठक के लिए, एक शयनकक्ष तथा एक कमरा बच्चों और परिवार के अन्य सदस्यों के लिए होता था। इन मकानों में सजावट का अभाव होता था। मकान सड़क के किनारे बनाये जाते थे। मकान प्रायः एक मंजिल या दो मंजिले होते थे। सामान्यतः व्यापारियों के मकान दो मंजिल होते थे। मकान के आगे चबूतरा बनाकर दुकानदार अपना व्यवसाय करते थे। मकान में छज्जे होते थे तथा खिड़कियों में पत्थर की जालियाँ लगी होती थी। मकान में धुप और हवा के आवागमन पर विशेष ध्यान दिया जाता था।

मध्यमवर्गीय लोग अपनी आर्थिक स्थिति के हिसाब से मकान में सुख सुविधा की वस्तुओं का प्रयोग करते थे। लकड़ी के फर्निचर प्रयोग में लाये जाते थे। सामान्यतः छोटी मेज, चौकी, खाट या चारपाई का उपयोग लोग बैठने, सोने और अपना कार्य करने हेतु करते थे। ओढ़ने और बिछाने के लिए चादर का प्रयोग किया जाता था। चटाई का प्रयोग भी बड़े पैमाने पर होता था। गर्मी से बचने के लिए लोग हाथ के पंखे का प्रयोग करते थे। साधारण लोग ताड़पत्र और नारियल के पत्ते से बने पंखे का प्रयोग करते थे। उच्च वर्ग के लोग चादर, दरी, कम्बल, मच्छरदानी आदि का भी प्रयोग करते थे।[1]

मुगलकालीन भारतमें मध्यम वर्गीय लोगों की वेशभुषा समय और स्थान के अनुसार परिवर्तित होती थी। हिन्दू और मुसलमान पुरूष के पहनावे ओढ़ावे में कोई विशेष अन्तर नहीं था। मुसलमान पुरूष जब घर से बाहर निकलते थे तो कुर्ता और पायजामा पहनते थे तथा घर में लुंगी पहनते थे।[2] अभिजात वर्ग के लोग कमीज के उपर लम्बा कोट (काबा), चुड़ीदार पैजामा या सलवार, सिर पर टोपी और पैर में जूते पहनते थे। हिन्दू काबा का बन्द बायीं ओर तथा मुस्लिम दायीं ओर बाँधते थे। हिन्दू परिवार के पुरूष धोती, कुर्ता और बण्डी पहनते थे। यह कमर में पटुका बाँधते थे तथा कन्धे पर शाल रखते थे। हिन्दू और मुस्लिम दोनो परिवार के पुरूष सिर पर पगड़ी और टोपी पहने थें । मध्यम वर्ग के लोग जुते भी पहनते थे जो साधारण किस्म की होती थी। सामान्य लोग अपने परिधान पर अधिक खर्च करना पसंद नहीं करते थे तथा वे साधारण वेशभुषा में रहना ही पसंद करते थे। समाज में हिन्दू ओर मुस्लिम स्त्रीयों की वेशभुषा में बहुत अन्तर था। हिन्दू स्त्रियॉ साड़ी, अंगिया, लहंगा और ओढ़नी पहनती थी। साड़ी सफेद और रंगीन दोनों तरह की होती थी। मुस्लिम स्त्रियॉ पायजामा, कुर्त्ती तथा सिर पर से दुपट्टा ओढ़े रहती थी।[3]

स्त्री और पुरूष दोनों ही आभुषण प्रेमी थे। स्त्रियॉ घर से बाहर निकलते समय या विशेष अवसरों पर अपने सामर्थ के अनुसार अपने साज सज्जा पर विशेष ध्यान देती थी। इस काल में स्त्रियों में आभुषण के प्रति विशेष अनुराग था। स्त्रियॉ स्वयं को सिर से पॉव तक आभुषणों से सुसज्जित रखतीं थीं।[4] मध्यम वर्ग की स्त्रियॉ सोने और चाँदी के आभुषणों का प्रयोग करती थी। शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्र की स्त्रियॉ आभुषण पहनती थी। शादी के बाद आभुषण पहनना सौभाग्य का प्रतीक समझा जाता था। विशेष रूप से नथ को स्त्रीयों के सुहाग से जोड़ कर देखा जाता था। सामान्यतः स्त्रीयॉ गले में हार, कान में कर्णफुल, कंगन, नथ, पैर में पायल तथा बिछुया पहनती थी। अंगुठी पहनने का रिवाज स्त्री और पुरूष दोनों में समान रूप से था। स्त्रीयों के आभुषण परिवार की आर्थिक क्षमता पर निर्भर करता था।

गॉव में रहने वाले गरीब लोग जूता नहीं पहनते थे। लेकिन उच्च वर्ग और मध्यम वर्ग के लोग जूता पहनते थे। तुलसीदास और सूरदास जैसे कवियों ने पनहीं और उपानह का उल्लेख किया है जिसे गॉव और शहर के लोग पहनते थे।[5] मुगलकाल में महिलायें विभिन्न प्रकार के सौन्दर्य प्रसाधन का प्रयोग करती थी। काजल, मेंहदी पाउडर, इत्र, आलता, सिन्दूर, आइना, कंघी, चोटी आदि का प्रयोग हिन्दू और मुस्लिम दोनों समाज की महिलायें स्वयं को सजाने सँवारने हेतु करती थी। विवाहित हिन्दू स्त्री सिन्दूर, बिन्दी और कलाई में चुड़ियों का प्रयोग सुहाग चिन्ह् के रूप में करती थी। स्त्रीयॉ पैरों में आलता और हाथ में मेंहदी लगाती थी। मुस्लिम स्त्रियाँ भी इत्र, पाउडर, सुरमा, मेंहदी आदि का प्रयोग करती थी।

हिन्दू और मुसलमान दोनों परिवार अपने खानपान पर अपनी आय के हिसाब से विशेष ध्यान देते थे। हिन्दू सामान्यतः शाकाहारी होते थे और मुसलमान मॉसाहारी परन्तु दुध सब को प्रिय था।[6] उनके घर में चावल, दाल, रोटी, सब्जी के साथ ही अनेक प्रकार के आचार और चटनी भोज्य पदार्थ के रूप में बनाया जाता था। वे फल और मिठाई का सेवन

भी विशेष अवसरों पर करते थे। मुसलमान परिवार में माँसाहार प्रचलित था। वे शाकाहार और माँसाहार दोनों प्रकार के भोजन करते थे परन्तु माँसाहार को विशेष महत्व देते थे। वे भोजन में कबाब, कीमा बिरयानी, मुर्गे आदि विशेष अवसरों पर प्रयोग करते थे। सामान्य रूप से इनके भोजन में भी गेहुँ और जौ की बनी रोटी–चावल, दाल और विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ होती थी। मध्य मवर्गीय लोगों का भोजन सादा परन्तु स्वास्थ वर्धक होता था। उत्तर भारत के मध्यम वर्गीय परिवारों में भोजन के बाद पान खाना विशेष लोकप्रिय था। हिन्दू परिवार में भोजन पकाने के स्थान को अत्यन्त पवित्र समझा जाता था। फर्श और दीवार को गोबर मिट्टी से लीपकर बहुत साफ रखा जाता था।[7] चौका में जुता चप्पल पहनकर प्रवेश नहीं किया जाता था।

समाज में मद्दपान का भी प्रचलन था। सामान्य लोग ताड़ी पीते थे जिसे नारियल या खजूर से बनाया जाता था। महुआ, खेरा, चावल अंगुर व अन्नानास आदि से भी शराब तैयार की जाती थी। नशीले पदार्थ के रूप में भाँग का प्रयोग भी लोग करते थे। 17वीं शताब्दी में पुर्तगालियों के हिन्दूस्तान के सम्पर्क में आने पर तम्बाकु का प्रचलन आरम्भ हुआ। प्रारम्भ में तम्बाकु का प्रयोग उच्च मध्यम वर्ग के लोगों तक हीं सीमित रहा। मादक पदार्थों का सेवन पुरूष हीं किया करते थे। मध्यम वर्ग में नशे का सेवन करना अच्छा नहीं माना जाता था। अकबर समेत अनेक मुगल बादशाहों ने शराबखोरी रोकने की कोशिश की।[8]

मुगल कालीन समाज में प्रत्येक व्यक्ति का मनोरंजन उसकी व्यक्तिगत रूचि के साथ–साथ आर्थिक स्थिति पर भी निर्भर करता था। तत्कालीन समाज में मनोरंजन के अनेक साधन उपलब्ध थे, परन्तु मध्यम वर्गीय लोग शतरंज, ताश, चौपड़ आदि खेल अपने खाली समय में खेलते थे। सम्राट बाबर ने हिन्दूस्तान में ताश खेलने का प्रचार किया। शीघ्र हीं यह खेल उच्च वर्ग के साथ साधारण वर्ग में भी काफी लोकप्रिय हो गया। चौपड़ एक प्राचीन खेल है जो मुगलकाल में भी सभी वर्गों के लोगों के मनोरंजन का लोकप्रिय साधन था। घरेलू मनोरंजन के साधनों में संगीत नृत्य का प्रयोग होता था। मध्यम वर्गीय स्त्रीयॉ किसी त्योहार उत्सव आदि के समय लोकगीत गाकर मनोरंजन करती थी। पशुओं की लड़ाई भी लोकप्रिय थी। साधारण जनता बकरों, भेंड, कुत्तों, मुर्गे, तीतर आदि के लड़ाई का आनंद लेते थे। बच्चो के बीच पतंग उड़ाना, गेंद खेलना, लट्टु घुमाना, वृक्षों पर चढ़ना आदि मनोरंजक खेल लोकप्रिय थे। सँपेरों द्वारा साँप के खेल से भी लोग मनोरंजन करते थे। कुछ लोग बन्दरों को प्रशिक्षित कर तरह तरह के करतब दिखाते थे। नट, बाजीगर तथा बहुरूपिये भी समाज में अपने करतबों से लोगों का मनोरंजन किया करते थे।

सभी वर्ग के लोगों में मेले और तीर्थयात्रा का अपना महत्व था। मेले और धार्मिक स्थान की यात्राओं में मध्यम वर्गीय लोग बड़े ही उत्साह के साथ भाग लेते थे। मेलों में व्यापारियों द्वारा अनेक प्रकार के दुकान लगाये जाते थे जिसमें पुरूष, स्त्री और बच्चों की आवश्यकता और मनोरंजन के अनेक सामान उपलब्ध होते थे। मेले में स्त्रीयॉ अपने साज श्रृंगार से संबंधित सामानों की खरीददारी करती थीं तथा बच्चे विभिन्न प्रकार के खिलौने और मनोरंजन के सामान खरीदते थे। इस प्रकार यह वह अवसर होता था जब स्त्रियाँ अपने रोजमर्रा के जीवन से अलग शान्ति और सौहार्द के मनोरंजक वातावरण का आनन्द लेती थी। मेले में उन्हें अपने स्वजनों से भेंट मुलाकात का अवसर भी प्राप्त होता था तथा वे अपने सगे संबधियों और मित्रों के साथ घूमने का मौका प्राप्त करतीं थी। इन मेलो का आर्थिक महत्व भी था। हिन्दुओं में दशहरा, रामनवमी, मकर सक्रांति जैसे पर्व पर मेलों का आयोजन होता था, तो मुसलमानों में ईद, उर्स आदि त्यौहार के अवसर पर मेले लगते थे। प्राचीनकाल से अस्तित्व रखने वाला कुँभ मेंला वर्तमान में भी अपने सांस्कृतिक सद्भाव के लिए जाना जाता है। सुफी सन्तों के मजार पर भी प्रतिवर्ष मेले का आयोजन होता था जिसमें हिन्दू और मुसलमान दोनों समान रूप से भाग लेते थे।

मुगलकालीन समाज में हिन्दू और मुसलमान दोनो के बीच अंधविश्वास और रूढ़िवादिता जड़ जमा चुकी थी। दोनों ही समुदाय के लोग गण्ड–ताबीज, शकुन–अपशकुन, टोना–टोटका आदि पर विश्वास करते थे। बीमार होने पर लोग झाड़–फुँक और टोना–टोटका में गहरी आस्था रखते थे। बच्चे को बूरी नज़र से बचाने के लिए उन्हें काजल का

टीका लगाया जाता था। मुस्लिम परिवार के बच्चों को ताबीज पहनाने का रिवाज था। दोनों समुदाय में शुभअवसरों पर नज़र उतारने का रिवाज था।

प्राचीनकाल से ही हमारे देश मे बड़ी संख्या में पर्व–त्यौहार मनाने का प्रचलन रहा है। मध्यकाल तक अनेक संस्कृतियाँ और धर्मों के भारतीय संस्कृति के साथ विलय के परिणाम स्वरूप पर्व–त्यौहार सांस्कृतिक जागरूकता और सार्वभौमिक एकता के प्रतीक बन गयें। मुगलकाल में हिन्दू और मुस्लिम दोनों समुदाय के लोग बड़े हीं हर्ष और उल्लास के साथ अपने–अपने पर्व–त्यौहार मनाते थे। मध्यमवर्गीय लोग बौद्धिक और आर्थिक रूप से समर्थ थे। अतः वे किसी भी पर्व त्यौहार को अपने क्षमता और सामर्थ के अनुसार उत्साहपूर्वक मनाते थे।

हिन्दओं के बीच, होली, दशहरा, रामनवमी, दीपावली, छठ, शिवरात्री, बसंत पचंमी, रक्षाबंधन आदि अनेक त्यौहार प्रचलित थे। प्रायः प्रत्येक मास में हिन्दूओं का कोई न कोई महत्वपूर्ण त्यौहार रहता था। मुस्लिम त्यौहार इस्लाम के ऐतिहासिक घटनाओं से संबंधित होते थे। इन त्यौहारों के द्वारा उन ऐतिहासिक घटनाओं की याद ताजा की जाती थी। मुसलमानों के प्रमुख त्यौहारों में शब–ए–बारात, ईद–उल–फितर, ईद–उल–जुहा, मोहर्रम आदि लोकप्रिय त्यौहार थे। सभी त्यौहार उत्साहपूर्वक मनाये जाते थे। मोहर्रम में शोक मनाया जाता था। मुस्लिम त्यौहार की अपेक्षा हिन्दूओं के त्यौहारों की संख्या ज्यादा थी। दोनों ही समुदाय के लोग बड़े हीं मेल जोल के साथ रहते थे तथा एक दूसरों का आदर करते थे। त्यौहार दोनो के बीच सद्भावना बढ़ाने का कार्य करते थे। हिन्दू और मुस्लिम दोनों संस्कृतियों के मेलजोल के परिणाम स्वरूप एक नई संस्कृति का जन्म हुआ जिसने लम्बे समय तक समाज में शांति और सौहार्द का माहौल कायम रखने में मजबूत आधारशिला का कार्य किया।

निष्कर्ष :–

इस प्रकार हम पाते हैं कि मुगलकाल में मध्यम वर्गीय लोंगों की जीवन शैली विविधताओं से भरी हुई थी। समाज में एक तरफ जहॉ उच्च वर्ग के लोग अत्यंत हीं विलासिता का जीवन व्यतीत कर रहे थे वहीं निम्न वर्ग के लोग अभावों से ग्रस्त थे। दोनों के बीच मध्य वर्ग के लोग अपनी सभी आवश्यकताओं को पूरा करते हुए सुख और शांति का जीवन जी रहे थे। इनकी प्रवृति दिखावे की नहीं थी। सरल और संयम पूर्ण जीवन शैली इनकी विशेषता थी। सीमित संसाधनों में भी उत्साह पूर्ण जीवन शैली ने इन्हें समाज में अपनी अलग पहचान बनाने में प्रमुख भुमिका निभाई।

संदर्भ सूची :–

1. जे0 एल0 मेहता, मध्यकालीन भारत का बृहत् इतिहास, (खण्ड 3), अनुवादक नरेश कुमार राजलीवाल, जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2013, पृष्ट सं0– 346
2. वही, पृष्ट सं0–346
3. डा0 लईक अहमद, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2009 पृष्ट सं0–177
4. वही, पृष्ट सं0–177
5. हरि चंद्र वर्मा, मध्यकालीन भारत भाग 2, (1540–1761), हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, 2015, पृष्ट सं0– 483
6. डा0 वी0 डी0 महाजन, मध्यकालीन भारत (1000 ई0 से 1761 ई0 तक), एस0 चन्द एण्ड कम्पनी प्रा0 लि0, रामनगर, नई दिल्ली, 2016, पृष्ट सं0– 223
7. सतीशचंद्र, मध्यकालीन भारत सल्तनत से मुगलकाल तक (1526–1761), जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2016, पृष्ट सं0– 386
8. डा0 लईक अहमद, मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2009 पृष्ट सं0– 178

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 57-65

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

संस्कृत भाषा से मेवाती बोली का व्याकरणिक साम्य

–कोमल अग्रवाल

Ph.D. Scholar, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर।

संस्कृतं संस्कृतेर्मूलं ज्ञानविज्ञानवारिधिः।
वेदतत्त्वार्थसंजुष्टं लोकाऽऽलोककरं शिवम्।।

शुद्धा, परिष्कृता, सरला, मधुरा, सर्वभाषाप्राणभूता संस्कृत भाषा सम्पूर्ण भारत वर्ष की गौरवमय भाषा है। संस्कृत भाषा भारतवर्ष की प्रत्येक आधुनिक आर्य भाषाओं एवं बोलियों का उद्गम, मूल व प्रारम्भिक स्रोत है। इसी कारण यह समस्त भाषाओं की जननी कहलाती है।

संस्कृत भाषा से मेवात क्षेत्र की मेवाती बोली भी निःसृत मानी जाती है। संस्कृत भाषा – पालि – प्राकृत– शौरसेनीय अपभ्रंश – हिन्दी – राजस्थानी – इस क्रम मेवाती बोली का मूल, प्रथम व प्रत्यक्ष स्रोत संस्कृत भाषा ही मानी गई है। यह बोली राजस्थान के अलवर व भरतपुर जिले में, हरियाणा के गुरूग्राम, पलवल, फरीदाबाद, मेवात व बल्लभगढ़ (पश्चिमी भाग) जिलों में, उत्तर प्रदेश के मथुरा जिले में, (छाता व कोसी पश्चिमी भाग) एवं दक्षिण दिल्ली के महेरौली भाग में बोली जाती है। ये सम्पूर्ण क्षेत्र सामूहिक रूप से मेवात क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है। मेव समुदाय के बाहुल्य के कारण यह क्षेत्र मेवात एवं बोली मेवाती कहलाती हैं।

मेवाती बोली के संस्कृत से साम्य होने के कारण मेवाती व्याकरण का भी संस्कृत व्याकरण से साम्य परिलक्षित होता है। लिंग, वचन, सर्वनाम, विशेषण, धातु एवं क्रिया, अव्यय, प्रत्यय, उपसर्ग आदि व्याकरणिक प्रकारों से मेवाती एवं संस्कृत व्याकरण की समानता का अध्ययन किया जा सकता है। अर्थात् संस्कृत के किस रूप या विधि (नियम) से मेवाती बोली का वह शब्द प्रभावित है। लिंगादि का संक्षिप्त वर्णन निम्नांकित प्रस्तुत हैं–

1. लिङ्ग –

संस्कृत की भाँति पालि, मराठी, गुजराती एवं सिंहली आदि भाषाओं में तीन लिंग प्राप्त होते हैं। परन्तु हिन्दी, पंजाबी, सिन्धी व राजस्थानी आदि भाषाओं में लिङ्गद्वय ही प्राप्त होते हैं। यहां नपुंसकलिङ्ग का अभाव हैं। भाषाओं पर लिङ्ग के इस प्रभाव के कारण इनकी बोलियाँ भी प्रभावित हुई। जिससे मेवाती बोली में भी द्विविध लिङ्ग का ही प्रचलन हो गया– पुल्लिंग एवं स्त्रीलिंग।

लिङ्ग परिवर्तन :–

1. मेवाती बोली में ओकरान्त पुल्लिङ्ग शब्द ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों में परिवर्तित हो जाते है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती पुल्लिङ्ग शब्द	मेवाती स्त्रीलिङ्ग शब्द
1.	आदो	आदी
2.	मूंसो	मूंसी

संस्कृत से लिङ्ग साम्यता –

संस्कृत में भी लिङ्गानुशासनम् के लिङ्ग नियमानुसार दीर्घ ईकारान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग की ही श्रेणी में आते है।

यथा सूत्र– 'ईकारान्तश्च'। उदाहरण– अवी, तन्त्री। तथैव स्त्री प्रत्यय प्रकरण में ङीष्, ङीन्, ङीप् आदि प्रत्ययों से भी दीर्घ ईकारान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग में ही प्रयुक्त होते हैं।

2. मेवाती में ओकारान्त के अतिरिक्त अकारान्त पुल्लिङ्ग शब्द भी ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों में परिवर्तित होते है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती पुल्लिङ्ग शब्द	मेवाती स्त्रीलिङ्ग शब्द
1.	बामण	बामणी
2.	पूत	पुतरी

'संस्कृत से साम्यता' – पूर्वोक्त प्रथम बिन्दु के वर्णनानुसार मेवाती स्त्रीलिङ्ग ईकारान्त शब्द भी ङीपादि प्रत्ययों से प्रभावित है तथा उपर्युक्त उदाहरणों में प्रयुक्त 'अन' व 'आन' स्त्री प्रत्यय प्रकरण में "इन्द्र वरूण भवशर्व रुद्रमृड हिमारण्ययवयवनमा तुलाचार्याणामानुक्" सूत्र के आनुक् आगम के अवशेष आन से प्रभावित है। यथा इन्द्रस्य पत्नी इन्द्राणी।

3. इसमें ईकारान्त पुल्लिङ्ग शब्द भी स्त्रीलिङ्ग में परिवर्तित होते है। स्त्रीलिङ्ग में निर्मित करने हेतु ईकार के स्थान पर मेवाती बोली के अण (प्रत्यय) का प्रयोग किया जाता है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती पुल्लिङ्ग शब्द	मेवाती स्त्रीलिङ्ग शब्द
1.	नायी	नायण
2.	जेगी	जोगण

संस्कृत से साम्यता – मेवाती बोली के प्रयुक्त 'अण' प्रत्यय जिसके माध्यम से पुल्लिङ्ग से स्त्रीलिङ्ग में शब्दों का परिवर्तन होता है, वह संस्कृत भाषा के अन प्रत्यय से प्रभावित है।

4. कुत्रचित् मेवाती में ओकारान्त पुल्लिङ्ग शब्द भी अण प्रत्यय से संयुक्त होकर स्त्रीलिङ्ग में प्रयुक्त होते है। यथा–

क्र.सं.	मेवाती पुल्लिङ्ग शब्द	मेवाती स्त्रीलिङ्ग शब्द
1.	बिणजारो	बिणजारण

संस्कृत भाषा से साम्य पूर्वोक्त विवरणानुसार यह अण प्रत्यय भी संस्कृत में प्रयुक्त अन से प्रभावित हैं।

5. लिङ्ग के प्रारम्भिक विवरण के अनुसार मेवाती बोली में नपुंसकलिङ्ग का अभाव होने से नपुसंकलिङ्ग में प्रयुक्त शब्द पुल्लिङ्ग मान लिये जाते हैं। यथा –

1.	मित्रम् (नपु.)	मिन्तर (पु.)
2.	पत्रम् (नपु.)	पात (पु.)
3.	वनम् (नपु.)	वन (पु.)
4.	दधि (नपु.)	दध (पु.)

2. वचन –

संस्कृत भाषा के शब्द व्याकरणानुसार त्रिविध वचनों से संयुक्त होते हैं। परन्तु संस्कृत के पश्चात् पालि, प्राकृत,

अपभ्रंश आदि भाषाओं से द्विवचन समाप्त हो गया। जिससे आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ यथा हिन्दी एवं राजस्थानी आदि में भी द्विवचन लुप्त हो गया। अतैव मेवाती बोली भी इसी क्रम में चलायमान हो गई। जिससे यहाँ द्विवचन का प्रयोग नहीं होता है और दो ही वचन प्राप्त होते हैं – (1) एकवचन (2) बहुवचन। इसमें द्विवचन का प्रयोग बहुवचन के अन्तर्गत ही होता हैं।

पुल्लिङ्ग के वचन परिवर्तन :–

1. मेवाती बोली में अकारान्त पुल्लिङ्ग एकवचन शब्दों को बहुवचन में परिवर्तित करने के लिये 'न' या 'अन' प्रयोग वांछनीय है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती एकवचन	मेवाती बहुवचन
1.	काग	कागान
2.	नर	नरन

संस्कृत से साम्य :– संस्कृत में नपुसंकलिङ्ग में यदा अकारान्त शब्दों का बहुवचन सिद्ध होता है तो आनि (नुम् + जस् शि इ) का प्रयोग होता है यद्यपि नपुसंकलिङ्ग का प्रयोग नहीं होता है तथापि नपुसंकलिङ्ग का प्रयोग पुल्लिङ्ग के अन्तर्गत ही होता है। अतः मेवाती का न अथवा अन संस्कृत के आनि से प्रभावित है।

2. कुत्रचित् अकारान्त पुल्लिङ्ग एकवचन को आ से युक्त करके भी बहुवचन में परिवर्तित किया जाता है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती एकवचन	मेवाती बहुवचन
1.	दीया	दीवलाँ
2.	बणिया	बाणियाँ

संस्कृत से साम्य :– संस्कृत में पुल्लिङ्ग अकारान्त बहुवचन जस् (आः) से सिद्ध होता है। मेवाती का यह अकारान्त बहुवचन रूप जस् (आः) से ही प्रभावित है।

3. मेवाती में आकारान्त पुल्लिङ्ग एकवचन का बहुवचन निर्मित करने के लिए अन्त में अनुस्वार या अनुनासिक व न का प्रयोग किया जाता है। यथा–

क्र.सं.	मेवाती एकवचन	मेवाती बहुवचन
1.	घणा	घणानँ
2.	छीवा	दीवलाँ

कुत्रचित् बहुवचन हेतु केवल अनुस्वार का ही प्रयोग दृष्टिगत होता है। यह प्रयोग अधिकांशतः क्रिया में ही प्राप्त होता है। यथा –

क्र.सं.	एकवचन	बहुवचन
1.	चर	चरां
2.	हंस	ळसां

संस्कृत के साम्य – पूर्वोक्त प्रथम बिन्दु के तुल्य यह न व अनुस्वार भी संस्कृत क्लीबत्व रूप से आनि से ही प्रभावित है।

4. मेवाती बोली में ह्रस्व इकारान्त शब्दों का प्रयोग नहीं होता है, केवल दीर्घ इकारान्त ही शब्द ही प्रचलन में है। ईकारान्त पुल्लिङ्ग एकवचन को बहुवचन में परिवर्तित करने के लिए ई के स्थान पर इयां अथवा या का प्रयोग किया जाता है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती एकवचन	मेवाती बहुवचन
1.	धणी	धनियां
2.	जेगी	जोगियां

संस्कृत से साम्य – उपर्युक्त इयां व या संस्कृत के आनि से ही द्योतित है।

5. मेवाती में उकारान्त पुल्लिङ्ग एकवचन को भी न से संयुक्त कर बहुवचन में परिवर्तित किया जाता है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती एकवचन	मेवाती बहुवचन
1.	पंखेरू	पंखेरून
2.	गींहू	गींहून

संस्कृत से साम्य – उपर्युक्त न भी आनि से ही द्योतित है।

स्त्रीलिङ्ग के वचन परिवर्तन :–

1. मेवाती बोली में अकारान्त स्त्रीलिङ्ग एकवचन को बहुवचन में परिवर्तित करने के लिए भी न का ही प्रयोग किया जाता है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती एकवचन	मेवाती बहुवचन
1.	रुत	रुतन
3.	जत	जतन

संस्कृत के साम्य – मेवाती स्त्रीलिङ्ग शब्दों पर भी संस्कृत के आनि का ही प्रभाव है।

2. आकारान्त स्त्रीलिङ्ग एकवचन से बहुवचन में परिवर्तित करने के लिए आ के साथ अनुस्वार का भी प्रयोग किया जाता है। अर्थात् शब्द के अन्तिम में याँ का प्रयोग होता है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती एकवचन	मेवाती बहुवचन
1.	तिरिया	तिरियाँ
2.	माला	मालाँ

संस्कृत से साम्य – मेवाती का यह रूप भी संस्कृत के नपुसंकलिङ्ग रूप आनि से ही प्रभावित है।

3. मेवाती में ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग एकवचन को बहुवचन में परिवर्तित करने के लिए इन का प्रयोग किया जाता है। अर्थात् ई के पश्चात् न का प्रयोग किया जाता है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती एकवचन	मेवाती बहुवचन
1.	कली	कलियन
2.	सकी	सकियन/ सखियन

संस्कृत से साम्य – पूर्व वर्णानुसार मेवाती बोली का यह रूप भी संस्कृत के आनि से द्योतित है।

4. ऊकारान्त स्त्रीलिड्.ग एकवचन को बहुवचन में परिवर्तित करने के लिए ऊ के स्थान पर ऊवाँ का प्रयोग होता है। यथा –

क्र.सं.	मेवाती एकवचन	मेवाती बहुवचन
1.	गऊ	गऊवां

संस्कृत से साम्य – एवमेव यह भी आनि से ही प्रभावित है।

अतः निष्कर्षतः वचन परिर्वतन से एक ही तथ्य का प्रत्यक्षीकरण होता है कि शब्द चाहे स्त्रीलिङ्ग हो या पुल्लिङ्ग मेवाती में बहुवचन न से युक्त होकर ही सिद्ध होता है। बहुवचन का न मेवाती की स्वकीय विशेषता है। एवमेव यह न संस्कृत के आनि से प्रभावित है। यथा –

क्र.सं.	संस्कृत के बहुवचन	मेवाती के बहुवचन
1.	लक्षाणि	लाखन
2.	मुखानि	मुखन (मुक्खन)
3.	मित्राणि	मिन्तरन
4.	वनानि	बनन

3. सर्वनाम :–

संस्कृत भाषा अपने विस्तृत शब्दकोश के कारण विभिन्न सर्वनामों से युक्त है। उसी प्रकार मेवाती बोली में भी अनेक सर्वनामों का प्रयोग किया जाता है। जो संस्कृत भाषा के सर्वनामों से प्रभावित है। यथा –

संस्कृत भाषा में प्रयुक्त सर्वनाम	मेवाती बोली में प्रयुक्त सर्वनाम	हिन्दी भाषा में प्रयुक्त सर्वनाम
मह्यम्, मम	मोय, मोकू, मोलू, मूनैं, मेरो, मोसू, मोपे, मोहे	मुझे, मेरा
तुभ्यम्, त्वम्	तू, तै, तम, थम, तोपै	तू, तुम
त्वम्	तमन, तोय, तोलू, तोकू, तुमन, तैने, तुम्हारो, थानै, थांका, तोहे, तिहारो, थाको, तोसू, तोमे	तुमने, तेरा, तुम्हे तुझे तुम्हारा, तुम से तुझसे
कस्यापि	कस, किसी किस	
कति	कितेक	कितना
कदा	कदै	कब
कुत्र, कुतः	कितलू, कित, कितकू	किधर, कहाँ
इह	हीनं, इतलू	यहाँ, इधर
इयत्	इतनो	इतना
कियत्	कितनो	कितना

कुछ मेवाती सर्वनामों का वाक्य प्रयोग –

1. तम – तम क्या जाणो हो सखी, भला बुरा की सार (पहचान)।
2. कितेक – सोच–सोच के करीम खां, मरगो जगत कितेक।
3. कदै / कद – मैं तेरी ही कद सू बाट देखरी हूँ।
4. कितकू – कान्हो कितकू गयो।

5. विशेषण :–

मेवाती बोली का लोक साहित्य संस्कृत भाषा के समान विभिन्न विशेषणों से संयुक्त है। मेवाती बोली की विशेषता है कि यहां शब्दों को ओकारान्त व उकारान्त करके बोला जाता है उसी प्रभाव के कारण विशेषण भी मेवाती में पुल्लिङ्ग शब्दों के साथ ओकारान्त प्रयुक्त होते है तथा स्त्रीलिङ्ग शब्दों के साथ विशेषण ओकारान्त से ईकारान्त में परिवर्तित हो जाते हैं। परन्तु इसके अतिरिक्त विशेषण वचन लिङ्ग व कारक के अनुसार भी परिवर्तित होते है। जिससे ओकारान्त व ईकारान्त के तुल्य आकारान्त का भी प्रयोग हो जाता है। यथा–

1. मेवाती बोली में सादृश्यक सूचक विशेषण के बोध हेतु संज्ञा व सर्वनाम पदों के साथ सा पद का प्रयोग किया जाता हैं। जो क्रमशः शब्दों के लिङ्ग निर्धारण के अनुसार सा, सी, सू में परिवर्तित हो जाता है। यथा–

    1. तिरिया और तूमड़ी सब बिस की सी बेल।
    2. गरब करा सू हार गया रावण सा जोधा।

संस्कृत से साम्य – मेवाती बोली के इस सा पद की व्युत्पत्ति संस्कृत के समम् शब्द से मानी जाती है । जो सादृश्य का बोधक सूचक पद माना जाता है।

2. एवमेव तुलनात्मक भाव को भी व्यक्त करने के लिए भी संज्ञा व सर्वनाम पदों के साथ सू का प्रयोग किया जाता है। यथा –

1. तो सू प्यारों कोण है, जासू मैं भर देखू नैणा।
2. खारी सू अच्छो औजार।

संस्कृत से साम्य – संस्कृत का सम शब्द तुलनात्मक भाव को व्यक्त करता है। यह सम से ही प्रभावित है।

3. मेवाती बोली में प्रयुक्त होने वाले सर्वनाम भी इस बोली में विशेषण की तरह प्रयुक्त होते हैं। केवल संज्ञा के लिङ्ग, वचन, कारक के अनुसार वे परिवर्तित होते रहते हैं। इन विशेषणों की विशेष बात यह है कि ओकारान्त ही प्रयुक्त होते हैं। यथा –

क्र.सं.	संस्कृत	मेवाती
1.	इयत्	इतनो
2.	कियत्	कितनो

4. मेवाती में संख्या बोधक विशेषणों का बहुतया प्रयोग होता है। मेवाती में प्रायः सभी संख्या बोधक विशेषण संस्कृत की संख्यावली से ही व्युत्पन्न हैं। यथा–

क्र.सं.	संस्कृत	मेवाती उदाहरण		
1.	एकम्	एक / येक / इक		
1.	दुनियाँ एक सराय है, दो दिन को वासो।			
2.	द्वे	दो / दोनू	1.	तेरा सुख पांव दो नैन
3.	त्रीणि	तीन / तीनू	1.	तीन सच्च सन्नू अटल, जनम जिंदगी मौत।
4.	चत्वारि	च्यार / च्यारूँ	1.	कल्लर खेत, कुसूळ हळ, घर कळिहारी नार। मेला कपड़ा मरद का ये नरक निशानी च्यार।।
5.	पञ्च	पाँच / पाँचू	1.	पाँचू पण्डू कितलू गये।
6.	षट्	छै / छेऊ	1.	नट घोड़ और नाजनीन, बधिया मल्ल सुनार।
			2.	ये छेऊ ठाडे भले, बूढ़े हुये तो ख्वार।
7.	सप्त	सात / सातू	1.	सात भाई, सातू भौजाई, सब इतकू ही आ रहीं
8.	अष्ट	आठ / आठू	1.	तम आठन ने भी देख लूँगों।
9.	नव	नौ / नो	1.	जाका सौ साऊ नहीं, दुश्मन नहीं पचास।
			2.	की जन्मो हो मावड़ी की लेर फिरी नौ मांस।।
10.	दश	दस	1.	दस सीस वाळो रावण भी गरब करना सू मारो गयो।

इसके अतिरिक्त शतम् झ सौ, सहस्राणि झ सहस, लक्षाणि झ लक्ख, कोटि झ किरोड़, अर्द्ध झ आधा, पादोन झ पौन, सपाद झ सवा, द्विगुणी झ दूणी, बहुः झ बहोत, सकलः झ सगळा।

5. धातु व क्रिया

धातु शब्द या क्रिया का मूल अंश होता है। संस्कृत भाषा में धातु एवं क्रियाओं की बहुलता हैं परन्तु यह बहुलता संस्कृत से अग्रिम भाषाओं यथा– पालि, प्राकृत आदि में नहीं प्राप्त होती है यतोहि पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं में लिङ्.ग, वचन आदि के भेद के कारण धातु व क्रियाओं की न्यूनता प्राप्त होती है। तथैव आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में संस्कृत की अपेक्षा क्रियाओं में न्यूनता परिलक्षित होती है। इसी क्रम में मेवाती बोली में भी धातुओं का प्रयोग दृश्यमान

होता है। जो संस्कृत की मूल धातुओं से ही प्रभावित है। यथा–

संस्कृत की मूल धातु		मेवाती की धातु	रूप/क्रिया	प्रयोग	
1.	खाद् (भ्वा.)	खा	खाणो	1.	खाणों, पीणो, पहरणो, हे मन की बात।
2.	चर् (भ्वा.)	चर	चरणो	1.	तेरे खेत में वा बैल चर रहो।
3.	चल् (चु.)	चल	चलणो	1.	दधि बेचण चली, शीश धर दधि की मटकी ।
4.	जप् (भ्वा.)	जप	जपणो	1.	वा ईसुर ने जप ले तू।
5.	तप् (चु.)	तप	तपणो	1.	कहां फूंस को ताजणो..............
6.	पूज् (चु.)	पूज	पूजणो	1.	मां–बाप ने पूज ले.............
7.	मिल् (तु.)	मिल	मिलणो	1.	बड़ा भाग सू मिले है,सन्नू मिनखा देह।
8.	रच् (चु.)	रच	रचणो	1.	जिनकू रचा जमी असमान.............
9.	लिख् (तु.)	लिख	लिखणो	1.	लिखते लिखते जिंदगी करली सारी खराब।
10.	हस् (भ्वा.)	हंस	हॅसणो	1.	हंस हंस जो सन्नू जिये, ऊ जिंदा होय।

6. **अव्यय :–** मेवाती बोली में भी संस्कृत भाषा के तुल्य विभिन्न अव्यय प्रयुक्त होते हैं। यथा–

क्र.सं.	संस्कृत अव्यय	मेवाती अव्यय
1.	कदा	कब/कदी/कदै/कबी
2.	इह, इतः	हूंण, इतकू
3.	सुकालः	सकालै
4.	त्वरितम्	तुरत
5.	बारम्बारम्	बर–बर में
6.	ऊपरि	ऊपर
7.	नीचैः	नीचे
8.	तलम्	तलै
9.	कति	कितनो
10.	अग्रः	आगै

7. **प्रत्यय :–** प्रत्येक भाषा के शब्द द्वि प्रकार के अड्.गों से निर्मित होते हैं – मूल प्रकृति (धातु) व प्रत्यय। मेवाती बोली में भी धातु युक्त शब्दों के पश्चात् नानाविध प्रत्यय संयुक्त कर विभिन्न शब्दों का निर्माण किया जाता है। यथा–

1. 'अ' प्रत्यय – अकारान्त संज्ञा शब्दों (स्त्री. पु.) में अ प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है।

   यथा – 1 हीर, 2. साँकल

संस्कृत से साम्यता – संस्कृत भाषा में पुल्लिङ्ग में अ प्रत्यय स्त्रीलिङ्ग में आ प्रत्यय, नपुसंकलिङ्ग में अम् प्रत्ययों से यह अ प्रभावित हैं। यथा – पुल्लिङ्ग अ प्रत्यय – जस्, स्त्रीलिङ्ग आ प्रत्यय– टापादि, नपुसंकलिङ्ग अम् प्रत्यय – सु का अमादेश।

2. 'अतो' प्रत्यय – मेवाती में ओकारान्त शब्दों का की क्रियाओं में यह अतो का प्रयोग प्रत्यय रूप में होता है। स्त्रीलिङ्ग में ईकारान्त शब्द होने से अतो की अपेक्षा अती का प्रयोग होता है।

   यथा – 1– जातो, 2– गातो, 3– न्हातो, 4– खाती

संस्कृत से साम्यता – इसकी व्युत्पत्ति संस्कृत के शतृ प्रत्यय से मानी जाती है।

3. आणी प्रत्यय – यह स्त्रीलिङ्ग शब्दों को निर्मित करता है

   यथा – जिठाणी, ठकुराणी, बामणी,

संस्कृत से साम्यता – यह संस्कृत के स्त्रीप्रत्यय आनी (आनुक् + ङीपादि) से प्रभावित है।

4. ई प्रत्यय – स्त्रीलिङ्ग के शब्दों का निर्माण किया जाता है ई प्रत्यय से।

यथा – अंजणी, लीली,मच्छी

संस्कृत से साम्यता – स्त्री प्रत्यय प्रकरण ङीप्, ङीष्, ङीन् से यह प्रभावित है।

5. ऊ, ऊत – इन प्रत्ययों का प्रयोग क्रिया व संज्ञा से लघुनाम व कर्त्ता बनाने हेतु किया जाता है।

यथा – खाऊँ (खाना), कमाऊँ (कर्म), पेटू (पेट)

संस्कृत से साम्यता – ये व्याकरण के उणादि प्रत्ययों यथा – उण्, उ आदि से प्रभावित हैं। यथा – "करोतीति कारुः स्वादुः"। कर्त्रर्थ में इनका प्रयोग किया जाता है।

6. एरो, एल – विभिन्न अर्थों में इन प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता हैं। यथा भाववाचक, कर्त्तावाचक, विशेषण संज्ञादि। यथा – कमेरो, लुटेरो, बिगडेल, इत्यादि।

संस्कृत से साम्यता – ये प्रत्यय भी उणादि प्रत्यय एरक् से व्युत्पन्न है।

यथा – "कुठेरः, कटोलः, गुहेरो लोहघातकः"।

8. उपसर्ग :-

संस्कृत भाषा की अपेक्षा मेवाती बोली में उपसर्गों की विविधता का अभाव है। तथापि मेवाती साहित्य एवं भाषा में जिन उपसर्गों का प्रयोग होता है वो संस्कृत भाषा से पर्याप्त साम्य स्थापित करते हैं। यथा –

1. उ – मेवाती का यह उपसर्ग संस्कृत उपसर्ग उत/उद् से व्युत्पन्न हैं।

2. ओ – मेवाती का यह उपसर्ग अव उपसर्ग से प्रभावित है जो भाषा–विज्ञान के ध्वनि निगम संधि–कार्य के अनुसार अव झ ओ के रूप में प्रयुक्त होने लगा।

यथा प्रयोग– 1. औतारी, 2. औतार, 3. औगुण।

3. न, नि – ये उपसर्ग निस् व निर् उपसर्गों से निर्मित है।

यथा प्रयोग– 1. निबल 2. निरमल 3. निर्भागन

4. बि – संस्कृत के वि उपसर्ग से यह प्रभावित है।

यथा प्रयोग– 1. बिहण्ड 2. विहाय 3. विपदा 4. बिनाइग,

5. सिन – सिन उपसर्ग सम उपसर्ग से अपभ्रंशित है।

6. स/सु – यह उपसर्ग तो साक्षात् सु उपसर्ग से निर्मित है।

यथा प्रयोग– 1. सुपातर 2. सुज्जस 3. सपूत 5. सकालो

7. क, कु – संस्कृत उपसर्ग कु से यह उपसर्ग व्युत्पन्न है।

यथा प्रयोग– 1. कुपातर 2. कपूतो

8. अण – यह संस्कृत के नञ् रूप से व्युत्पन्न है। नञ् के अवशिष्ट 'अ' तथा नुट् आगम (तस्मान्नुडचि) के अपशिष्ट न से निर्मित है यह उपसर्ग। यद्यपि नञ् संस्कृत के 22 उपसर्गों में उपस्थित नहीं है तथापि इसका प्रयोग उपसर्ग की भांति शब्द के प्रारम्भ में ही होता है।

यथा प्रयोग – 1. अनारथ, अणगिनत

9. अत – अति उपसर्ग का अपभ्रंशित रूप है अत उपसर्ग ।

10. सम– यह तो सम् उपसर्ग का ही स्वरूप है।

यथा प्रयोग– 1. सम्पत (सम्पद्) 2. संमद 3. सम्पदा 4. सुनमक (सम्मुख)

इस प्रकार संस्कृत व्याकरण से मेवाती बोली की व्याकरण की समानता के कुछ पक्ष व नियम प्रस्तुत किये गये। यद्यपि मेवाती एक जीवित बोली हैं। जो केवल संस्कृत से ही नहीं अपितु अपनी निकटवर्ती व सीमावर्ती अन्य भाषाओं एवं बोलियों से भी प्रभावित हैं। हिन्दी, राजस्थानी, हरियाणवी, ब्रज, उर्दू, फारसी, अरबी, अंग्रेजी, अहीरवाटी भाषाओं एवं बोलियों की व्याकरण भी इस बोली पर पूर्णतः प्रभाव डालती हैं। जिससे इसका व्याकरणिक स्तर विस्तृत हो जाता हैं। परंतु इस बोली पर एवं अन्य भाषाओं पर संस्कृत का प्रभाव तो प्रथमतया दृष्टिगत होता हैं। उक्तमपि–

"भाषाणां भारतीयानां मूलमेकं हि संस्कृतम्।
मूललोपे च शाखेव सा सर्वा शोषमेष्यति।।"

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. अष्टाध्यायी।
2. मेव लोक संस्कृति, अनिल जोशी।
3. मेवाती का उद्भव और विकास, डॉ महावीर प्रसाद शर्मा।
4. मेवाती संस्कृति (अध्ययन एवं अवलोकन), सिद्दीक अहमद मेव।
5. लघुसिद्धान्तकौमुदी।
6. लिङ्गानुशासनम्।
7. वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी।

डवइण छवण . 7597220806

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 66-70

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

विकास संचार में भारतीय समाचारपत्रों की महत्ता

-Rahul

Research scholar, Guru Jambheshwar University of Science and Technology Hisar.

सार :–

विकास संचार की शुरुआत और अभ्यास कैसे शुरू हुआ? विकास संचार में समाचार पत्र की महत्ता? विकास संचार के संस्थापक कौन थे और विकास संचार की भारत में शुरुआत कैसे हुई? इस पेपर का उद्देश्य विकास संचार का अवलोकन प्रदान करना है। इसके लिए विकास संचार के विकास और सैद्धांतिक दृष्टिकोण पर विचार किया गया है। साथ ही विकास और संचार से जुडी हुई विभिन्न धारणाओं का वर्णन किया गया है। "विकास संचार" में संचार से तात्पर्य विकास के संदर्भ में विभिन्न माध्यमों का उपयोग कर जन भागीदारी को सुविधाजनक बनाना है। संचार ही विकास में सूचना की साझेदारी और समझ को दर्शाता है। वहीँ विकास का अर्थ समाज के बेहतर बदलाव से है जो सामाजिक, राजनितिक, सांस्कृतिक और आर्थिक बदलाव से जुड़ा हो सकता है। विकास संचार में अखबार की महत्ता को दर्शाया गया है। विकास पत्रकारिता से जुड़े "हमारा गाँव छेत्तेरा", "मेनेफी प्रयोग" और "दैनिक उदयवानी" के प्रयोगों की व्यख्यान करते हुए शोधार्थी विकास संचार की पूरकता को दर्शाता है। जहाँ एक और स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हुए विभिन्न सकारात्मक बदलाव की गाथा समेटे विकासात्मक पत्रकारिता उस दौर का चित्रण कर प्रासंगिकता दिखती है, तो दूसरी तरफ इन प्रयोगों के बावजूद, भारतीय अखबारों के बीच विकास पत्रकारिता का गुम हो जाना देखा जा सकता है।

भूमिका :–

विकास संचार की समझ बनाने के लिए जरुरी है कि इन दोनों शब्दों "संचार" और "विकास" पर अलग अलग प्रकाश डाला जाए। क्योकि ये भिन्न–भिन्न धारणाओं से भरे हुए हैं और इनके सैद्धांतिक आधार भी अलग है। "विकास संचार" में संचार से तात्पर्य विकास के संदर्भ में विभिन्न माध्यमों का उपयोग कर जन भागीदारी को सुविधाजनक बनाना है। संचार ही विकास में सूचना की साझेदारी और समझ को दर्शाता है। वहीं विकास का अर्थ समाज के बेहतर बदलाव से है जो सामाजिक, राजनितिक, संस्कर्तिक और आर्थिक बदलाव से जुड़ा हो सकता है।

संचार :–

संचार क्रिया और प्रक्रिया से बढ़कर सांस्कृतिक और सामाजिक एकजुटता का तालमेल हैं जो मानव के सम्पूर्ण जरूरतों को पूरा करता है। वास्तविक संचार के विशुद्ध गुणय लोगों की भागीदारी और सशक्तिकरण के लिए जानकारी साझा करना है। संचार में जानकारी को साझा किया जाता है, सुना जाता है, उससे जुड़े कार्यक्रम में भाग लिया जाता है, विचारों का आदान–प्रदान किया जाता है जो मानव की समझ में वृद्धि करती है। एक विशिष्ट सांस्कृतिक संदर्भ में संचार की अवधारणा हमेशा विकास को आगे बढ़ाने में प्रमुख वाहन के रूप में होती है। संचार का प्रवाह विकास में अहम भूमिका अदा करता है।योग्य सूचना और विचारो के आदान–प्रदान के बिना विकास संभव नहीं है। संचार के माध्यम से व्यक्तियों और समुदायों, सरकारों और नागरिकों को भागीदारी और साझा निर्णय लेने में सहायता मिलती है। संचार के दृष्टिकोण से देखें तो मीडिया, विकास के लिए आवश्यक साधन है। मीडिया को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है, विशाल जन मीडिया समहू जिसका श्रोता विश्व में कहीं भी हो सकता है और स्थानीय भागीदारी मीडिया समहू जो

एक केन्द्रित श्रोता को ध्यान में रख कर काम करता है। विभिन्न शोध से पता चला है कि विशाल जन मीडिया समूह की अपेक्षा स्थानीय भागीदारी के मीडिया समूह लोगों के दृष्टिकोण और विश्वासों को बदलने के लिए अधिक प्रभावी हैं। विभिन्न विद्वानों ने संचार को लेकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की है और इसकी व्याख्या की है। संचार के अंग्रेजी पर्यायवाची शब्द "कम्युनिकेशन" की उत्पत्ति लैटिन संज्ञा "कम्यूनिस" और लैटिन क्रिया "कोम्मुनी–केयर" से लिया गया है जिसका अर्थ है सामान्य बनाना। Kumar, K. J. (2000).

यथार्थ दो व्यक्ति, समहू, समुदाय, और देश आदि के बीच में एक विषय पर अपने मत का व्यक्त करना और समन्वय स्थापित होना ही संचार का मूल उद्देश्य है। भारत के नाट्य शास्त्र में संस्कृत शब्द "साधारणिकरण" आम तौर पर "सामान्य / कॉमन" या "सामान्यताः कॉमननेस" के सबसे करीब आता है जोकि आमतौर पर संचार से जुड़ा हुआ है। एक अन्य शोधार्थी ने बताता कि साधारणिकरण एक सामाजिक प्रक्रिया है, जिसे सहृदय लोगों में संदेशों को प्राप्त करने की क्षमता से ग्रहण किया जा सकता है। यह एक सहज क्षमता है जिसे संस्कृति, अनुकूलन या अधिगम के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। (Tewari, I. P. 1980) विख्यात शोधार्थी डेनिस मेकुईल ने परिभाषित किया है कि संचार एक प्रक्रिया है जो सामानता को बढ़ाती है– लेकिन इसके घटित होने के लिए समानता के तत्वों की भी आवश्यकता होती है। McQuail, D. (1975). बोलना, सुनना, चलना, खेलना, खाना आदि हर क्रिया में संचार समाहित है। न केवल शब्द और संगीत, चित्र और प्रिंट, सिर हिलाना और इशारा करना, बल्कि हर कदम पर जो किसी व्यक्ति को नजर आता है और हर वो आवाज जो दूसरे के कान पर गूंजती है। ये सब संचार में समाहित है। हमने मनुष्य को जोड़े रखने वाले अनगिनत तरीकों को संचार का नाम दिया है। (Montagu, A., - Matson, F. W. 1979)

विकास :–

विकास की अवधारणा कई परिभाषाओं, अर्थों और व्याख्याओं के लिए खुली है तभी विद्वानों ने बहुआयामी धारणाओं के साथ विकास का सम्बन्ध स्थापित किया है। विकास शब्द न होकर एक प्रक्रिया है जो समग्र सकारात्मक बदलाव की गाथा गाती है। साथ ही यह मानव के आध्यात्मिक विकास, आर्थिक विकास के साथ–साथ तकनीकी विकास से संबंधित कई घटनाओं का समावेश हैं। विकास एक समूह, समुदाय, समाज, राज्य, देश के सांस्कृतिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और आध्यात्मिक कल्याण को दर्शाता है। विकास के लिए कुछ प्रमुख मानदंड निर्धारित किए गए हैं। जिन में जीवन की बढ़ी हुई गुणवत्ता, सभी मानव अधिकारों का प्रयोग, समतामूलक समाज, और सरकार में भाग लेने के लिए लोकतांत्रिक स्वतंत्रता आदि सम्मलित है। 1950–60 के दशक में, विकास को परिभाषित करने के लिए ज्यादा जोर दिया गया जिसके चलते विभिन्न अवधारणाओं और यार्डस्टिक्स का उपयोग किया गया है, ताकि तेज गति से विकास किया जा सके। उस दौरान विकास का एक वैकल्पिक तरीका स्वास्थ्य सूचकांक, बुनियादी जरूरतों और न्यूनतम जरूरतों के साथ जीवन की गुणवत्ता को केंद्र में रखना था। (Srampickal, J. 2007)

एक शोध पत्र "विकास संचार : मास मीडिया की भूमिका और इसके दृष्टिकोण" के अनुसार 21वीं सदी की शुरुआत में, विकास को जटिल, अभिन्न, भागीदारी की प्रक्रिया के रूप में मान्यता दी गई थी, जिसमें हितधारकों और लाभार्थियों को शामिल किया गया था और इसका उद्देश्य मानव जीवन की समग्र गुणवत्ता में सुधार करना था। (Sharma, A., -Uniyal, D. 2016) हर दौर में विकास वो मानव के जीवन उद्देश्यों को नई ऊंचाइयों तक ले जाने के लिए किया गया है ताकि बेहतर समाज का ताना–बाना बूना जा सके। हैन–बीन ली कहते हैं कि विकास एक प्रक्रिया है जो राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए नए निरंतर परिवर्तनों से निपटने के लक्ष्य पर कार्य करता हैं जिसका उद्देश्य निरंतर विकास को प्राप्त करना है। दुनिया की आबादी के विशाल हिस्से को पीड़ित करने वाली भूख, बीमारी, अन्याय, शोषण और संबंधित बीमारियों को मिटाने के उद्देश्य से विकास को निर्देशित किया जाता है। विकास संचार के दौरान लोगों को सूचित करने, जागरूकता फैलाने, शिक्षा देने और ज्ञान प्रदान करने का प्रयास किया जाता है ताकि वे अपने जीवन के हर पहलु को बेहतर बना सकें। विकास संचार को भागीदारी कार्रवाई के माध्यम से सीखने और शक्तियों

को साँझा करने के संदर्भ में भी परिभाषित किया जाता है जो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धन और ज्ञान में भागीदारी के जरिये सभी के सशक्तिकरण की ओर ले जाती है।

1970 में पहली बार ''विकास संचार'' का उपयोग फिलीपींस में प्रोफेसर नोरा क्यूब्राल द्वारा किया गया। उन्होंने ग्रामीण परिवेश से संबंधित नए ज्ञान और संचार की प्रक्रियाओं को नामित किया और बताया कि उनके अनुसार विकास संचार मानव संवाद की कला और विज्ञान है. जिसके उपयोग से एक देश और उस के नागरिकों का गरीबी से गतिशील र्आविकास में रूपांतरण किया जा सकता हैं। परिणामस्वरूप सामाजिक समानता और मानव की बड़ी जरूरतों की पूर्ति संभव हो सकती है। Quebral Nora C. (1975)

वहीँ एफ.रोसारियो ब्रैड की राय है कि विकास संचार ''विकास कार्यक्रमों के समग्र नियोजन और कार्यान्वयन में प्रबंधन प्रक्रिया का एक तत्व है।'' Nag, B. (2011). एक प्रभावशाली विद्वान एवरेट एम रोजर्स ने विकास संचार को परिभाषित किया है कि यह आगे के विकास के लिए संचार के उन उपयोगों को संदर्भित करता है जिनसे आगे का विकास किया जा सके। इस तरह के अनुप्रयोगों का उपयोग सामान्य तरीके से राष्ट्र के नागरिकों के बीच बड़े पैमाने पर मीडिया की समझ के स्तर को बढ़ाने के लिए किया जाता है। ताकि विकास के लिए अनुकूल माहौल बनाया जा सके, या एक विशिष्ट निश्चित कार्यक्रम या परियोजना का समर्थन किया जा सके।

विकास संचार में भारतीय समाचार पत्र की भूमिका :-

राष्ट्रीय एजेंडा पर विकास एक वास्तविक प्राथमिकता है क्योंकि लाखों लोग गरीबी, कुपोषण, बेरोजगारी, अशिक्षा, बीमार स्वास्थ्य, पीने के पानी की कमी आदि से पीड़ित हैं, प्रेस का यह कर्तव्य है कि वह लोगों को बुनियादी सुविधा प्रदान करने के सरकार के प्रयासों का समर्थन करे। हालांकि, प्रेस लोकतंत्र का चौथा स्तंभ है, जिसे किसी देश में विकास प्रक्रियाओं को तेज करने में सक्रिय भूमिका निभानी है। ऐसी भूमिका निभाने के लिए, प्रेस को लोगों में जागरूकता बढ़ाने के लिए विकास के मुद्दों की व्यापक कवरेज प्रदान करनी होती है। चूँकि राष्ट्रीय विकास में सूचना एक प्रमुख कारक है, इसलिए समाचार पत्र विकास से जुड़े मुद्दों के बेहतर कवरेज के साथ राष्ट्रीय विकास में भाग ले सकते हैं। एजेंडा–सेटिंग का उपयोग कर समाचार पत्र नागरिक जुटाने का कार्य करता है। समाचार पत्र दिन की प्रमुख समस्याओं पर हमारा ध्यान केंद्रित करने में मदद करता है।

अखबार संचार का सबसे विस्वसनीय माध्यम माना जाता है। यह आज भी प्रासंगिक बना हुआ है। इसके जरिये लोगों को विभिन्न प्रकार की जानकारी मिलती है। किसी विषय पर विशुद्ध जानकारी के लिए लोग समाचार पत्र पर आश्रित रहते है। इस महत्वत्ता को ध्यान में रखते हुए अनेकों विद्वानों ने इसे विकास संचार के साधन के रूप में उपयोग में लिया। चूंकि समाचार पत्र में प्रकाशित हर खबर पत्रकार द्वारा रिपोर्ट की जाती है जिसके चलते अखबार में विकास संचार को विकासात्मक पत्रकारिता के रूप में परिभाषित किया गया है। विलानीलम (1975) ने इसे 'विकासशील देशों में विकास की प्रक्रिया से संबंधित पत्रकारिता' के रूप में परिभाषित किया। पाठक के सम्पूर्ण विकास के लिए प्रकाशित की गयी हर खबर भी विकासात्मक पत्रकारिता कहलाती है। अग्रवाल (1978) ने उसी दृष्टिकोण को और विस्तृत किया, उन्होंने बताया कि विकासात्मक पत्रकारिता मूल रूप से घटनाओं के बजाय विकासात्मक प्रक्रियाओं की रिपोर्ट करती है। विभिन्न देशों में इसके अलग महत्व रहे है।

अगर हम भारत के संधर्भ में बात करे तो विकासात्मक पत्रकारिता के अस्तित्व में आने से पहले ही भारत में इसका अभ्यास किया जाता था। जिसका प्रमाण महात्मा गांधी की प्रसिद्ध पत्रिकाओं, यंग इंडिया और हरिजन में मिल जाता है। उन्होंने समकालीन विषयों जैसे हिंदू–मुस्लिम एकता, अस्पृश्यता को दूर करना, शराबबंदी, खादी और अन्य ग्रामोद्योगों को बढ़ावा देना और कताई के पहिये जैसे विषय पर बहुत लिखा और उन्होंने इनकी महत्ता और लोकप्रियता को पहचाना।

साथ ही इसे भारत के बेरोजगार ग्राम किसानों की आय के पूरक के रूप में लिखा। गाँधी ने इन विषय को राष्ट्र के लिए महतवपूर्ण माना और जनता को इसके लिए भी प्रशिक्षित किया। (Murthy, 1966, 79–80) इसके आलावा आजादी

से पहले देश में स्थापित सामाजिक कुरीतियां, सती प्रथा और बाल विवाह आदि पर अखबारों के माध्यम से प्रहार कर लोगों को जागरूक करने का काम भी किया गया। जिनके सकारात्मक परिणाम भी देखने को मिले। उन दिनों पत्रकारिता व्यवसाय न होकर सामाजिक और राजनितिक रूप से जनता को जागृत करने के मिशन के रूप में कार्य करती थी। (Yadav, 1985; Parthasarathy, 1991)

आजादी के बाद, शोधकर्ताओं और समाचार पत्रों ने ग्रामीण विकास को सुविधाजनक बनाने के लिए विकासात्मक पत्रकारिता के चलते कुछ प्रयोग किए। जिनके माध्यम से नागरिकों को सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और व्यवसायिक आदि क्षेत्रों के प्रति जागरूक किया गया और इनको पूरा करने में समाचार पत्र की महत्ता को समझा गया। कर्नाटक के मैसूर क्षेत्र के पास के चार गांवों में सेल्दें मेनेफी और ऑड्रे मेनेफी के द्वारा हुआ। जो मेनेफी प्रयोग के नाम से प्रसिद्ध है। ग्रामीणों पर संचार के प्रभावों का परीक्षण करने के लिए कन्नड़ भाषा में "ग्राम समाचार" नामक एक अखबार 13 सप्ताह तक प्रकाशित किया गया। शोधकर्ताओं ने परीक्षण के दौरान नियमित पाठकों के सूचना के स्तर में वृद्धि दर्ज की। (Menefeeand Menefee, 1967)

संचार विशेषज्ञों ने अक्सर यह जोर डाला है कि एशिया में प्रेस शहरी पाठक पर केन्द्रित है और ग्रामीण विकास की तत्काल मांगों को अनदेखा किया जाता है। इस कड़ी को तोड़ने के लिए भारत के हिंदुस्तान टाइम्स समाचार पत्र ने सप्ताह के दौरान, दूर के गांव की पृष्ठभूमि, लोगों, समस्याओं और संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए एक अनूठा प्रयोग शुरू किया। इसके लिए एक ऐसे गाँव की खोज शुरू हुई जो दिल्ली के नजदीक होने के साथ आकार में भी माध्यम हो। दिल्ली के उत्तरपूर्व में 25 मील दूर हरियाणा का गाँव छेत्तरा इस कार्य के लिए चुना गया। यह प्रयोग "हमारा गाँव छेत्तेरा" कहलाया और एक परिवर्तन–एजेंट बन गया था। हिंदुस्तान टाइम्स ने खुद एक उत्प्रेरक की भूमिका निभाते हुए, ग्रामीणों के दिमाग में नए विचारों को रोपते हुए और अपनी आकांक्षाओं को व्यक्त करते हुए पाया। विभिन्न एजेंसियों से संपर्क कर गाँव की हर समस्या का निवारण किया। यह साबित हो चूका है कि "हमारा गाँव छेत्तेरा" प्रोजक्ट पत्रकारिता का वह रूप है जो तीसरी दुनिया में ग्रामीण–शहरी संचार की खाई को पाटने में काफी मददगार साबित हो सकता है। Verghese, B. G. (1976).

इस ही तरह 1981–84 के दौरान कन्नड़ दैनिक "उदयवानी" ने भी विकासात्मक पत्रकारिता में एक प्रयोग किया। इस दौरान "पिछड़े गाँव की पहचान" नामक मुहिम चलाई गयी। समाचार पत्र ने दक्षिण कर्नाटक के 10 सबसे पिछड़े गांवों में गतिविधियों की पहचान कर, उन पर रिपोर्टिंग शुरू की। बिजली, डाकघर, शैक्षणिक सुविधाओं, टेलीफोन, स्वच्छ पानी, चिकित्सा सुविधाओं और सड़क नेटवर्क की कमी के रूप में पिछड़ेपन की पहचान की। अखबार के कर्मचारियों और परियोजना के समन्वयक ईश्वर दैतोटा द्वारा पाठकों पर किए गए सर्वेक्षण के माध्यम से इन गांवों का चुनाव किया गया। समाचार पत्र ने गांवों पर हर महीने 30 कहानियां प्रकाशित कीं। इस प्रयोग के चलते उदयवाणी अखबार का यह कार्यक्रम गाँवों में मूलभूत सुविधाएँ प्राप्त करने में सफल रहा। इन प्रयोगों से मीडिया के स्तर को निरंतर बेहतर बनाने के लिए स्थापित दूसरे प्रेस आयोग (1982: 28) की रिपोर्ट में बताई गयी यह बात सत्य कर दी कि विकासात्मक रिपोर्टिंग को क्या गलत हो रहा है के साथ साथ क्या सही चल रहा है की भी जानकारी देनी चाहिए।

प्रेस को विभिन्न परिस्थितियों में, विभिन्न स्थानों पर आम लोगों के जीवन को प्रभावित करने वाले अनेक विकासात्मक कार्यक्रम की विफलता के साथ–साथ सफलता के कारणों की जांच करनी चाहिए। परंतु 1990 के दशक में, मीडिया समूह उभरती प्रौद्योगिकियों के परिणामस्वरूप एक नाटकीय संक्रमण से गुजरे। दुनिया के हर कोने को छूते हुए, विभिन्न भाषाओं में कई स्थानों से समाचार पत्रों के कई संस्करण लॉन्च किए गए। समाचार पत्रों के भारतीय रजिस्ट्रार के अनुसार, देश के विभिन्न हिस्सों में कई भाषाओं में 3,954 समाचार पत्र प्रकाशित हुए। दूसरी ओर, इन सामाजिक–राजनीतिक बदलावों ने देश को सार्वजनिक जीवन के कई क्षेत्रों में सकारात्मक बदलाव किए। हालांकि, ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ है, जो अभी भी विकास और सरकारी सहायता की उम्मीद कर रहे हैं।

ऐसा न होने के पीछे सबसे बड़ा कारण अखबार का अपने मूल आधार से दूर होना रहा। जो कभी मुख्य धारा में लाने के लिए कार्य करता था, वो अब एक व्यवसाय में तब्दील हो चूका है। जिस का अस्तित्व संचलन और विज्ञापन पर निर्भर करता है। चूंकि विज्ञापनदाताओं को आकर्षित करने के लिए प्रसार एक महत्वपूर्ण कारक है, इसलिए समाचार पत्र प्रसार में सुधार के लिए कई तरीकों का पालन करते हैं। इस प्रक्रिया में समाचार पत्रों की पहचान वाणिज्यिक संस्थाओं के रूप में की जाती है। अधिकांश समाचार पत्र व्यवसाय के उत्पाद हैं—वे क्या बेच सकते हैं, साज सज्जा और सामग्री अब उपभोक्ता की रूचि के परिणाम हैं, संपादकों के नहीं। पत्रकारिता अपने नाम पर केवल एक पेशा रह गयी है, जो व्यवहार में एक उद्योग है।

निष्कर्ष :–

विश्व परिपेक्ष में विकास संचार के आने से पहले शुरू होने वाली भारतीय पत्रकारिता 20 वी शताब्दी तक दम तोडती दिखती हैं। एक दिशा में सामाजिक एकरूपता को दर्शाती गाँधी विचार धारा की पत्रकारिता है तो वहीँ प्रयोगों के बावजूद दिशाहीन वर्तमान मीडिया है जिसका मूल उद्देश्य व्यवसाय करना है। भारतीय प्रेस स्पष्ट रूप से राजनीतिक समाचार, गपशप और सनसनीखेज के व्यापक कवरेज के लिए जाना जाता है। यही कारण है कि प्राथमिक शिक्षा, जनसंख्या में कमी, शहरी गिरावट की स्थिति, बिजली की कमी, आदि जैसी महत्वपूर्ण समस्याएं पीछे की सीट ले रही हैं। भारत में 65 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है। फिर भी ग्रामीण विकास पर रिपोर्टिंग प्रेस में बहुत प्रासंगिक नहीं है। समाचार पत्र में ग्रामीण समाचार प्रथम पृष्ठ पर कुपोषण, मृत्यु, आपदा, अकाल या राजनीतिक घोषणाओं जैसी भयावह घटनाएं होने पर ही नजर आते देते हैं। भारतीय प्रेस में विकास समाचारों की अपर्याप्त कवरेज के मुख्य बिंदु पत्रकारों की विकास संचार विषय पर समझ और जानकारी का अभाव होना, धन और संसाधनों की कमी और अखबार की प्रष्ठ भूमि से इनका मेल ने खाना है।

Reference :-

1. Srampickal, J. (2007). Understanding development communication. Understanding Development Communication, 11.
2. Sharma, A., -Uniyal, D. Development Communication : Role of Mass Media and its Approach. Imperial Journal of Interdisciplinary Research, 2.
3. Montagu, A;- Matson, F. W. (1979). The human connection- McGraw-Hill.
4. McQuail, D. (1975) Towards a Sociology of Communication.
5. Tewari, I. P. (1980) Sadharanikaran : Indian theory of communication. Indian and Foreign Review, 13-14.
6. Kumar, K. J. (2000) Mass communication in India (Vol. 741) Jaico publishing house.
7. Quebral Nora C. (1975) Development Communication; Where Does it Stand Today, Media Asia, Vol. 2 (4)
8. Nag, B. (2011) Mass media and ICT in development communication : Comparison & convergence. Global Media Journal : Indian Edition, 2(2).
9. Rogers Everett. M. (1976) Communication and Development : Critical Perspectives, Beverly Hills, Sage Publications.
10. Murthy, K.N. (1966) 'Indian Journalism', Mysore : Mysore university press, p. 79-80.
11. Yadav, J.S. (1985) 'The changing social role of lndian press'. MediaAsia, 12(3½) 111-119.
12. Yadava, J. S. (1991). Press system in India. Media Asia, 18(3), 132-136.
13. Parthasarthy, R. (1991). 'History of journalism in India', New Delhi : Sterling.
14. Vilanilam, J.V. (1975). 'Ownership vs. development news coverage : An analysis of independent and conglomerate newspapers of India', Paper presented at AEJ convention, Ottawa.
15. Aggarwal, Narinder (1978a), 'Humanising international news', Media Asia, 5(3), 136-138.
16. Menefee, A. and S. Menefee (1967). 'A country weekly proves itself in India', Journalism Quarterly, 44(1) : 114-117.
17. Verghese, B. G. (1976). Project Chhatera.an experiment in development journalism. Media Asia, 3(1), 5-12.

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 71-76

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हिन्दी साहित्य में किसान

–प्रो. शकुन्तला

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, आई. बी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पानीपत।

पेट जो भरता लोगों का
मिट्टी से फसल उगाता है,
उस किसान की खातिर तो
ये धरा ही उसकी माता है।

जबसे इस धरती पर मनुष्य ने रहना शुरु किया है तब से ही किसान खेती करके खाद्य सामग्री उत्पादित कर रहे हैं और किसान ही समस्त संसार के लिए भोजन–हेतु खाद्यान्न, फल, सब्जियाँ और चारे का उत्पादन करते आ रहे हैं। इन धरती–पुत्र किसानों को अन्नदाता भी कहा जाता है। आज हमारे देश में ही नहीं सारे संसार में सबसे ज्यादा दुर्दशा किसान की हो रही है। किसान सबके लिए तो अन्न उगा रहे हैं और खुद भूखा मरने के लिए विवश हैं। किसान अपनी फसल से इतना नहीं कमा पाते कि वे अपने परिवार के लिए ठीक से कपड़े और शिक्षा का प्रबंध कर सकें। किसान दिन रात एक करके अन्न उपजाता है। वो न जेठ मास की तमतमाती धूप देखता है और न ही माघ पोष की कड़ाके की ठंड। किसान जैसा परिश्रमी और धैर्यवान कोई नहीं होता। फिर भी किसान सुखी नहीं है। कभी वो भयानक सूखे की मार मारा जाता है और कभी प्रलयकारी बाढ़ से। इन आपदाओं से भी ज्यादा किसान कर्ज के बोझ से आत्महत्या करने को मजबूर होते हैं। वहीं किसानों की उपजाऊ जमीनों को पूंजिपतियों द्वारा अपार्टमेंट में बदल जा रहा है तथा सरकार द्वारा भी किसानों की भूमिका अधिग्रहण कर लिया जाता है। जिससे वे भूमिहीन होते जा रहे हैं।

किसान किसी न किसी रूप में प्रताड़ित होता रहा है। जिसकी अभिव्यक्ति साहित्यकारों नें की है। किसानों के संघर्षमय जीवन को केन्द्र बिंदु बनाकर रचना करने वाले साहित्यकारों की प्रेमचन्द से लेकर संजीव और पंकज सुबीर तक एक लम्बी परम्परा रही है। प्रेमचन्द से पहले भी किसानों को केन्द्र बनाकर साहित्य लिखा गया था, परन्तु कथा साहित्य में नहीं बल्कि कविता जैसी विधाओं में। कबीरदास और तुलसीदास जैसे भक्तिकालीन कवियों ने अपनी कविताओं में किसानों की स्थिति को दर्शाया है। तुलसीदास ने कवितावली में कहा है–

"खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि,
बनिक को बनिज, नचाकर को चाकरी।
जीविका बिहीन लोग सीधमान सोच बस,
कहैं एक एक न हों कहाँ जाई, काकरी'?"[1]

भारत कृषि प्रधान देश है। आज भी सत्तर फीसदी लोग जीवनयापन के लिए कृषि को आधार बनाते हैं। प्रेमचन्द के शब्दों में – "कृषि प्रधान देश में खेती केवल जीविका का साधन नहीं, सम्मान की वस्तु भी है। गृहस्थ कहलाना गर्व

की बात है। किसान गृहस्थी करता है। मान–प्रतिष्ठा का मोह औरों की भांति उसे घेरे रहता है। वह गृहस्थ रहकर जीना और गृहस्थी में मरना भी चाहता है। उसका बाल–बाल कर्ज से बंधा हुआ हो, लेकिन द्वार पर दो–चार बैल बांधकर वह अपने को धन्य समझता है। उसे साल में 360 दिन आधे पेट खाकर रहना पड़े, पुआले में घुसकर रातें काटनी पड़े, बेबसी से जीना पड़े, कोई चिंता नहीं, वह गृहस्थ तो है। सारी दुर्गति की पुरौती कर देता है।"[2] किसान पर चाहे कितने ही संकट आ जायें वह कृषि करना अपना गौरव समझता है और उसका यह गौरव उसकी जमीन भी पूंजिपतियों तथा सरकार के भूमि–अधिग्रहण द्वारा छीना जा रहा है। जयशंकर प्रसाद ने 'पुरस्कार' कहानी में भूमि–अधिग्रहण को अभिव्यक्ति प्रदान की है। उन्होंने 'पुरस्कार' कहानी की पात्र 'मधूलिका' के माध्यम से एक किसान की पीड़ा को व्यक्त किया है– 'देव! यह मेरे पितृ–पितामहों की भूमि है। इसे बेचना अपराध है। इसलिए मूल्य स्वीकार करना मेरी सामर्थ्य के बाहर है।'[3]

मध्यकालीन सामाजिक संरचना में लगान वसूली, नजराना, बेगारी के शोषणकारी मुद्दे का चित्रण किया गया है। प्रेमचन्द, संजीव और पंकज सुबीर के उपन्यास क्रमशः 'गोदान', 'फांस' और 'अकाल में उत्सव' में भारतीय किसान की दयनीय दशा का चित्रण किया गया है। प्रेमचन्द ने भारतीय किसान का यथार्थ चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। उन्होंने किसानों के आर्थिक शोषण का ही वर्णन नहीं किया बल्कि अपने साहित्य में भारतीय किसान की एक बोधगम्य पहचान कायम करने का प्रयास किया। प्रेमचन्द के उपन्यासों में किसान। जमींदार, महाजन, नौकरशाही से संघर्ष करता हुआ दिखाई देता है। साहित्य के द्वारा समाज की झलक मिल जाती है, जिस समय प्रेमचन्द 'गोदान' और 'प्रेमाश्रम' उपन्यास लिख रहे थे, उस समय भारत में स्वतंत्रता आंदोलन चल रहा था। किसान सामन्ती, जमींदारी तथा महाजनी जैसी कुव्यवस्थाओं से जूझ रहा था। समाज में घटित होने वाली घटनाओं का प्रभाव लेखक पर पड़ना स्वभाविक था। आमतौर पर प्रेमचन्द को किसानों का कथाकार कहा जाता है और 'गोदान' को भारतीय किसानों के जीवन का महाकाव्य।

प्रेमचन्द जी ने 'गोदान' में कर्ज के नीचे दबे हुए भारतीय किसान का यथार्थवादी वर्णन किया है। किसानों के खलिहान में अनाज है, किन्तु वे जानते हैं कि उनके सिर पर लगान का बोझ भी है। पूरा खलिहान खाली करने के बाद भी लगान के रुपये बाकी थे। उन्हें चुकाने के लिए महाजन से जो ऋण लिया था उसका मूल और सूद भी चुकाना है। जब पेट ही खाली हो तो इंद्रियों में शक्ति का संचार कहाँ से हो और किसान की इसी अर्धचेतना की दशा का वर्णन प्रेमचन्द ने 'गोदान' उपन्यास में किया है– 'द्वार पर मानों कूड़ा जमा है, दुर्गंध उड़ रही है, मगर उनकी नाक में न गंध है, न आँखों में ज्योति। सरेआम द्वार पर गिदड़ रोने लगते हैं, मगर किसी को गम नहीं। सामने जो कुछ मोटा–झोटा आ जाता है, वह खा लेता है, उसी तरह जैसे इंजिन कोयला खा लेता है। उनके बैल चूनी–चोकर के बगैर नाद में मुहँ नहीं डालते, मगर उन्हें केवल पेट में कुछ डालने को चाहिए। स्वाद से उन्हें कोई प्रयोजन नहीं। उनकी रसना मर चुकी है। उनके जीवन में स्वाद का लोप हो गया है। उनसे धेले–धेले के लिए बेईमानी करवा लो, मुट्ठी–भर अनाज के लिए लाठियाँ चलवा लो। पतन की वह इंतहा है, जब आदमी शर्म और इज्जत को भी भूल जाता है।'[4]

प्रेमचन्द मानो भारतीय किसान के जीवन का कोना–कोना झाँक आये हैं। उन्होंने बड़ी शिद्दत से यह अनुभव किया कि भारतीय किसान कठिन परिश्रमी है, लेकिन उसके कठिन परिश्रम का फल उसे नहीं मिल पाता है। जिसके फलस्वरूप वह गरीबी और बदहाली में अपना सम्पूर्ण जीवन बिता देता है। इसके अतिरिक्त वह अशिक्षित है और अज्ञानता के कारण निरन्तर शोषण के चक्र में पिसता रहता है। प्रेमचन्द की मुख्य चिंता किसान का शोषण है। प्रेमचन्द जी का 'प्रेमाश्रम' हिन्दी का पहला उपन्यास है, जिसमें किसानों के संघर्ष व समस्याओं की व्यापक अभिव्यक्ति हुई है। इसके पश्चात 'कर्मभूमि', 'गोदान' जैसे उपन्यासों के माध्यम से किसानोंकी समस्याओं को उजागर किया है। इसके अतिरिक्त भी किसानों

के शोषण, बदहाली और संघर्ष के प्रमाणिक व यथार्थ चित्र उनके साहित्य में देखे जा सकते हैं। प्रेमचन्द अपने साहित्य में किसानों के अधिकारों की बात करते हैं। वे चाहते हैं कि जमीन उसी की हो जो रात–दिन एककर जोतता है, उसकी नहीं जो महलों में बैठकर उनके पसीने पर ऐश करता है। किसानों को उनका अधिकार दिलाने की बात प्रेमचन्द ने 'प्रेमाश्रम' उपन्यास के पात्र प्रेमशंकर के माध्यम से कही है–'भूमि उसकी है जो उसको जोते। शासक को उसकी उपज में भाग लेने का अधिकार इसलिए है कि वह देश में शांति और रक्षा की व्यवस्था करता है, जिसके बिना खेती हो नहीं सकती। किसी तीसरे वर्ग का समाज में कोई स्थान नहीं है।'[5]

प्रेमचन्द के 'गोदान' और 'प्रेमाश्रम' उपन्यास के बाद भगवानदास मोरवालय 'नरक मसीहा', राजू शर्माय 'हलफनामा', जगदीश गुप्त। 'कभी न छोड़े खेत', विवेकी राय। 'सोना माटी', कमलकांत त्रिपाठी। 'बेदखल' तथा काशीनाथ सिंह। 'रेहन पर रग्घू', संजीव। 'फांस' और पंकज सुबीर का 'अकाल में उत्सव', इन उपन्यासकारों ने सामंती व्यवस्था, महाजनी सभ्यता, जमींदारी प्रथा, जमीन चकबंदी, जमीन से बेदखली, भूमिहीन होना तथा बाजारवाद की चकाचौंध से साधारण किसानों की बदलती संस्कृति, सरकारी बैंकों में कर्ज अदायगी न करने की समस्या और किसान आत्महत्याएँ इन सारी समस्याओं को, साहित्यकारों ने अपने–अपने तरीके से अभिव्यक्ति दी है। किसान जीवन पर आधारित साहित्य में अभिव्यक्त कृषकों की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक स्थिति की दयनीय दशा को दर्शाया है।

गोदान महाकाव्य का नायक 'होरी' है जो खेतों में जीतोड़ मेहनत करने के बाद भी अपने परिवार वालों का भरण–पोषण बड़ी मुश्किल से कर पाता है। भारतीय समाज में व्याप्त सामंती और सूदखोरी जैसी कुव्यवस्थाओं का शिकार 'होरी' होता है। नजराना देने के बाद भी जब 'होरी' रायसाहब के यहाँ बेगार करने जाता है तो मुन्नी कड़े शब्दों में विरोध करती है। फिर भी सामाजिक परंपरा में बंधा होरी उसकी एक भी नहीं मानता। अंततः होरी अपने खेतों में काम करते–करते प्राण त्याग देता है। ऐसी स्थिति केवल एक होरी की ही नहीं है, बल्कि कई होरी इस समाज में कर्ज भरा जीवन जी रहे हैं। 'गोदान' उपन्यास किसान जीवन की अंदरुनी तह को परत–दर–परत खोलता है।

'फांस' उपन्यास कथाकार संजीव द्वारा लिखित है, जो महाराष्ट्र राज्य के विदर्भ क्षेत्र में निवास करने वाले किसानों के जीवन तथा उनके जीवन में आने वाली विनाशकारी समस्याओं पर आधारित है। यह उपन्यास सबका पेट भरने वाले देश के लाखों किसानों द्वारा की जा रही आत्महत्या पर केंद्रित है। वस्तुतः भारत कृषि प्रधान देश है और भारत की आत्मा गाँवों में निवास करती है। विगत कुछ दशकों से इस देश में किसान आत्महत्या तेजी से हो रही हैं। 'फाँस' उपन्यास के माध्यम से संजीव ने उन सभी पहलुओं को दिखाने की कोशिश की है, जिसमें सभी भारतीय किसानों को गुजरना पड़ रहा है।

इस उपन्यास मे लेखक लिखता है– 'भला कोई कह सकता है कि सुखाड़ के ठनठनाते यवतमाल जिले के इस पूरबी छोर पर 'बनगाँव' जैसा कोई गाँव भी होगा, आधा सूखा। स्कूल में लड़कों के साथ लड़कियाँ भी, जुए में भैंस के साथ बैल भी। जो भी होगा आधा।'[5] संजीव के इस उपन्यास में किसान की बुनियादी समस्याओं जैसे–बीज बोने से लेकर खाद–पानी तथा घर परिवार की आर्थिक समस्या या फिर उत्पादित की गई फसलों को बेचने जैसी समस्याओं को देखते हुए प्रेमचन्द जी के उपन्यास 'गोदान'के केंद्रीय पात्र 'होरी' की याद आ जाती है। जिस प्रकार 'गोदान' में प्रेमचन्द 'होरी' के माध्यम से भारतीय किसानों की दयनीय स्थिति को दर्शाते हैं, उसी प्रकार 'फाँस' में संजीव जी ने 'शिबू' के माध्यम से किसानों की दुर्दशा को चित्रित किया है। संजीव वास्तव में प्रेमचन्द की लेखन परंपरा को आगे बढ़ाने का काम करते हैं।

पंकज सुबीर का 'अकाल में उत्सव' उपन्यास भी किसान जीवन की अभिव्यक्ति करता है। यह उपन्यास गाँव और किसन संस्कृति का एक बहुत ही बेहतरीन उपन्यास है। इस उपन्यास में किसान का महाजनी, सामंती व्यवस्था, सूदखोरी और कर्ज के दल–दल में फंसकर आत्महत्या करने पर विवश होना दर्शाया गया है। इस उपन्यास में चित्रित गाँव का नाम 'सूखापानी' है जो अपने नाम को सार्थक करता है। क्योंकि इस गाँव के किसान की फसल को अतिवृष्टि और अनावृष्टि दोनों ही स्थितियों में नुकसान होता है। 'अकाल में उत्सव' उपन्यास की कथावस्तु 'सूखापानी' नामक गाँव से प्रारंभ होती है जो मध्यप्रदेश का एक आदिवासी गाँव है। इसकी कहानी दो एकड़ जमीन के जोत वाले छोटे किसान रामप्रसाद के इर्द–गिर्द घूमती है। किसान रात दिन जी तोड़ मेहनत करता है तभी तो फसलें भी अच्छी होती हैं, परन्तु महाजन खलिहान पर ही फसल को उठा लेता है।

अंत में रामप्रसाद बैंक द्वारा लिए गए कर्ज के फर्जीवाड़े का शिकार हो जाता है और प्रकृति की मार से उसकी सारी फसल बर्बाद हो जाती है। बैंक के कर्जे को सुनकर उसे ऐसा सदमा लगता है कि वह आत्महत्या कर लेता है। भ्रष्टशासन तंत्र के चलते उसे पागल घोषित कर दिया जाता है। 'अकाल में उत्सव' उपन्यास में एक तरफ सरकारी फंड को सही समय में उपयोग करने के लिए सरकारी प्रयासों द्वारा उत्सव मनाया जाता है और वहीं दूसरी तरफ 'सूखापानी' नामक गाँव का किसान आत्महत्या कर लेता है। इस उपन्यास में किसान की गरीबी का दृश्य प्रस्तुत करते हुए पंकज सुबीर जी लिखते हैं– 'कमला की तोड़ी बिक गई, बिकनी ही थी, छोटे जोत किसान की पत्नी के शरीर पर के जेवर क्रमशः घटने के लिए ही होते हैं और हर घटाव का एक भौतिक अंत शून्य होता है, घटाव की प्रक्रिया शून्य होने तक जारी रहती है।'[6]

हिन्दी कहानी साहित्य में भी किसानों की दयनीय स्थिति का वर्णन मिलता है। 1900 से लेकर 1960 तकके सरस्वती अंक में कृषि की त्रासदी पर एकाध कहानी मिल जाती है। श्रीनाथ सिहं की कहानी 'गरीबों का स्वर्ग' में कुछ हद तक गाँव, गरीबी और किसानों का दर्द दिखाई देता है। प्रेमचन्द जी ने किसान जीवन पर 1924 में तीन महत्त्वपूर्ण कहानियाँ 'मुक्मार्ग', 'मुक्तिधन' और 'सवासेर गेहूँ' लिखी। 'मुक्तिमार्ग' में किसान का साधारण और वास्तविक जीवन चित्रित किया गया है। इस कहानी में यह भी स्पष्ट किया गया है कि खेत पकने से पहले किसान में गर्व पैदा होता है, किन्तु फसल नष्ट होने से वह मुरझा जाता है। 'मुक्तिमार्ग' में प्रेमचन्द जी किसान की इसी भावना को उजागर करते हुए लिखते हैं– 'झींगुर अपने ईख के खेतों को देखता, तो उस पर नशा सा छा जाता। तीन बीघे ईख थी। इसके 600 रु० तो अनायास ही मिल जायेंगे। और जो कहीं भगवान ने डाड़ी तेज कर दी तो क्या पूछना।[8] 'मुक्तिधन' कहानी में यह दिखाया है कि किसान के लिए खेती करना कितना कठिन होता जा रहा है। उनमें नैतिक चिंता भी विद्यमान थी कि किसानों को किस तरह बचाया जाये। इसके लिए बदहाली के कारणों को जानना जरूरी है।

'मुक्तिधन' कहानी में प्रेमचन्द जी लिखते हैं– 'खेती की हालत अनाथ बालक की–सी है। जल और वायु अनुकूल हुए तो अनाज के ढेर लग गये। इनकी कृपा न हुई, तो लहलहाते हुए खेत कपटी मित्र की भाँति दगा दे गये। ओला और पाला, सूखा और बाढ़, टिड्डी और लाही, दीमक और आँधी से प्राण बचे तो फसल खलिहान में आयी।'[9] प्रेमचन्द जी की 'सवा सेर गेहूँ' कहानी में बीस वर्ष तक गुलामी करने के बाद जब शंकर मरता है तो सवा सेर गेहूँ के कर्ज में 120 रुपये उसके सिर पर सवार थे। जिसके भुगतान के लिए उसके जवान बेटे की गर्दन पकड़ ली जाती है। दोनों कहानियों के किसान अंत में मजदूर बन जाते हैं। 'सवा सेर गेहूँ' में इसका कारण महाजन को बताया है, जो धर्म की आड़ में शोषण करता है। इस कहानी के पात्र 'शंकर' के शब्दों में– 'सवा सेर अनाज को लेकर अंडे की तरह ये भूत खड़ा कर

दिया। जो मुझे निगल ही जाएगा। इतने दिनों में एक बार भी कह देते तो गेहूँ दे ही देता। क्या इसी नियत से चुप बैठे रहे।'[11]

प्रेमचन्द की एक बहुत ही प्रसिद्ध कहानी 'पुस की रात' 1930 ई० में प्रकाशित हुई। जो किसान की वास्तविक दशा की नाटकीय अभिव्यक्ति करती है। इसकी पृष्ठभूमि महामंदी की भूमिका अदा करती है। इसमें प्रेमचन्द 'हल्कू' की दशा का चित्रण करते हुए कहता है– 'हल्कू ने रुपये लिये और इस तरह बाहर चला मानों अपना ह्रदय निकालकर देने जा रहा हो। उसने मजूरी से एक–एक पैसा काट–काटकर तीन रुपये कम्मल के लिए जमा किये थे। वह आज निकले जा रहे थे। एक–एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था।'[10] हल्कू किसान कर्जदार है। उसने मजदूरी करके तीन रुपए कमाये हैं, ताकि कम्बल खरीदा जा सके। जिससे पूस की रात में खेत की रखवाली कर सके। उन रुपयों को महाजन ले गया। इस तरह हल्कू किसान से मजदूर बन गया।

प्रेमचन्द ने किसानों पर 'ज्योति' (1933), 'नेउर'(1933), 'दूध का दाम' (1934), आदिक कहानियाँ लिखी। इनमें किसान परिवार की आन्तरिक मूल् व्यवस्था का चित्रण है और उनके सामाजिक, धार्मिक शोषण की प्रक्रिया इसमें दिखाई गई है। अतः प्रेमचन्द की कहानियाँ भारतीय ग्रामीण जीवन का महा आख्यान हैं। प्रेमचन्द ने अपने कथा साहित्य मेंकिसानों की स्थिति का बहुत ही सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। बेचन शर्मा उग्र की भी एक कहानी'अभागा किसान' 1929 के आस–पास लिखी गई, जो किसान के जीवन को चित्रित करती है। वर्ष 1934 में 'गरीबों का स्वर्ग' श्रीनाथ सिहँ द्वारा रचित कहानी में गाँव, गरीबी, खेती का दर्द दिखाई देता है। तब से अब तक गाँव में बहुत कुछ बदला है, मगर इस कहानी में किसान त्रासदी की अभिव्यक्ति आज भी लगभग वैसी ही है।

बहुत कम कथाकार हैं, जो गाँव और खेती की पृष्ठभूमि पर लिखते हैं। धूल–धूसरित वितान, नदी–नाले, हरियाली से मुक्त होते बाग–बगीचे, चिड़ियों की चहचहाट, बैलों के गले से गायब हो चुकी घुंघरुओं की टनटनाहट की जब भी बात उठती है, तो हिन्दी कथा साहित्य में प्रेमचन्द और रेणु से बात शुरू होती है तथा कुछ कदम चलने के बाद कहने को हिन्दी लेखकों का अभाव–सा दिखने लगता है। गाँव की संस्कृति और सामूहिकता में घुन लग चुका है। ऐसे में कुछ ही कथाकार गाँव और किसान की कथा लिख रहे हैं। आज जमींदारी प्रथा तो नहीं है, लेकिन साहूकार या बैंक कर्ज से दबे किसानों की कुर्की और आत्महत्या बढ़ती ही जा रही हैं। विगत दो दशकों में साढ़े तीन लाख किसानों ने आत्महत्या कर ली है। अन्नदाताओं के प्रति व्यवस्था का क्रूर व्यवहार स्थाई स्वरूप ग्रहण कर चुका है जो विकास, सभ्यता और मानवीय सोच को मुहँ चिढ़ा रहा है। आखिर इन बदलते गाँवों और किसानों का यथार्थ, साहित्य में आना चाहिए या नहीं? आना चाहिए तो किस रूप में आना चाहिए?

आज प्रेमचन्द के गाँव नहीं हैं, बल्कि प्रेमचन्द के गाँव से सैकड़ों गुणा छल–कपट, धूर्तता और द्वेष का जन्म हो चुका है। वैश्विक स्तर पर हुए परिवर्तन बता रहें हैं कि सब कुछ बदल गया है। नई तकनीकी के साथ जो आत्मकेंद्रित लम्पट संस्कृति आई है, उसने आस–पड़ोस, हित–मित्र और यहाँ तक कि भाई–बहन सब कुछ निगल लिया है। युवा दिग्भ्रमित और हताश हो रहे हैं। किसान कर्ज से मुक्ति पाने के लिए सल्फास खा रहे हैं या कीटनाशक पी रहे हैं। किसानों और उनके बाल बच्चों का भविष्य अंधकारमय है। हमारी शिक्षा व्यवस्था ने जिस शहरी संभ्रांत वर्ग का निर्माण किया है, वह गाँव से कटा हुआ है। ऐसे समय में ज्यादातर हिन्दी साहित्य शहर केंद्रित हो गया है। खेती को अलाभप्रद बना देने से गाँवों से पलायन तेज हुआ है। गाँवों से किसानों के पलायन से पहले लेखकों का पलायन शुरू हो गया है। ऐसे समय में हिन्दी साहित्य में किसानों के दर्द की उपेक्षा हो रही है।

निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि किसानों की त्रासदी से बड़ी अन्य कोई सामाजिक त्रासदी दिखाई नहीं दे रही है। इस त्रासदी से टकराये बिना कल के भारत का भविष्य चमक नहीं सकता। सरकार नें किसानों की समस्याओं के हल के लिए 'किसान चौनल' की शुरुआत की है। 'किसान चौनल' पर सब कुछ अच्छा है, लेकिन किसानों की दुर्दशा, खाद, पानी, उत्तम बीज, कीटनाशक आदिक की समस्याओं और कृषि उत्पाद का उचित मूल्य गायब हैं। यहाँ कारपोरेट नजरिये से कृषि को प्रस्तुत कर किसानों को गुमराह किया जा रहा है। इस ओर भी साहित्यकारों का ध्यान जाना चाहिए।

पिछले वर्षों से निश्चय ही हिन्दी कहानी में विस्फोट हुआ है, लेकिन किसानों के प्रति संवेदना का विस्फोट होना अभी बाकी है। कृषि की बदलती संस्कृति, उसमें आती विकृति और सरकारी नीति पर साहित्यकारों की निगाह होनी चाहिए। आखिर देश का अन्नदाता कब तक इन तकलीफों से जूझता रहेगा? आज साहित्य को इस कमजोर किसान के साथ खड़ा होना होगा। साहित्य सामाजिक विडंबनाओं को स्वर देने का काम करता है तो उसे ग्रामीण विडंबनाओं से टकराना होगा। हमारे साहित्यकारों को सोचना होगा तथा सरकार को सचेत करना होगा। आज भारत के किसानों के समक्ष व्यापक चुनौतियाँ हैं। किसान की डगर बहुत ही कठिन है। उसके अस्तित्व और अस्मिता का संकट और अधिक सघन होता जा रहा है। उत्पादक श्रमिक और विचारशील मध्यवर्ग के साथ साहित्यकार को भी इसकी लड़ाई में शामिल होना चाहिए। जिससे किसान की सभी समस्याओं का समाधान निकल सके और वह सुखमय जीवन जी सके। किसान के सुखी व समृद्ध होने से हमारा देश भी समृद्धशाली राष्ट्र बन जाएगा।

संदर्भ ग्रंथ :-

1. मध्यकालीन काव्य कुंज, डॉ० रामसजन पाण्डेय, पृष्ठ संख्या–62
2. कर्मभूमि, प्रेमचन्द, डायमंड पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या– 243
3. कथाक्रम, रोहिणी अग्रवाल, पृष्ठ संख्या–50–51
4. गोदान, प्रेमचन्द, रजत प्रकाशन, मेरठ, पृष्ठ संख्या–272
5. प्रेमाश्रम, प्रेमचन्द, अनुपम प्रकाशन, पटना, पृष्ठ संख्या–272
6. फाँस, संजीव, पृष्ठ संख्या–9
7. अकाल में उत्सव, पंकज सबीर, पृष्ठ संख्या–107
8. मुक्ति–मार्ग, premchand.co.in
9. मुक्ति धन, premchand.co.in
10. सवा सेर गेहूँ, rekhta.org
11. पूस की रात, premchand.co.in

ई–मेल आईडी–shakuntla06091973@gail.com

मोबाइलनं०– 8077819081

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 77-79

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पुरस्कार कहानी में निहित अंतर्द्वन्द्व

–डॉ. राजमोहिनी सागर

एसोसिएट प्रोफेसर, हंसराज कॉलेज, दिल्ली यूनिवर्सिटी, दिल्ली।

जयशंकर प्रसाद हिन्दी साहित्य में एक कुशल एवं सफल कहानीकार नाट्यकार एवं छायावादी कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं। वे गहन अनुभूति के रचनाकार हैं। उनका समस्त साहित्य मानवीयता से सम्बंध रखता है। उन्होंने इतिहास के माध्यम से भारतीय अतीत की सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

पुरस्कार कहानी कल्पना पर आधृत ऐतिहासिक परिवेश की कहानी है। यह कहानी 'आकाशदीप' के समान ही एक महान कहानी है।

इसमें छायावाद की सभी विशेषताएँ विद्यमान हैं। 'पुरस्कार' बौद्धकाल से सम्बन्धित कहानी है। यह मूलतः प्रेम और रोमांस की कहानी है साथ ही इसमें देश प्रेम की भावना भी निहित है। इस कहानी की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक मात्र है। पात्र अतीत के है लेकिन प्रसाद जी ने अपनी कल्पना की रंगीनी से उसे नया अर्थ सौन्दर्य दिया है। उसे मानव मन की गुत्थियों से सम्पृक्त किया है। उत्कृष्ट अंर्तद्वन्द्व का सुन्दरतम निदर्शन इस कहानी का सर्वोपरि वैशिष्ट्य है। भावना और कर्त्तव्य, प्रेम और देश भक्ति के बीच उच्च कोटि का अंतर्द्वंद तथा वैसे ही उच्च कोटि की कलात्मकता से सम्पन्न पाठक का हृदय झकझोरने वाला अन्त इस कहानी को विश्वस्तर प्रदान करता है।

पुरस्कार कहानी का कथानक सांस्कृतिक है। इसमतें ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का पुट मिलता है। पुरस्कार के सम्बंध में डा. ब्रह्मदत्त शर्मा का मत है– 'एक कहानी के अंतर्गत जितनी घटनायें आती हैं, उनके सम्बंध निर्वाह का ध्यान उन्होंने बराबर रखा है।"

कहानी का आरंभ वातावरण विशेष से होता है– "आर्द्रा नक्षत्रः आकाश में काले–काले बादलों की घुमड़ जिसमें देवदुन्दुभी का गंभीर घोष/प्राची के एक निरभ्र कोने से स्वर्ण–पुरुष झाँकने लगा था– देखने लगा महाराज की सवारी। शैल माला के अंचल में समतल उर्वरा–भूमि से सौंधी बास उठ रही थी। नगर–तोरण से जयघोष हुआ, भीड़ में गजराज का चामरधारी शुण्ड उन्नत दिखाई पड़ा। वह हर्ष और उत्साह का समुद्र हिलोर भरता हुआ आगे बढ़ने लगा।

प्रभात की हेम किरणों से अनुरंजित नन्हीं–नन्हीं बूंदों का एक झोंका स्वर्ण–मल्लिका के समान बरस पड़ा। मंगल सूचना से जनता ने हर्ष–ध्वनि की।" (पृष्ठ 29)

पुरस्कार कहानी में कौशल राज्य के सांस्कृतिक उत्सव का बड़ा ही संजीव अंकन हुआ है–

'रथों, हाथियों और अश्वारोहियों की पंक्ति जम गई। दर्शकों की भीड़ भी कम न थी। गजराज बैठ गया, सीढ़ियों से महाराज उतरे। सौभाग्यवती और कुमारी सुन्दरियों के दो दल, आम्रपल्लवों से सुशोभित, मंगल–कलश और फूल, कुंकुम तथा खीलों से भरे थाल लिये, मधुर गान करते हुए आगे बढ़े।"(पृष्ठ–29)

पुरस्कार कहानी की नायिका मधुलिका एक अमर व ऐतिहासिक पात्र है। वह कर्त्तव्यनिष्ठ, स्वाभिमानी एवं नैतिक एकनिष्ठता के गुण से युक्त है जिसका वह अंतिम समय तक निर्वाह करती है। मधुलिका कृषक बालिका है। कौशल नरेश द्वारा कृषि के लिए भूमि अधिग्रहित कर लेने पर भी भूमि के बदले में कुछ भी लेना अस्वीकार कर देती है क्योंकि वह उसकी पैतृक सम्पत्ति थी जिसे बेचना वह अपराध समझती है।

'देव! यह मेरे पितृ–पितामहों की भूमि है। इसे बेचना अपराध है; इसलिए मूल्य स्वीकार करना मेरी सामर्थ्य के बाहर है।" (पृष्ठ–30)

राजा द्वारा दिए गए स्वर्ण मुद्राओं को अस्वीकार कर कठिन श्रम करती है और टूटी फूटी झोपड़ी में कष्ट का जीवन व्यतीत करने लगती है–

'मधूक–वृक्ष के नीचे छोटी सी पर्णकुटी थी। सूखे डण्ठलों से उसकी दीवार बनी थी। मधुलिका का वही आश्रय था। कठोर परिश्रम से जो रूखा अन्न मिलता, वहीं उसकी सांसों को बढ़ाने के लिए पर्याप्त था।" (पृष्ठ–32) शरीर से शक्तिहीन, निर्बल होकर भी वह किसी की सहायता लेने को तैयार नहीं। अपने परिश्रम द्वारा पेट भरने में ही उसे आत्मशांति का अनुभव होता है। जो उसकी देश भक्ति और ईमानदारी का प्रमाण है।

राजकीय उत्सव में मगध का राजकुमार अरूण मधुलिका के सौन्दर्य पर मुग्ध हो, उससे प्रणय निवेदन करता है किन्तु मधुलिका इसे अपना अपमान समझ उसके प्रणय को ठुकरा देती है किंतु बाद में पश्चाताप करती है। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि व्यक्ति किंही परिस्थितियों में किसी को मानसिक आघात पहुंचाकर बाद मे ंउस पर पश्चाताप करता है। मधुलिका के हृदय में भी टीस उठती है।

तीन वर्ष के बाद जब अरूण कष्ट और संकट की घड़ी में मधुलिका का उद्धारक बनकर आता है तो मधुलिका उसे ठुकरा नहीं पाती और राजकुमार के कहे अनुसार कौशल राज्य के दक्षिणी दुर्ग की जंगली भूमि राजा से उपहार में मांग लेती है। राजकुमार अरूण सेना सहित यहीं से कौशल पर आक्रमण करने की योजना बनाता है और मधुलिका को कौशल की रानी बनाने का वचन देता है। मधुलिका भी नारी मन की प्रवृत्ति के अनुसार ही रानी बनने के स्वप्न भी देखने लगती है।

राजकुमार अरूण की दुरभिसंधि का पता लगते ही मधुलिका विक्षिप्त सी हो उठती है। "वह उधेड़बुन में विक्षिप्त–सी चली जा रही थी। उसकी आंखों के सामने कभी सिंहमित्र और कभी अरूण की मूर्ति अंधकार में चित्रित हो जाती।" (पृष्ठ–36)

अरूण उसी के देश पर आक्रमण के लिए पूर्णतः सम्बद्ध है। ऐसे समय में मधुलिका वैयक्तिक प्रेम और राष्ट्र के द्वन्द्व से ग्रसित हो जाती हैं एक ओर उसका प्रेमी राजकुमार अरूण है जिसे वह श्रीवास्ती दुर्ग पर आक्रमण करने योग्य स्थान का भेद देती है वहीं दूसरी ओर उसका राष्ट्र प्रेम है जो उसकी कुल गौरव परम्परा का प्रतीक है और उसे राष्ट्रविरोधी कार्य करने से रोकता है। यहाँ उसके मन में एक ओर व्यक्तिगत सुख की भावना और दूसरी ओर समाहित हित की कामना का संघर्ष उभर कर आता है। काफी देर तक दोनों भावों का संघर्ष चलता है। वह प्रेम के लिए राष्ट्र की और राष्ट्र के लिए प्रेम की बलि नहीं दे सकती।

मधुलिका का हृदय भी निविड़तम से घिरा था। उसका मन सहसा विचलित हो उठा, मधुरता नष्ट हो गई। जितनी सुख–कल्पना थी, वह जैसे अधंकार में विलीन होने लगी। फिर सोचने लगी– वह क्यों सफल हो? श्रीवास्वती दुर्ग एक विदेशी के अधिकार में क्यों चला जाए? मगध कौशल का चिर–शत्रु! ओह, उसकी विजय! कौशल नरेश ने क्या कहा था– 'सिंहमित्र की कन्या'।" सिंहमित्र कौशल का रक्षक वीर, उसी की कन्या आज क्या करने जा रही है? नहीं नहीं! "मधुलिका! मधुलिका!!" (पृष्ठ–36)

वह विकारग्रस्त स्वर में चिल्ला उठती है– ''बाँध लो, मुझे बांध लो। मेरी हत्या करो। मैनें अपराध ही ऐसा किया है।''' (पृष्ठ–36)

आत्मग्लानि से भरकर राज सैनिको ंको अरूण का रहस्य बता देती है। कौशल राज्य की रक्षा होती है और अरूण बंदी बनाया जाता है। कौशल को मगध के इस षडयंत्र से बचाने के लिए राजा मधुलिका को पुरस्कार देना चाहते हैं तब मधुलिका पुरस्कार के रूप में प्राणदंड की मांग कर अरूण के प्रति अपने प्रेम की पराकाष्ठा का परिचय देती हुई कहती है–"तो मुझे भी प्राणदंड मिले, कहती हुई वह बन्दी अरूण के पास जा खड़ी हुई।" (पृष्ठ–38)

इस प्रकार पुरस्कार कहानी व्यक्तिगत प्रेम पर देश प्रेम के महत्व को स्पष्ट करती है। पुरस्कार में दो आदर्शों की स्थापना की गई है– एक मधुलिका अपने कर्त्तव्य के लिए अपने प्रेम की बलि दे देती है और जब प्रेम प्रतिदान मांगता है तब वह वहां भी नहीं चूकती और स्वयं को भी अरूण के साथ मृत्युदंड देने की याचना करती है। मधुलिका का अरूण को बंदी बनवाना कर्त्तव्य पथ का आदर्श तो है ही साथ ही उसका दायित्व भी बन जाता है कि देश को संकट से और विदेशियों के हाथ में जाने से बचाने के लिए कोई भी त्याग किया जा सकता है। लेकिन इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि अपने प्रेम के प्रति वह ईमानदार नहीं है। कर्त्तव्य निश्चय ही प्रेम के समक्ष अधिक महत्व रखता है। मधुलिका अपने राष्ट्रप्रेम के कर्त्तव्य को पूरा करने के बाद जब पुरष्कार प्राप्त करने का समय आता है तो वह प्राणदंड के लिए अपने प्रेमी अरूण के साथ स्वयं को खड़ा करती है। वह प्रकट कर देती है कि राष्ट्र के प्रति उसका जो कर्त्तव्य था, उसने पूरा किया, किंतु वैयक्तिक प्रेम के प्रति वह उदासीन है, ऐसा नहीं है.। प्राणदंड की मांग कर वह अपने प्रणय का मान भी रख लेती है।

संदर्भ ग्रन्थ :–

1. संपा. डॉ. रामकिशोर यादव – हिन्दी गद्य उद्‌भव और विकास।
2. केदारनाथ शुक्ल – प्रसाद की कहानियां
3. इन्द्रनाथ मदान – प्रसाद प्रतिभा
4. मालती शास्त्री – प्रसाद की कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन।
5. नंददुलारे वाजपेयी – जयशंकर प्रसाद

Dr. Raj Mohini Sagar
Associate Professor, Hansraj College, Delhi University, Delhi
Ph: 9810888913

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 80-86

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ऑनलाइन शिक्षा के दौरान होने वाली बुनियादी समस्याएं और उनका समाधान

-ROHTASH

Assistant Professor, D.N. College Hisar
Ph.d. (Research Scholar), CMT, G.J.U. S.T., Hisar (Haryana)

शोध सारांश :-

किसी भी देश का विकास और उन्नति विशेष रूप से उसकी शिक्षा व्यवस्था पर निर्भर करती है। भारत में प्राचीन काल से ही शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया है और समय समय पर जरूरत के अनुसार हमारी शिक्षा व्यवस्था में बदलाव हुए है। आज समय की मांग के अनुसार हम सभी ने ऑनलाइन शिक्षण को अपनाया है। ऑनलाइन शिक्षण हमारे लिए अधिगम का एक सशक्त माध्यम बन के हमारे सामने आया है। लेकिन ऑफलाइन शिक्षण की तुलना में हमे ऑनलाइन शिक्षण में काफी समस्याओं का सामना भी करना पड़ रहा है। इस शोध के जरिये हमने सर्वेक्षण विधि द्वारा ऑनलाइन शिक्षण के दौरान आने वाली प्रमुख समस्याओं के बारे में जानने का प्रयास किया है और साथ ही उनके समाधान खोजने की कोशिश भी की गयी है।

कुंजी शब्द : ऑनलाइन शिक्षण, ऑफलाइन शिक्षण, ऑफलाइन शिक्षण समस्या, ऑफलाइन शिक्षण समाधान।

भूमिका :-

"पिछले तीन दशकों में जीवन के हर क्षेत्र में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी सेवाओं का काफी विस्तार हुआ है। शिक्षा क्षेत्र भी इसका अपवाद नहीं है। प्राचीन गुरुकुल तथा आश्रम की वाचिक परंपरा से होते हुए शिक्षा ने अनेक सोपान तय किये हैं। पिछली सदी के कमोबेश पारंपरिक श्यामपट तथा खड़िया मिट्टी (चोक) के दौर से गुजरते हुए इक्कीसवीं सदी के इस दूसरे दशक में पठन–पाठन का समूचा परिदृश्य बहुत बदल चुका है। आज की स्कूली शिक्षा नवयुगीन साधनों तथा युक्तियों से सुसज्जित होती जा रही है। साधारण ब्लैकबोर्ड की जगह स्मार्टबोर्ड ने ले ली है तथा विविध प्रकार के मार्कर पेन ने खड़िया मिट्टी (चोक) का स्थान ले लिया है। इंगित करने के लिये इस्तेमाल होने वाली स्टिक का स्थान लेजर पॉइंटर ने ले लिया है। स्लाइड प्रोजेक्टर तथा एलसीडी प्रोजेक्टर अब हर कक्षा की अनिवार्य आवश्यकता बनते जा रहे हैं।"[1]

"कोरोना से इतर भी देखा जाए तब भी भारत जैसे गरीब देश में ऑनलाइन शिक्षा की जरूरत आ गई है, क्योंकि बढ़ती जनसंख्या और जनता की अपेक्षाओं के अनुरूप हमारे पास पर्याप्त स्कूल–कॉलेज उपलब्ध नहीं हैं। नर्सरी और प्राइमरी कक्षाओं में दाखिले के लिए भी पूरे देश में अफरा–तफरी मची रहती है। ऑनलाइन के विकल्प से स्कूलों पर दबाव भी कम होगा और अभिभावकों एवं बच्चों के लिए अपने–अपने ढंग से पढ़ने–पढ़ाने की स्वतंत्रता भी। यानी स्कूल में दाखिले की अनिवार्यता खत्म हो जाएगी।" [2]

भारत में ऑनलाइन शिक्षण को लेकर काफी समस्याएँ हमारे सामने निरंतर आ रही है। अगर हमें गुणवत्तापूर्वक शिक्षा चाहिए तो हमें इनका समाधान करना जरूरी है। भारत में ऑनलाइन शिक्षा के दौरान वैसे तो अनगिनत समस्याएं

आ सकती जैसे की मानसिक स्तर पे, तकनीकी स्तर पे, वैचारिक स्तर और आर्थिक स्तर पे। लेकिन ऑनलाइन शिक्षा के दौरान कुछ बुनियादी समस्याएं ऐसी भी है इनका समाधान होना जरूरी है और इनका समाधान हम सब मिलकर कर सकते है।

"इंटरनेट स्पीड की समस्या, तकनीक का अभाव, तकनीकी समझ की परेशानी, ऑनलाइन शिक्षण का स्वरूप, आर्थिक अभाव, स्टडी के दौरान घर में ध्वनि शोर, प्रतिपुष्टि (Feedback) का अभाव, पाठ्य सामग्री ना मिल पाना। ऑनलाइन शिक्षा के दौरान आने वाली ये कुछ बुनियादी समस्याएं है।"[3] इस शोध के जरिये हम ये जानने का प्रयास करेंगे की इन समस्याओं का कैसे और क्या समाधान हो सकता है।

साहित्य समीक्षा :-

अतुल तिवारी ने अपने लेख "ई–शिक्षा क्या है?" में बताया की– "ई–शिक्षा का अर्थ इंटरनेट से सूचना प्रदान करने से कहीं ज्यादा है। ई–शिक्षा उन सभी चीजों तथा, प्रक्रिया को अपने अन्दर समाहित करती है जो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम का उपयोग व्यावसायिक शिक्षा को सुचारू रूप से प्रस्तुत करते हैं। ई–शिक्षा शब्द का प्रयोग एक ऐसे ढांचे के रूप में किया जाता है जो लगभग सभी इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों (इंटरनेट, इंट्रानेट, एक्सट्रानेट, कृत्रिम उपग्रह प्रसारण, ऑडियो / वीडियो, इंटरेक्टिव टेलीविजन, सी–डी इत्यादि) को पेशेवर शिक्षा को विद्यार्थीयों तक बड़े ही रोचक तरीके से पहुँचाता है।"[4]

वर्तमान में ऑनलाइन शिक्षा हमारे लिए फायदेमंद साबित हो रही है और इसको आसानी से प्राप्त किया जा सकता है लेकिन फिर भी विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षा के दौरान काफी दिक्कतों को सामना करना पड़ रहा है।

ऋतुपर्ण दवे ने अपने लेख – "Online Education : बच्चों की शिक्षा पर उठते सवाल?" में कहा है की "2018 में जारी सरकारी आंकड़े बताते हैं कि भारत में महज 38 फीसदी लोगों के पास इंटरनेट कनेक्शन हैं उसमें भी 84 फीसदी शहरी तथा 16 फीसदी ग्रामीण हैं। यानी शहरी के मुकाबले ग्रामीण इंटरनेट से कोसों दूर हैं। जबकि दूसरी बड़ी बात यह भी कि जिनके पास इंटरनेट की सुविधा है वो कनेक्टिविटी को लेकर परेशान रहते हैं। दूर दराज के ग्रामीण इलाकों सहित केन्द्र शासित प्रदेश जम्मू–कश्मीर में अभी तक इंटरनेट की 2जी सेवा ही पहुंची है। ऐसी स्थिति में भी ऑनलाइन शिक्षा की उपयोगिता स्वतः समझ आ जाती है।"[5]

इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एजुकेशन एंड रिसर्च (IISER), भोपाल के निदेशक शिवा उमापति कहते हैं, ''जबकि ऑनलाइन कक्षाएं छात्रों को सीखने की प्रक्रिया को जारी रखने की अनुमति देती हैं, लेकिन यह कभी भी पारंपरिक सेट अप को दोहरा नहीं सकता है, जो चर्चा और बातचीत करने के लिए एक वातावरण प्रदान करता है।''[6]

Dr. Sintu Ganai ने अपने शोध पत्र में बताया की 'SWAYAM के माध्यम से पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों के छात्र आसानी से शिक्षा ग्रहण कर सकते है। भविष्य में अच्छी ऑनलाइन शिक्षा के लिए हमें वित्तीय संसाधन, पहुंच और इक्विटी, गुणवत्ता मानक, प्रासंगिकता, बुनियादी ढांचा की काफी जरूरत है।"[7]

इस शोध के लिए हमें काफी साहित्य समीक्षा की, हमे पता चला की ऑनलाइन शिक्षण के दौरान काफी समस्याएं हो सकती है। अलग अलग शोधकर्ताओं ने अलग अलग समाधान भी बताये है जो ऑनलाइन शिक्षण के लिए काफी लाभदायक सिद्ध हो सकते है।

शोध उदेश्य :-

1. ऑनलाइन शिक्षण के दौरान क्या क्या समस्याएं आती है।
2. ऑनलाइन शिक्षण के दौरान होने वाली समस्याओं के बावजूद विद्यार्थी ऑनलाइन और ऑफलाइन शिक्षण में किसे ज्यादा पसंद करते है।
3. ऑनलाइन शिक्षण के दौरान आने वाली समस्याओं का समाधान जानना।

शोध परिकल्पना :

1. ऑनलाइन शिक्षण के दौरान मुख्य समस्या इंटरनेट की होती है।
2. ऑनलाइन शिक्षण के दौरान आने वाली समस्याओं का काफी समाधान हम खुद कर सकते है।
3. ऑनलाइन शिक्षण के दौरान होने वाली समस्याओं के बावजूद, ऑनलाइन शिक्षण को ज्यादा पसंद किया जाता है।

शोध विधि :

इस शोध के लिए हमने ऑनलाइन गूगल फॉर्म के द्वारा सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया है। इस ऑनलाइन फॉर्म में हमने बंद प्रश्नावली का उपयोग करते हुए 107 उत्तरदाताओं ने अपने विचार हम से साझा किये। इस शोध सर्वेक्षण में 18 से 35 उम्र तक के उत्तरदाताओं ने भाग लिया।

डेटा संकलन एवम प्रस्तुति :

सारणी 1.

Q 1. **क्या आपने ऑनलाइन अध्ययन करते है या कभी किया है?**

उत्तरदाता	हाँ	कभी नही की	कुल
	106	1	107
	प्रतिशत 99.1 :	0.9 प्रतिशत	100 प्रतिशत

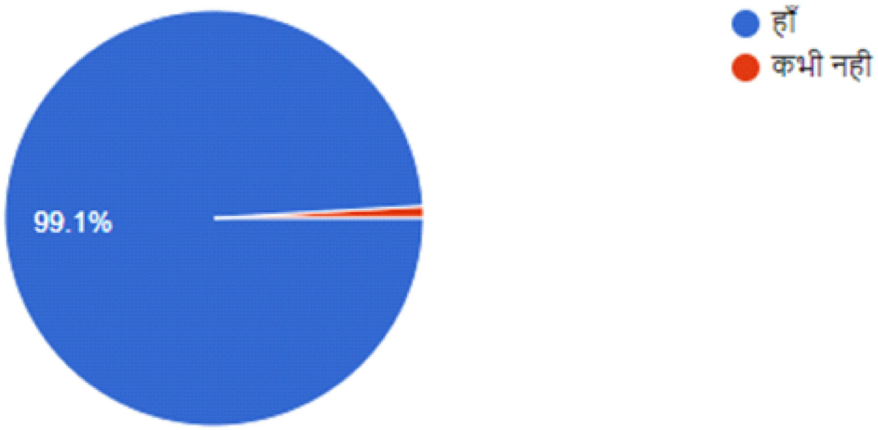

हमारी शोध में सबसे पहले हमने उत्तरदाताओं से ये जानने की कोशिश की थी कि क्या आप ऑनलाइन अध्ययन करते है या कभी किया है ? इसका जबाब 99.1 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने हाँ में दिया है यानी की इस से हमें पता चलता है की लगभग सभी 25 से 35 उम्र के विद्यार्थियों ने कभी न कभी ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण की है या अब भी कर रहे है।

सारणी 2.

Q. 2. क्या आपको ऑनलाइन अध्ययन (स्टडी) के दौरान परेशानी आती है?

उतरदाता	हाँ	नहीं	कुल
	60	47	107
	प्रतिशत 56.1 :	43.9	100 प्रतिशत

दूसरे प्रश्न में हमने ये जानने की कोशिश की "क्या आपको ऑनलाइन अध्ययन (स्टडी) के दौरान परेशानी आती है?" तो 56.1 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा की उनको ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण करने में परेशानी आती है।

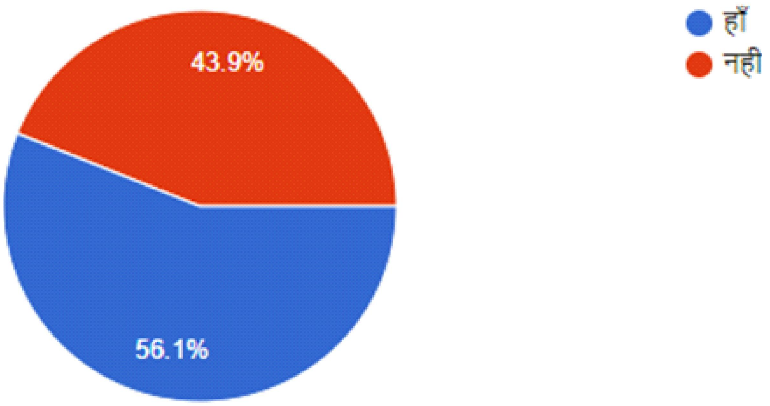

सारणी 3.

Q.3. ऑनलाइन अध्ययन (स्टडी) के दौरान मुख्य रूप से आपको क्या परेशानी आती है?

प्रश्न	हाँ		कुल
इंटरनेट स्पीड की समस्या	74	69.2%	107
तकनीक का अभाव	20	18.7%	107
तकनीकी समझ की परेशानी	18	16.8%	107
ऑनलाइन शिक्षण का स्वरूप	16	15%	107
आर्थिक अभाव	32	29.9%	107
स्टडी के दौरान घर में ध्वनी शोर	31	29%	107
प्रतिपुष्टि (Feedback) का अभाव	29	27.1%	107
पाठ्य सामग्री ना मिल पाना	43	40.2%	107

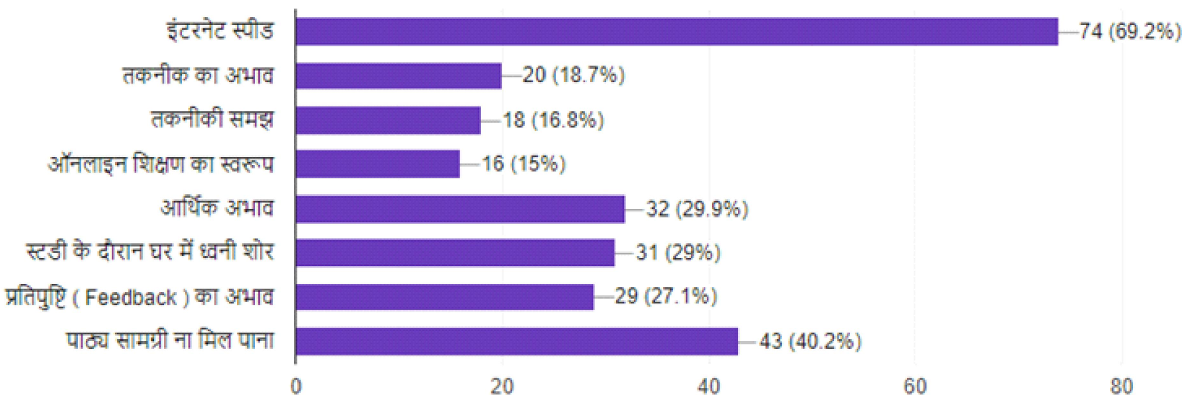

प्रश्न 3 में हमने ये जानने का प्रयास किया कि "ऑनलाइन अध्ययन (स्टडी) के दौरान मुख्य रूप से आपको क्या परेशानी आती है?" इस प्रश्न में हमने उत्तरदाताओं को एक से अधिक विकल्प चुनने का अधिकार दिया है।

सभी उत्तरदाताओं ने अपनी एक से अधिक अलग अलग समस्याएं बताई है। इनमे सबसे बड़ी समस्या इंटरनेट की सामने निकल कर आई. 69.2 प्रतिशत उतरदाताओं ने कहा की उनको ऑनलाइन शिक्षा के दौरान इंटरनेट की मुख्य

समस्या होती है। 18.7% लोगो को तकनीक का अभाव है जबकि 16.8% लोगो को तकनीकी समझ ना होने की वजह से ऑनलाइन शिक्षा में परेशानी होती है। 15% लोगो को ऑनलाइन शिक्षण का स्वरूप सही नहीं लगा। 29.9 % लोगों को आर्थिक अभाव की वजह से ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण करने में दिक्कत आती है। 29 % लोगों को ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण करते समय अपने घर से या अन्य जगह से ध्वनि शोर की समस्या होती है। ऑनलाइन शिक्षा के दौरान 27.1 % लोगों को सही से प्रतिपुष्ठी यानि फीडबैक नहीं मिल पाता। इस सर्वेक्षण एक अहम पहलू सामने आया है की 40.2 % लोगों को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान पाठ्य सामग्री नहीं मिल पाती जिससे उनको काफी समस्या होती है।

सारणी 4.

Q. 4. **ऑनलाइन अध्ययन (स्टडी) के दौरान होने वाली परेशानियों के बावजूद, आपको पढ़ने का कौन सा तरीका अच्छा लगता है?**

उत्तरदाता	ऑनलाइन	ऑफलाइन	कुल
	70	37	107
प्रतिशत	65.4%	34.6%	100%

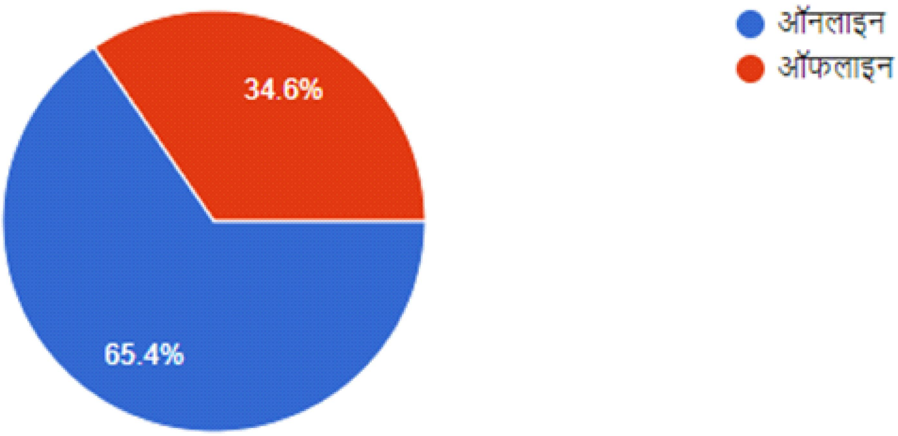

उत्तरदाताओं द्वारा प्रश्न 5 में में दिए गए जवाब से पता चलता है की 65.4 प्रतिशत लोगों को ऑनलाइन शिक्षा के दौरान आने वाली परेशानियों के बावजूद ऑफलाइन शिक्षा से ज्यादा ऑनलाइन शिक्षा ज्यादा अच्छी लगती है।

ऑनलाइन शिक्षण के दौरान होने वाली समस्याओं के लिए कुछ प्रस्तावित समाधान :-

इंटरनेट स्पीड : ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण करने के लिए सबसे पहली जरूरत एक अच्छे इंटरनेट कनेक्शन की होती है। 69.2 प्रतिशत लोगों इंटरनेट की दिक्कत आती है ऑनलाइन शिक्षा के दौरान। इसके लिए हम कुछ उपाय कर सकते है। इसके लिए आप किसी अच्छे इन्टरनेट प्रदान करने वाली कंपनी का कनेक्शन ले सकते है। जब भी आप ऑनलाइन क्लास ले रहे हो तो उस टाइम किसी ऐसे स्थान पे जाना चाहिए जहां पे नेटवर्क अच्छा आता हो। हमेशा ध्यान रखे की ऑनलाइन क्लास होने तक आपका डेटा खत्म ना हो। इंटरनेट की अच्छी स्पीड पाने के हम wifi का उपयोग भी कर सकते है। ये कुछ उपाय अपना कर हम इंटरनेट की समस्या से कुछ हद तक समाधान पा सकते है।

तकनीक का अभाव : हमारी शोध में पाया गया की 18.7 प्रतिशत विद्यार्थियों के पास ऑनलाइन क्लास लेने के लिए अच्छी तकनीक नहीं है। काफी लोगों के पास अच्छा स्मार्टफोन ना होने की वजह से वो ऑनलाइन शिक्षा नही ले सकते। इस समस्या से उभरने के लिए हम अपने किसी दोस्त या जान पहचान वाले व्यक्ति से सहायता ले सकते है। ऑनलाइन शिक्षा देने वाली संस्था को अच्छे सॉफ्टवेयर और एप्प के बारे में बताना चाहिए ताकि अच्छे से ऑनलाइन शिक्षण हो सके। हमारे पास अच्छी तकनीक के सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर नही है तो इनको जल्द से जल्द उपलब्ध करा लेना

चाहिए। काफी कोशिश करने के बाद भी अगर जरूरी सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर ना मिले तो हमे जरूर अपने ऑनलाइन अध्यापक से ईमेल इतियादी के जरिये बात करनी चाहिए। ऐसा करने से हमारे पास तकनीकी सुविधाएं आसानी से उपलब्ध हो सकती है।

तकनीकी समझ : काफी विद्यार्थियों के पास ऑनलाइन शिक्षा के लिए अच्छे तकनीकी साधन होने के बावजूद उनको उनको अच्छे से प्रयोग करने की समझ नही होती जोकि ऑनलाइन शिक्षण में बाधा डालती है। इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए सबसे पहले ऑनलाइन शिक्षा देने वाली संस्था या अध्यापक को ऑनलाइन शिक्षा से सम्बन्धित सभी जरूरी तकनीक के बारे में अच्छे से बताना चाहिए। अगर हमे कुछ भी तकनीकी बात समझ ना आये तो हमे उसके बारे में पूछने से कतराना नहीं चाहिए। इसके लिए हम आपके किसी सम्बन्धी की भी सहायता ले सकते है।

ऑनलाइन शिक्षण का स्वरूप : ऑनलाइन पढ़ने वाली संस्था के लिए जरूरी है की उनका शिक्षण स्वरूप ऐसा होना चाहिए जो ज्यादा से ज्यादा विधार्थियों के लिए सहज साबित हो। अगर विधार्थियों को अध्यापक के पढ़ने का तरीका या माध्यम अच्छा ना लगे तो उसके बारे में आपका फीडबैक जरुर देना चाहिए ताकि अध्यापक आपकी आवश्यकता के अनुसार सुधार कर सके।

आर्थिक अभाव : शोध के दौरान पता चला की 29.9 प्रतिशत शिक्षार्थी आर्थिक कमी की वजह से ऑनलाइन शिक्षा नहीं ले पाते। इसके लिए कुछ उपाए है जैसे की शिक्षार्थी के पास स्मार्टफोन नही तो वो कुछ पैसों से पुराना स्मार्ट फोन खरीद सकता है। अगर इंटरनेट के लिए पैसे नहीं है तो वो अपने किसी दोस्त इतियादी का wifi उपयोग कर सकता है या किसी अन्य दोस्त के साथ मिलकर ज्यादा डेटा वाला इंटरनेट पैक ले सकता है जिस से दोनों को लाभ हो सके। सरकार ने काफी जगह पे फ्री wifi की सुविधा भी दी हुयी है इसका भी लाभ लिया जा सकता है।

अगर ऑनलाइन शिक्षा के लिए आपसे ज्यादा पैसे लिए जा रहे है तो आप उनसे पैसे कम करने का अनुरोध भी कर सकते है। इसके अलावा फ्री में भारत सरकार द्वारा SWAYAM PARBHA के जरिए 24 घंटे फ्री में 32 DTH चैनल की सुविधा भी दी जा रही है। इनके जरिये 9वीं से 12वी कक्षा तक के विद्यार्थी अपनी तैयारी अच्छे से कर सकते है।

स्टडी के दौरान घर में ध्वनि शोर : ऑनलाइन शिक्षण के दौरान घर में ध्वनि शोर काफी हो सकता है। इसको कम करने के लिए काफी उपाय कर सकते है। सबसे पहले जब ऑनलाइन क्लास होने वाली होतो हमे एक ऐसे स्थान का चुनाव करना चाहिए जहां पे कम से कम ध्वनि शोर हो। ऑनलाइन क्लास लेने से पहले हम अपने परिवार के सदस्यों को बता देना चाहिए की इतने बजे से इतने बजे तक घर में किसी भी तरह का शोर ना हो और बहुत जरूरी काम होने पे ही इसरो में बताये। इसके अलावा ध्वनी शोर कम करने के लिए हम अपने मोबाइल फोन को साइलेंट मोड़ पे भी डाल सकते है।

प्रतिपुष्टि ¼Feedback½ का अभाव : ऑनलाइन अध्ययन के दौरान 27.1 प्रतिशत लोगों को प्रतिपुष्टि यानि फीडबैक का अभाव रहता है। इसके लिए ऑनलाइन पढ़ने वाले अध्यापक और संस्था का कर्तव्य बनता है की वो सभी अध्ययनकर्ताओं को सही समय पर तुरंत फीडबैक दे। विद्यार्थी भी लगातार अपना प्रश्न जानने का प्रयास करता रहे तथा देर से आने वाले प्रतिउत्तर के बारे में अध्यापक को अवगत करवाए। ऐसा करने से फीडबैक प्रक्रिया में काफी सुधार होगा।

पाठ्य सामग्री ना मिल पाना : सर्वेक्षण के दौरान पता चला की 40.2 प्रतिशत विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान पाठ्य सामग्री ना मिल पाने से समस्या होती है। इसके लिए काफी समाधान किए जा सकते है। सबसे पहले ऑनलाइन शिक्षा देने वाले अध्यापक को सभी के लिए पाठ्य सामग्री उपलब्ध करवानी चाहिए। विद्यार्थी पाठ्य सामग्री के लिए ईमेल, कमेंट इतियादी के जरिये अध्यापक से निवेदन भी कर सकते है। अगर निवेदन करने पे भी पाठ्य सामग्री ना मिले तो हम ऑनलाइन गूगल पे अपना सब्जेक्ट और टॉपिक का नाम डाल कर साथ में पीडीफ लिख के सर्च कर

सकते है, ऐसे में काफी सम्भावना होती है की हम फ्री में पाठ्य सामग्री ले सकते है।

इसके अलावा हम भारत सरकार के Massive Open Online Course (MOOC), Study Webs of Active&Learning for Young Aspiring Minds (SWAYAM), National Digital Library (NDL), e.PG Pathshala तथा म–Gyankosh-IGNOU जैसे ऑनलाइन प्लेटफोर्म का उपयोग करके हम बिल्कुल फ्री में पाठ्य सामग्री ले सकते है।

निष्कर्ष :–

उपरोक्त शोध द्वारा किये गये सर्वे द्वारा हमे पता चला है की शिक्षार्थियों को ऑनलाइन शिक्षा के दौरान बहुत से समस्याओं का सामना करना पड़ता है। भारत सरकार द्वारा और ऑनलाइन शिक्षण संस्थाओ द्वारा उनको कम करने का प्रयास भी किया गया है। अविष्कार की जननी है इस बात को ध्यान में रखते हुए हम ऑनलाइन शिक्षा के दौरान आने वाली समस्याओं का समाधान हम अपने स्तर पे भी कर सकते है। इस शोध में हमने ऑनलाइन शिक्षा के समय आने वाली समस्याओं के लिए काफी समाधान का सुझाव दिया है जो निश्चित रूप से ऑनलाइन शिक्षा पद्धति में सुधार लायेगा।

संदर्भ :–

1. इलेक्ट्रॉनिक शिक्षा : विशेषताएँ और चुनौतियाँ. (20, 2017, April 30) Retrieved from https%//drishtiias.com/hindi/daily&updates/daily&news&editorials/limitations&of&online&learning
2. Singh, B. (2020, April 21). ऑनलाइन शिक्षा की जरूरत : नई शिक्षा नीति में ऑनलाइन शिक्षा को शामिल किया जाए। Retrieved from https%//www.jagran.com/editorial/apnibaat&online&education&is&need&of&hour&online&education&must&be&included&in&new&education&policy&20211495.html
3. Kumar Jha, P. (2020, May 8). कम चुनौतियां नहीं है ऑनलाइन शिक्षा में। Retrieved from https%//www.patrika.com/opinion/to&many&challenges&in&online&education&6078969/
4. Tiwari A. (N.D.). ई–शिक्षा का क्या है? – www.AtuL Tiwary.com. Retrieved from https%//sites.google.com/site/wwwatultiwarycom/home/i&siksa&ka&kya&hai
5. nos. _- (2020, May 18). Online education : बच्चों की शिक्षा पर उठते सवाल? Retrieved from https%//hindi.webdunia.com/my&blog/online&education&120051800025_1.html
6. Mishra, S. (2020, April 13). Why online learning is not for everyone & Times of India. Retrieved from https%//timesofindia.indiatimes.com/home/education/news/why&online&learning&is&not&for&everyone/articleshow/75121377.cms
7. Ganai, S. (2019, July 2). Online Programme in Higher Educationin India : Challenges and Opportunities. Retrieved from http%//www.wbnsou.ac.in/openjournals/Issue/2nd&Issue/July2019/Sintu_7.pdf

H-No- 645] V-P-O- Behbalpur

Pin Code% 125005

rohtashnimi@gmail-com]

Contact % 7015292083] 9034277375

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811
Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 87-93
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

निर्णयन (Decision Making)

–प्रो. कुसुम यदुलाल,
श्री लाल बहादुर शास्त्री, राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली–110016

शिक्षा प्रशासन में निर्णय प्रक्रिया का अत्यंत ही महत्वपूर्ण स्थान है। इसलिए निर्णयन के सम्बध में यह कहा जाता है कि ''प्रशासन निर्णय के साथ प्रारंभ होता है और निर्णय के साथ ही समाप्त होता है।'' बिना निर्णय के प्रशासन की कल्पना ही नही की जा सकती है इसे प्रशासन का केन्द्र बिंदू कहते है। प्रशासन का मुख्य कार्य सम्भवतः प्रभावशाली ढ़ंग से निर्णय प्रक्रिया का विकास और उसे विकसित करना है निर्णय लेना सम्रग संगठन के प्रशासन के प्रत्येक कार्य करने में व्याप्त रहता है अतः आवश्यकता इस बात की है कि प्रशासनिक सिद्धांतों में निर्णय प्रक्रिया को अवश्य सम्मलित किया जाना चाहिए ताकी एक प्रशासक सही निर्णय ले सके।

निर्णयन का अर्थ एवं परिभाषाऐं :-

निर्णयन प्रक्रिया का इतिहास काफी प्राचीन नही तो नवीन भी नहीं है इसकी उत्पति सन 1950 के दशक के आसपास मानी जाती है तथा समस्त प्रशासनिक साहित्य को देखा जाऐ तो वह एक प्रकार से नीति निर्धारण का ही साहित्य है। वर्तमान में अब ऐसा नहीं है इसका विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग किया जाता है। सामान्यतः निर्णय एक प्रकार का निश्चयीकरण है जो किसी शैक्षिक या प्रशासनिक समस्या के समाधान हेतु किया जाता है। निर्णयन के अंतर्गत कोई प्रबंधक/प्रशासक यह निर्धारित करता है कि उसे क्या कार्य करना है? क्या नहीं करना है? क्या सही है? क्या अनुचित है? तथा क्या उचित है? इस कार्य विधि का निर्धारण करना ही निर्णय कहलाती है। कुछ विद्वान इसे वैकल्पिक कार्य विधि, मूल्यांकन और चुनाव विधि से भी सम्बोधित करते हैं, कुछ ने इसे उपलब्ध विकल्पों के आधार पर भावी घटना क्रम के रूप देखा है और कुछ ने निर्णय लेने को ही प्रबंध माना है।

परिभाषाऐं :-

निर्णयन के अर्थ को और अधिक स्पष्ट रूप में समझने के लिए समय–समय पर विभिन्न विद्वानों ने जो परिभाषाऐ दी है वे इस प्रकार है :–

हॉज और जानसन (Hodge and Johnson) के अनुसार–

''अनेक उपलब्ध विकल्पों में से एक क्रिया पथ का चयन ही निर्णयन है।''

"Decision making is the selection of a course of Action from a number or Available alternations."

वेबस्टर शब्दकोश (Webster Dictionary) के अनुसार–

''निर्णयन किसी व्यक्ति के मस्तिष्क में एक विचार या कार्य करने के क्रम का निश्चित की प्रक्रिया है।''

"Decision making is the Act of Deternmining ones Mind upon, an opinion or course of Action.

हरवर्ड ए0 साइमन (H.A. Simon) के अनुसार– ''निर्णयन के तीन चरण है– प्रथम निर्णय लेने के लिए अवसरों की खोज करना, द्वितीय सम्भावित विकल्पों का पता लगाना और तृतीय उन विकल्पों में से किसी एक का चयन करना।''

"Decision making comprises three Principal First. Phase finding occasion for marking decision. Second. Finding possible course of Action and Third. Choosing Among course of Action."

उपरोक्त परिभाषाओं के अध्ययनोपरान्त निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि ''निर्णयन एक प्रकार की विशेष विधि या विकल्प है जो किसी लक्ष्य को उद्देश्य की प्राप्ति में सहायता है और साथ ही गलत निर्णय रूपी परिणामों की सम्भावना को भी कम करता है जिसमे धन, समय और शक्ति की बचत होती है और हमारे सम्मुख सही उचित विवेकपूर्ण परिणामों को प्रस्तुत करता है।

निर्णयन की विशेषताएँ :

निर्णयन एक सौउद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया कार्य है जिसकी विशेषताएं निम्नलिखित है :-

(1) निर्णयन समय से उचित एवं सही होना चाहिए।

(2) निर्णयन में लचीलेपन अवश्य होना चाहिए।

(3) निर्णयन दोषपूर्ण रहित एव निष्पक्ष होना चाहिए।

(4) निर्णयन करते समय उसकी प्रक्रिया को ध्यान में रखना चाहिए।

(5) निर्णयन तर्कसंगत एवं न्यायसंगत होना चाहिए।

(6) निर्णयन सम्बधी सभी प्रतिमानों ;डवकमसेद्ध को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए।

(7) निर्णयन लेनेवाले प्रबंधक/प्रशासक को उसके चक्रीय स्वरूप का ज्ञान अवश्य होना चाहिए।

(8) निर्णयन मे उन सभी व्यक्तियों को शामिल करना चाहिऐ जो निर्णयन से प्रभावित होने वाले हैं।

(9) निर्णय करने मे देरी नहीं करनी चाहिए इससे अनेक समस्याऐं उत्पन्न हो जाती है।

(10) निर्णयन के क्रियान्वयन करने के उपरान्त उसके परिणाम का मूल्यांकन अवश्य करना चाहिए।

शिक्षा में निर्णयन की आवश्यकता एवं महत्व :-

(Need and Importance of Decision Making in Education)

शिक्षा प्रक्रिया एवं प्रबंधन में निर्णयन का स्थान महत्वपूर्ण माना जाता है शिक्षा प्रक्रिया के प्रत्येक प्रश्न में निर्णयन की आवश्यकता पड़ती है। निर्णयन शैक्षिक प्रशासन एवं प्रबंध की अनेकानेक समस्याओं के समधान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है निर्णयन की आवश्यकता एवं महत्व को निम्न बिंदू द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है–

आवश्यकता एवं महत्व :-

(1) संसाधनों के उपयोग एवं व्यवस्था हेतु :-

किसी शिक्षण संस्थान में संसाधनों की उपयोग एवं व्यवस्था, उचित एवं सही निर्णयन पर निर्भर करती है तथा यह महम्वपूर्ण होता है कि वहाँ उपलब्ध संसाधनों का सही उपयोग उचित प्रकार से कैसे हो इस उद्देश्य हेतु उचित निर्णयन की आवश्यकता होती है इसलिए शिक्षा में निर्णयन अति महत्वपूर्ण है।

(2) प्रशिक्षण सम्बधी कार्यक्रमों के संचालन हेतु :-

शिक्षा से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों के नितियों संचालन एवं सम्पादन का विकास एवं क्रियान्वयन हेतु निर्णयन की आवश्यकता होती है। इसलिए शिक्षा के प्रशिक्षण सम्बंधी कार्यक्रमों के क्रियाकलाप एवं संचालन हेतु प्रभावशाली निर्णयन की आवश्यकता अति महत्वपूर्ण है।

(3) विभिन्न परिस्थितियों से समायोजन हेतु :-

वैश्विक परिदृश्य में बदलती परिस्थितियों के साथ समायोजन मे निर्णयन की अति आवश्यकता होती है क्योंकि परिस्थिति के अनुकुल/अनुरूप कार्य करने मे निर्णयन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वर्तमान में वैज्ञानिक युग मे, वैज्ञानिक

खोज, तकनीकि विकास के कारण ज्ञान का विस्फोट हुआ है जिसके कारण शिक्षा क्षेत्र के विकास, व्यवसाय प्रगति के लिए बदलती परिस्थितियों के साथ समायोजन के लिए उचित निर्णयन की अति महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

(4) सम्बंधों को सहयोगपूर्ण एवं सुमधुर बनाने हेतु :-

सही एवं मिलकर लिया सामूहिक निर्णयन संस्थानों के कर्मचारियों के आपसी सम्बंधों को सुमधुर बनाने में अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके परिणामस्वरूप संस्थान अपने लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को आपसी सहयोग एवं सौहार्द के साथ उचित ढ़ग से समन्वय से प्राप्त संस्थान के विकास की गति को तीव्र करता है। अतः सम्बंधों के विकास मे निर्णयन की अति महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

(5) अनुसंधान एवं शोध कार्य हेतु :-

किसी भी संस्था का विकास उस क्षेत्र में हो रहे शोध कार्य, अनुसंधानों पर आधारित होती है क्योंकि वह इन शोधकार्यों के परिणाम निष्कर्षों के आधार पर अपने कार्यों में सुधार करता है तथा विभिन्न अनुसंधानों के परिणाम एव निष्कर्षों को शिक्षा संस्थान लागू कर के अधिकाधिक लाभ प्राप्त करता है। लेकिन इन परिणाम एव निष्कर्षों को कब कहा, कैसे और कितना लागू करना है इसके लिए उचित निर्णयन की आवश्यकता होती है। इस दृष्टि से निर्णयन की अति महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

निर्णयन के प्रकार :-

(Types of Decision Making)

किसी भी संस्था या शिक्षण संस्थान में कार्यों को सम्पन्न करने के लिए निर्णय की आवश्यकता होती है शैक्षिक नियोजन, आयोजन, शैक्षिक संसाधन, शोध अनुसंधान, आधुनीकरण, ज्ञान इत्यादि सभी पक्ष के उपयुक्त निर्णय समहित होते हैं अतः निर्णयन शैक्षिक प्रशासन एव प्रबंध का प्रमुख अंग है विभिन्न विद्वानों ने समय–समय पर इसके विभिन्न प्रकार बताये है। जो इस प्रकार है–

निर्णयन के प्रकार :-

(Types of Decision Making)

प्रो. गोरे और डायसन के अनुसार निर्णयन दो प्रकार के होते हैं :–

(1) नित्यकर्म निर्णय। (2) नई प्रक्रिया सम्बंधी निर्णय।

प्रो. वर्नाड शाह (Banard shah) के अनुसार निर्णय दो प्रकार के होते है :–

(1) व्यक्तिगत निर्णय (2) सामूहिक निर्णय।

प्रो. गिफिथ्स (Criffiths) के अनुसार निर्णय तीन प्रकार के होते हैं :–

(1) मध्यम आकार का निर्णय।

(2) अपीली निर्णय।

(3) सृजन शील निर्णय।

प्रो. एल. के ओड. के अनुसार निर्णय के चार प्रकार है :–

(1) दैनिक निर्णय (Daily Routine Decisions)

(2) नीतिगत निर्णय (Policy Decisions)

(3) वैयक्तिक निर्णय (Personal and Individual Decisions)

(4) सामूहिक निर्णय (Colleetive Decisions)

उपरोक्त निर्णय के प्रकारों का संश्लेषण एव विश्लेषण करने के पश्चात इस निष्कर्ष पर पहुचे है कि स्वरूप के

आधार पर निर्णय के निम्नांकित प्रकार हो सकते है जो इस प्रकार हैः–

(1) विधियों नितियों एवं सिद्धांतों पर आधारित निर्णय :–

(Decision Based on Method Policies & Principal)

इस प्रकार के निर्णय में कोई भी प्रबंधक या प्रशासक, विधियों, नितियों एवं सिद्धांतो को निर्णय लेने के लिए आधार मानता है एवं समस्त समस्याओं का समाधान विधियों, नीतियों एवं सिद्धांतों के अनुसार भी करता है। इस प्रकार निर्णयों में नीतियों, नियमों के अनुसार निर्णय लेना होता है व्यक्तिगत स्वतंत्रता कम पायी जाती है उदाहरण के लिए– किसी संस्था/विभाग के सभी कार्यकर्ताओं में सामंजस्य बैठाना संस्था या विभाग की प्रतिदिन की गतिविधियों पर निर्णय लेना।

(2) संस्थागत या विभागीय कार्यक्रमों पर आधारित निर्णय :–

(Decision based on Institutions & Development Activities)

इस प्रकार के निर्णयों का संबंध किसी संस्था (School) या विभाग (Department) के कार्यक्रम से संबंधित नितियों का निर्माण और विभिन्न क्रिया कलाप तथा पाठयक्रम सम्बंधी नितियों के सहमति से होता है। इस प्रकार के निर्णय लेते समय बहुत सावधानी समझदारी की आवश्यकता होती है क्योंकि इस प्रकार के निर्णय गुणात्मक विकास पर आधारित होते हैं गलत निर्णय विभाग को गर्त में पहुंचा सकता है और वही सही निर्णय किसी संस्था/विभाग को ऊच्चाई के शीर्ष तक पहुंचा देता है।

(3) संस्थागत साधनों एवं आवश्यकताओं पर आधारित निर्णय :–

(Decision based on Institutional & need)

इस प्रकार के निर्णय वे होते है जो किसी संस्था के साधन, स्रोते एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर लिये जाते हैं किसी भी शिक्षण संस्था/विभाग के मुखिया के लिए इस प्रकार के निर्णय बडे महत्वपूर्ण होते हैं। अच्छे निर्णयों की सफलता मे प्रधानाचार्य की विद्वता अनुभव, कुशलता स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इस प्रकार के निर्णय संस्था की गतिविधियों से संबंधित होते है। इस प्रकार का निर्णय का सम्बंध विद्यार्थी, शिक्षकों एवं कर्मचारियों से होता है और उनके सहयोग से लिया जाता है शिक्षण संस्थाएं प्रधानाचार्य के लिए इस प्रकार का निर्णय अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

निर्णयन प्रक्रिया :–

(Decision Meking Process)

निर्णयन प्रक्रिया का अर्थ उद्देश्य की प्राप्ति के लिए चिंतन करने के पश्चात निश्चित कदम उठाने से है सरल शब्दों में कहे तो उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपलब्ध विकल्पों मे से उपयुक्त विकल्प के चुनाव की विधि है। इस प्रक्रिया में सही समस्या का आंकलन हो, उपयुक्त सम्बंधी आंकड़े प्राप्त हो तदनुसार समस्या समाधान के लिए विकल्पों के बारे में चिंतन हो और निश्चित विकल्पों में से सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प के चुनाव का निर्णय ही निर्णय प्रक्रिया कहलाती है। निर्णय प्रक्रिया में विभिन्न विद्वानों ने विचार दिए है जो इस प्रकार है– प्रो. हरवर्ट साइमन ने निर्णय प्रक्रिया में निर्णय से पूर्व निम्नांकित बातों पर ध्यान रखना आवश्यक माना है–

(1) संगठन के उद्देश्य को ध्यान से देखा जाऐ।
(2) समस्या संबंधित तथ्यों एव सूचनाओं का एकत्रीकरण।
(3) समस्या के संबंध में अन्य व्यक्तियों की राय।
(4) प्राप्त सूचनाओं और आंकड़ों का विश्लेषण और समस्या समाधान के सम्पादित विकल्प।
(5) प्रत्येक समस्या समाधान के सम्भावित विकल्प का मूल्यांकन।
(6) सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प के समाधान के लिए चुनाव

ब्रिजेज (Embridges) ने निर्णयन प्रक्रिया को निम्नांकित पदों में विभक्त किया है:–

(1) समस्या का परिभाषीकरण करना।

(2) समस्या समाधान के सम्पादित परिणाम पर विचार।

(3) तर्क संगत विकल्प के सम्पादित परिणामों पर विचार

(4) निर्णय के लिए सर्वोतम विकल्प का चुनाव।

सइमन एव ब्रिजेज के निति निर्धारण सम्बंधी (निर्णय प्रक्रिया) उपयुक्त प्रतिमान केवल सुझाव मांग है यदि कोई भी प्रशासक अपने ढंग से भी मॉडल तैयार कर सकता 'प्रण्डिल (W. R. Dill) महोदया ने समस्या के निराकरण में निर्णय से पूर्व अन्य कदमों के साथ–साथ तत्संबंधी पर्यावरण (Environment) जानने के लिए अत्यधिक महत्व दिया जिसमें किसी प्रशासक के निर्णय लेना पड़ता है।

प्रो. हेरीसन (Herrison) ने निर्णय प्रक्रिया में 6 कदमों का उल्लेख किया है जो निम्नांकित है–

(1) उद्देश्यों एव समस्या का निर्धारण।

(2) विकल्पों पर विचार करना।

(3) प्रत्येक विकल्प के बारे मे दुसरे विकल्पों की तुलना में श्रेष्ठता का विचार करना।

(4) सर्वाधिक उपयुक्त विकल्प का चुनाव।

(5) निर्णय को पूरा करना।

(6) निर्णय की क्रियान्विति का अनुकरण (फलोअप) करना।

निर्णय की समस्याऐं :–

(Problem of Decision Making)

निर्णय लेना किसी भी प्रबंधक, प्रशासक, प्रधानाचार्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य होता है। निर्णय लेने की गति, और निर्णय का सही, गलत होने एवं उन संस्था या संगठन के कार्य विकास एवं प्रतिष्ठा को प्रभावित कर सकता है। इसलिए कुशल प्रशासक को निर्णय लेते समय कई स्तरों पदों से होकर गुजरना पड़ता है। जिसकी वजह से उसे कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है अतः प्रशासक का निर्णय प्रक्रिया में उत्पन्न होने वाली प्रमुख समस्याऐं निम्नांकित है :–

(1) समस्या का उपयुक्त एवं स्पष्ट परिभाषीकरण करना।

(2) निर्णय लेने में तथ्यात्मक साम्रगी का अभाव।

(3) निर्णय के लिए भावात्मक साम्रगी का अभाव।

(4) निर्णयकर्ता को निर्णय से संबंधित तथ्यों एव तकनीकी ज्ञान का अभाव होना।

(5) निर्णय को क्रियान्वित हेतु निर्णयकर्ता को आपात चरणों का स्पष्ट ज्ञान न होना।

(6) निर्णय लेने के अधिनस्थों पर विश्वास न करना।

(7) निर्णय में विकसित व समुचित मूल्यांकन का अभाव।

(8) निर्णय प्रक्रिया में मूल्यांकन संबंधी तथ्यों का अभाव।

(9) निर्णय लेने की गति में विलम्ब होना।

(10) व्यक्तिगत रूचि के कारण उचित निर्णय न लिया जाना।

(11) व्यक्तिगत स्वार्थ एवं हठधर्मिता के कारण उचित निर्णय न लिया जाना।

(12) निर्णय को क्रियान्वित करने वाले अधिकारी की उपेक्षा करना।

(13) निर्णय प्रक्रिया के मूल्यांकन संबंधी तथ्यों का अभाव।

(14) निर्णयों का पक्षपात पूर्ण तरीकों से लिया जाना।

(15) निर्णय के प्रभाव का समुचित मूल्यांकन का अभाव।

(16) निर्णय लेने वाले समस्त अधिकारी के अधिकारों के संबंध में अनिश्चितता।

विभिन्न प्रकार के उपलब्ध विकल्पों में से किसी एक का चयन, निष्कर्ष पर पहुंचने का अर्थ ही निर्णयन या निर्णय कहलाता है। शैक्षिक प्रबंध और प्रशासन के निर्णय प्रक्रिया का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है इसलिए कहा जाता है '' निर्णयन किसी व्यक्ति के मस्तिष्क में एक विचार या कार्य करने के क्रम को निश्चित करने की प्रक्रिया है।'' कहने का तात्पर्य है किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा जब अनेक उपलब्ध विकल्पों में से एक क्रिया पथ का चयन ही निर्णयन है। निर्णयन एक प्रकार का निश्चय है जो किसी शैक्षिक या प्रशासनिक प्रबंधकीय समस्या के समाधान हेतु लिया जाता है इसलिए इसे सार रूप में कह सकते है कि ''किसी भी संस्था या व्यक्ति के लिए निर्णयन एक विशेष विधि का विकल्प है जो किसी निश्चित लक्ष्य या उद्देश्य की प्राप्ति में सहायता देते है और साथ ही गलत परिणामों की सम्भावनाओं को भी कम करते है जिसमें धन, समय और शक्ति की बचत होती है और सही एवं उचित परिणामों को प्रस्तुत करता है।''

शिक्षा क्षेत्र में संसाधनों के उपयोग, व्यवस्था, खोज शोध तथा प्रशिक्षण संबंधी कार्यक्रमों के संचालन हेतु एवं परिस्थितियों में समायोजन हेतु इसकी महती आवश्यकता एव महत्व है। निर्णयन प्रक्रिया को निम्नलिखित पदों में विभक्त किया गया है जो इस प्रकार है :–

(1) समस्या का परिभाषीकरण करना।

(2) समस्या समाधान के सम्भावित विकल्पों का चुनाव करना

(3) तर्क संगत विकल्पों के सम्भावित परिणामों पर विचार करना।

(4) निर्णयन के लिए सर्वोतम विकल्पों का चुनाव करना।

(5) निर्णय का मूल्यांकन करना।

यह निर्णय की आम सामान्य प्रक्रिया है किसी विद्यालय की परिस्थिति मे निर्णय प्रक्रिया के दो मॉडल है प्रथम मॉडल व्यक्तिगत स्तर पर निर्णय लेना, द्वितीय–सामूहिक स्तर पर निर्णय लेना।

शिक्षा के क्षेत्र में निर्णय इन तीन प्रकारों पर आधारित होते हैं यथा :–

(1) विधियों एवं नीतियों एवं सिद्धांतों पर आधारित निर्णय।

(2) संस्था का विभागीय कार्यक्रम पर आधारित निर्णय।

(3) संस्थागत साधनों एवं आवश्यकताओं पर आधारित निर्णय।

इस प्रकार विभिन्न विद्वानों ने निर्णयों के भिन्न–भिन्न प्रकार बताये है परन्तु शिक्षा क्षेत्र में अर्थात शैक्षिक संस्थानों में उपरोक्त निम्न बातों को आधार को ध्यान में रखकर निर्णय, तथा शिक्षा स्तर अर्थात (उच्च स्तर मध्यम निम्न) को ध्यान में रखकर उच्च से शुरू होकर निम्न स्तर तक जो एक सामान्य व्यक्ति द्वारा संस्थान के उद्देश्य प्राप्ति अर्थात कार्य सम्पादन के जो बात का निश्चियीकरण किया जाता है या बहुत से विकल्पों मे से एक उचित विकल्प का चुनाव ही निर्णयन कहलाता है।

अतः समस्त बिंदूओं को देखने के पश्चात सार रूप में कह सकते है शिक्षा संस्थानों में निर्णयन की प्रत्येक क्षेत्र में प्रथम आवश्यकता है। क्योंकि किसी भी संस्थान मे कार्यों को सम्पन्न कराने के लिए शैक्षिक नियोजन, आयोग, नियुक्ति, समन्वय, निर्देशन, प्रतिवेदन, वितव्यवस्था तथा अन्य मानवीय एवं भौतिक संसाधनों के सम्बंध उचित निर्णयन की आवश्यकता होती है ताकी उपयुक्त निर्णयन के माध्यम से संस्था के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को उचित ढंग से प्राप्त कर

सके। अतः निर्णयन प्रक्रिया प्रबंध एवं प्रशासन के क्षेत्र में प्रगति का प्रथम आयाम है जिस पर समस्त संस्थान का विकास टिका हुआ है अतः सभी शैक्षिक संस्थानों मे निर्णयन की महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. मोहन लाल आपटे (2014) ''शैक्षिक प्रशासन एव प्रबंधन'' आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ उत्तर प्रदेश।
2. डॉ. सुरेन्द्र कटारिया (2014) ''लोक प्रशासन'' राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर राजस्थान।
3. प्रो0 मर्मर मुखोपाध्याय (2002) ''शिक्षा में सम्पूर्ण गुणवता प्रबंधन'' राष्ट्रीय शैक्षिक योजना और प्रशासन संस्थान नई दिल्ली–16
4. डॉ. एल. एन वर्मा एवं प्रवीण दोसी (2011) भारतीय शिक्षा व्यवस्था एवं प्रशासन तंत्र राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर राजस्थान।
5. जे. सी. अग्रवाल एस. गुप्ता (2011) ''भारतीय माध्यमिक शिक्षा का 21वीं शताब्दी में दिव्य दर्शन' शिप्रा प्रकाशन दिल्ली–92
6. सुभाष काश्यप (2016) ''हमारा संविधान' (भारत का संविधान और संवैधानिक विधि) निदेशक राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत वसंत कुंज नई दिल्ली।
7. डॉ. अंगद सिंह (2016) 'शैक्षिक प्रशासन, प्रबंधन एवं पर्यावरणीय अध्ययन, राखी प्रकाशन प्रा0 लि0 रमन टावर संजय प्लेस आगरा, यूव पी0।
8. डॉ. हरिवंश तरूण (2013) ''विद्यालय प्रबंध एवं स्वास्थ्य शिक्षा'' प्रकाशन संस्थान असांरी रोड दरियागंज नई दिल्ली–2।
9. दलीप सिंह (2015) ''कार्यस्थल पर भावनात्मक बुद्धिमता'' सेज पब्लिकेशन इण्डिय प्रा0 लि0, मथुरा रोड नई दिल्ली–44।
10. सुरेन्द्र कुमार साहू (2010) ''शैक्षिक प्रशासन एवं प्रबंध'' नेहा पब्लिकेशन एवं डिर्स्टीब्यूटर नई दिल्ली।
11. राम शक्ल पाण्डे (2009) ''शैक्षिक नियोजन एवं वित प्रबंधन'' विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
12. गजेन्द्र सिंह तोमर (2012) ''शैक्षिक प्रशासन एवं प्रबंधन'' सूर्या पब्लिकेशन आर लाल बुक डिपो, मेरठ।
13. हरिश चन्द्र व्यास एव कैलास चन्द व्यास (2004) ''शैक्षिक प्रबंध और शिक्षा की समस्याऐं'' आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली।
14. राम पाल सिंह, मदन मोहन शर्मा एवं अशोक सेवानी (2009) ''विद्यालय प्रबंधन एवं शिक्षा की समस्याऐं'' अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 94-97

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

PROBLEMS OF DRINKING WATER IN RURAL HARYANA

-Jyoti and Dr. Kalu Ram

OPJS University

INTRODUCTION :-

Water is one of the most vital natural resources. Life on earth depends on water. It is possible to live a month without food, but living without drinking water even for a few days is certainly life threatening. Hence water is one of the basic needs of life. Gleick (1993) revealed that 70 per cent of the human body is water and one becomes very thirsty the loss of about one per cent of one"s body fluids. Death is inevitable if the loss exceeds 10 per cent of the total fluid. It is well known that occurrence of a high proportion of diseases and deaths across the world are associated with unsafe drinking water. Therefore, availability of potable or safe drinking water is an important element in the improvement of health and nutritional status. The supply of safe drinking water is a vital indicator in determining the pace of growth of the economy. The standard of living of any segment of the population could be determined by the quality of available drinking water.

At the international level the coverage of rural population by piped water supply was 33 per cent whereas it was 16 per cent only in India (WHO & UNICEF, 2015). In nutshell, 97 million people in India do not have improved drinking water facility (WHO &UNICEF, 2013). Availability of fresh water in India is perpetually decreasing. Itwas 5177 cubic metres per capita per year in 1951 and it has decreased to 1869 cubic metres per capita per year in the year 2001. According to National Institute of Hydrology (NIH,2010) per capita water availability in India has reached as minimal as 1170 cubic metres per capita per year. A region where fresh water availability is between 1000 to 1700 cubic metres per capita per year is called water stress region, and one where it falls below 1000 cubic metres per capita per year experiences chronic water scarcity (Kumar et al., 2008). The problem of providing safe drinking water is acute particularly in rural India. According to the Census of India 2011, only 35 per cent of rural households in India have an access to drinking water sources within the premises. In other words, 65 per cent or about two-third of the total rural households have to fetch drinking water from outside their premises and in more than one-fifth households, the people have to walk more than half a kilometre to fetch drinking water for their family. From habitation coverage point of more than 20 per cent habitations are still partially covered or uncovered (getting less than 40 liter per capita daily (LPCD) of drinking water in India (Government of India,2017).

STUDYAREA :-

Haryana was administered as a part of the Punjab province of British India and wascarved out on linguistic lines as 17th state in 1966. The state of Haryana came intoexistence on November 1, 1966. It was carved out from

the composite territories ofPunjab. Haryana is located in the northwestern part of the India. The state extends from27°39′ to 35°55′ North latitude and 74°28′ to 77°36′ East longitude . It isbordered by Punjab and Himachal Pradesh to the north and Rajasthan to the west andsouth. The river Yamuna defines its eastern border with Uttar Pradesh. Haryana alsosurrounds the capital Delhi on three sides, forming the northern, western andsouthern borders of Delhi. Consequently, a large area of south Haryana is included in theNational Capital Region for purposes of planning and development.

The administrative divisions of the state also changed with time. In 1966, when itemerged as a state, there were only seven districts while the number of districts increasedto 22 in 2017. Fig. 1.2 describes the change in the administrative boundary at district levelfrom 1981 to 2011 as per the time period of the study. There were 21districts and 119in the state of Haryana, in 2011 (Census of India).

In area, Haryana is the 21 st largest state of India, with a area of 44212 km²Haryana covers 1.34 per cent of the country. The state covered 253 million persons as per.Haryana was administered as a part of the Punjab province of British India and wascarved out on linguistic lines as 17th state in 1966. The state of Haryana came intoexistence on November 1, 1966. It was carved out from the composite territories ofPunjab. Haryana is located in the northwestern part of the India. The state extends from27°39′ to 35°55′ North latitude and 74°28′ to 77°36′ East longitude It isbordered by Punjab and Himachal Pradesh to the north and Rajasthan to the west andsouth. The river Yamuna defines its eastern border with Uttar Pradesh. Haryana alsosurrounds thecapital Delhi on three sides, forming the northern, western andsouthern borders of Delhi. Consequently, a large area of south Haryana is included in theNational Capital Region for purposes of planning and development.The administrative divisions of the state also changed with time.

In 1966, when itemerged as a state, there were only seven districts while the number of districts increasedto 22 in 2017. The change in the administrative boundary at district levelfrom 1981 to 2011 as per the time period of the study. There were 21districts and 119Blocks in the state of Haryana, in 2011(Census of India).In area, Haryana is the 21 st largest state of India, with a area of 44212 km²Haryana covers 1.34 per cent of the country. The state covered 253 million persons as per2011 census and had 2.09 per cent of the India's total population. In size of population Haryana had 18th rank. Out of total population 165 million and 88 million persons live in rural and urban sectors respectively. The 65.21 per cent of Haryana's population lives in rural areas. In 2011, the sex ratio of the rural area of the state was 880 females per 1000 males and it was lower than the national average that is 946 females per 1000 males. The 71.4 per cent of the total population is literate where the national average is 68.9 per cent. The density of population of Haryana is 573 persons per km² more than national average of 382 persons per km².

Rural water supply programs in the state is implemented and managed by the Public Health and Engineering Department (PHED) under the Public Health Ministry. The PHED managed the drinking water sector by making own administrative units.

Geographically, the state of Haryana can be divided into four physical divisions :-

(a) Ambala Plain or Sub Mountain Belt :- This belt covers Shivalik hills in the north-eastern part of the state and its height is from 900-2300 meters and river Ghagghar, Tangari, Markanda emerge from this hilly are.

(b) Eastern Haryana or Kurukshetra Plain area covers plain area of the state from north to south and it is

extremely hot in summer and has severe cold winter.

(c) Western Haryana or Sirsa, Hisar and Bhiwani Bagar Tract lies in the western part of the state adjacent to Rajasthan and it is characterised by small sand dunes.

(d) **Southern Haryana :** Dry plain area of Aravalli range is found in the southern part of Haryana, Aravalli ranges are situated in the Mahendragarh, Rewari, Gurgaon, Mewat, Faridabad and Palwal districts (Singh, 1989). Some residuals of Aravalli hills also found in Bhiwani district of Western Haryana. There is no single perennial river passing through Haryana.

There is a large variation in the monthly weather regime from place to place depending on the distance from the mountains, and location with reference to the Thar Desert. Haryana has a climate of subtropical continental monsoon type. Annual rainfall in Haryana varies from 25 cm in the western part and over 100 cm in the north-eastern part (Ambala and Panchkula).The period of south monsoon accounts for 80 per cent of the annual rainfall .

OBJECTIVESOF THESTUDY :-

The proposed research aims to :

- Study the spatial pattern in availability, accessibility, adequacy, quality and pricing of drinking water in rural Haryana.
- Evaluate the role of institutions in spatial organizations and management of programs and policies in providing drinking water in rural Haryana.
- Trace the spatial variations in the prevailing practices in the use of sources of drinking water among various socio-economic groups in rural Haryana.

RESEARCHMETHODOLOGY:-

Secondary data on availability, and accessibility of drinking water sources was collected from Census of India, 1981, 1991, 2001, 2011, from H series tables on Houses, Households Amenities and Assets. The data related to various state and central programs, various institutions related to drinking water, and financial aspects was collected from Public Health and Engineering Department, Haryana; and Ministry of Drinking Water and Sanitation, Government of India (GoI), Planning Department, Government of Haryana and Planning Commission, GoI. The data related to coverage of villages by piped water supply was collected from Department of Economic Statistical Analysis, Haryana; the data related to development of groundwater was collected from Central Ground Water Board, Ministry of Water Resources, GoI. In addition to this, datawas also collected from other published and unpublished sources of drinking water suchas various reports and Ph D thesis submitted in various departments.

The analysis of the data was done for all the census decades (1981, 1991, 2001 and 2011) at district level. Further the block level data for 2011 was generated by compiling the village level data. The spatial unit for monitoring and regulating drinking water in the state range from circle, division, sub-division, section and village. The first ever attempt to prepare a circle and division state level map was done in this thesis.

The primary was conducted with the help of (i) household schedule and (ii) village schedule. The sample size for the survey was one per cent of the total 6642 inhabited villages of Haryana. Further one per cent of the total villages in each districtwere selected using simple random technique. From the selected villages the sample villages the sample size of the total households was defined as one per cent. The one per cent households from each village

was identified by using purposive sampling while ensuring proportionate representation of scheduled caste households. In all 452 households schedules were filled from selected 67 villages, covering different dimensions of drinking water. In addition 67 village schedules, covering village level data on drinking water was collected from the Sarpanch/ Ex. Sarpanch/ Nambardar/others, were also filled one from each selected village.

The schedule was prepared to know the demographic details, various dimensions of drinking water and socio-economic characteristics of households as well as village as a whole. The quality of drinking water was analysed with the help of TDS Meter .

The first objective? To study the spatial pattern in availability, accessibility, adequacy, quality and pricing of drinking water in rural Haryana? is achieved with the help of primary as well as secondary data. Data related to the availability and accessibility of drinking water was collected from Directorate of Census Operations, Haryana (Census of India tables on Houses, Households Amenities and Assets). Primary data was collected regarding adequacy, quality, and pricing with the help of schedule and discussion method based on different aspects of drinking water.

The second objective ?To evaluate the role of institutions in spatial organizations and management of programmes and policies in providing drinking water in rural Haryana? is achieved with the help of secondary data provided by Public Health and Engineering Department, Haryana; Ministry of Drinking Water and Sanitation, and various other institutions related to drinking water.

The third objective ?To trace the spatial variations in the prevailing practices in the use of sources of drinking water among various socio-economic groups in rural Haryana? is achieved with the help of primary and secondary data discussed above.

CONCLUSION :-

Following the emergence of the private water market in agriculture sector of Haryana, it is gradually emerging in drinking water sector too, though selectively. In southern and western Haryana where drinking water problem is more acute, private sector is using water pipeline, water campers and water tankers to supply drinking water in the village.

Bibliography :-

1. Bansil, P. C. (2004). Water Management in India. New Delhi: Concept Publishing Company.Bhagat, R., & Parihar, A. (2007). Access to basic amenities in urban India: Implications for health and wellbeing. Population Geography.
2. Census of India (2011). Table HH-6, Household series Tables, Registrar General and Census Commissioner of India, New Delhi: Ministry of Home Affair.
3. Chand, D. (2009a). Drinking water supply to villages. In S. B. Verma, P. Sahu, and J. Lal(Ed.), Water Resource Management. New Delhi: Pentagon Press.

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 98-101

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत में भूमि उपयोग परिवर्तन

–डॉ. समता जैन,

सहायक आचार्य (भूगोल), अग्रवाल महाविद्यालय,

जयपुर (राजस्थान)

मनुष्य भूमि को विभिन्न कार्यों में एक संसाधन के रूप में प्रयोग करता है। भूउपयोग सम्बंधी आंकड़ो का अभिलेख राजस्व विभाग रखता है। जबकि देश की प्रशासकीय इकाईयों के भौगोलिक क्षेत्र की सही जानकारी भारतीय सर्वेक्षण विभाग देता है। भारतीय सर्वेक्षण विभाग के आंकड़े सर्वेक्षण पर आधारित होने से स्थायी होते हैं जबकि भूराजस्व विभाग के आंकड़े रिपोर्टिंग क्षेत्र पर आधारित होने के कारण कम व अधिक हो सकते हैं।

भूमि सभी प्राकृतिक संसाधनों में एक आधारभूत संसाधन है। भारत कृषि प्रधान देश है, यहाँ की जनसंख्या का अधिकांश भाग इसी संसाधन पर निर्भर करता है, निरन्तर जनसंख्या में बढ़ोतरी एवं भूमि पर जनसंख्या के दबाव के कारण कृषि नियोजन में भूमि उपयोग प्रतिरूप अपना अत्याधिक महत्व रखता है क्योंकि भारत में प्राचीन समय से ही मानव कृषि के रूप में भूमि का उपयोग करता आ रहा है, मानव अब भूमि का उपयोग अधिक उत्पादकता की चाह में करने लगा है जिससे वर्तमान में भूमि के अवनयन की स्थिति उत्पन्न होती जा रही है।

भूमि उपयोग के माध्यम से उन क्षेत्रों का सरलता से अनुमान लगाया जा सकता है जो कृषि के उपयुक्त एवं अनुपयुक्त है जिससे इसके भावी विकास की योजनाएं निर्धारित की जा सकती है।

भूमि उपयोग प्रतिरूप (Land Utilization Pattern) :–

भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 32 करोड़ 88 लाख हैक्टेयर है। इसमें से 30.56 करोड़ हैक्टेयर भूमि के अर्थात कुल भूमि के 92.97 प्रतिशत भाग के भू–उपयोग सम्बंधी आंकड़े प्राप्त है। क्योंकि जम्मू और कश्मीर के पाकिस्तान व चीन अधिकृत क्षेत्रों व पूर्वोतर भारत में असम के अलावा अन्य प्रान्तों के सूचित क्षेत्रों के आंकड़े उपलब्ध नहीं है। भू–उपयोग भौतिक कारकों जैसे भू–आकृति, जलवायु, मृदा के प्रकार तथा मानवीय कारक जैसे जनसंख्या, तकनीकी, संस्कृति व परम्पराओं से प्रभावित होता है। वर्तमान भूमि उपयोग प्रारूप अनेक भौतिक व आर्थिक सामाजिक तत्वों का परिणाम है। भारत के 92.97 प्रतिशत भूमि में भूमि उपयोग के आकड़े उपलब्ध है, जो निम्न तालिका में दिये गये हैं :–

तालिका

क्रं.	उपयोग	1950—51	1970—71	1990—91	2000—01	2014—15
	भूमि का क्षेत्रफल जिसके भूमि उपयोग संबंधी आंकड़े उपलब्ध है।	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00
1.	वन प्रदेश	14.24	21.55	22.19	30.96	23.32
2.	कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि	16.65	15.19	12.95	14.08	14.25
	(अ) अन्य उपयोग में	3.91	5.42	6.57	7.73	8.73
	(ब) बंजर व अयोग्य भूमि	12.74	9.77	6.38	6.35	5.52
3.	अकृषि भूमि	17.40	10.55	19.55	9.52	8.39
	(अ) स्थायी चरागाह	2.35	3.90	3.98	3.63	3.33
	(ब) बाग झाड़—झंखाड़ आदि	6.98	1.34	1.18	1.18	1.007
	(स) कृषि योग्य बंजर भूमि	8.07	5.26	5.39	4.71	4.05
4.	परती भूमि	9.15	6.70	8.12	7.96	8.51
	(अ) वर्तमान परती	3.01	2.68	4.93	4.82	3.60
	(ब) पुरानी परती	6.13	4.02	3.19	3.14	4.90
5.	कुल कृषित भूमि	42.56	46.01	46.19	47.48	45.52

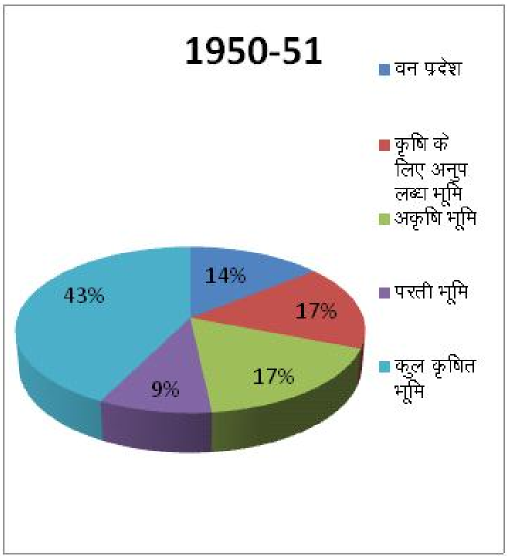

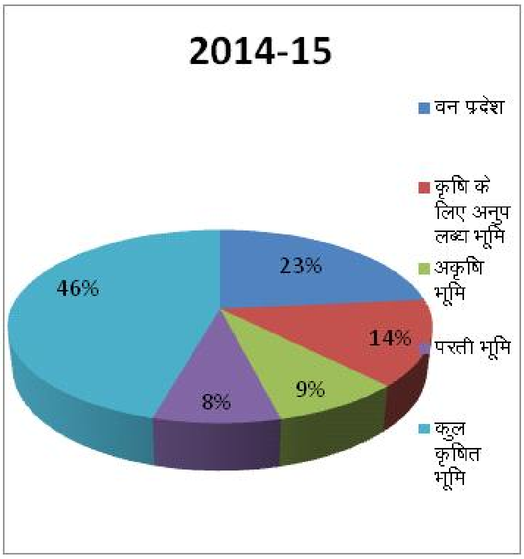

वन :–

वन प्राकृतिक संसाधनों में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार प्रत्येक प्रदेश में 33 प्रतिशत क्षेत्र पर वनों का होना आवश्यक है भारत में वनों के क्षेत्र में सर्वाधिक वृद्धि सन् 1950—51 से 1970—71 के बीच हुई है परन्तु 1971 के पश्चात भारत में वनों का क्षेत्रफल बहुत ही कम गति से बढ़ा है जिसका प्रमुख कारण सरकार एवं मानव समुदाय

स्वयं वनों को बढ़ाने हेतु प्रयासरत तो हे परन्तु उसकी गति स्थिर है। अतः प्रत्येक प्रदेश की सरकार एवं सामाजिक संगठनों को इस ओर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। क्योंकि इतिहास के साक्ष्यानुसार मानव क्रमशः एकत्रीकरण आखेट एवं पशुचारण आदि व्यवसायों के अपनाते हुये ही औद्योगिकरण तक पहुंचा है। अतः वनों के क्षेत्र में वृद्धि अतिआवश्यक है।

कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि :–

इसके अन्तर्गत दो प्रकार की भूमि को सम्मिलित किया जाता है – एक तो वह भूमि, जो कृषि के अतिरिक्त अन्य कार्यों जैसे – आबादी क्षेत्र, सड़के, नहरे, कुंए, जलाशयों, कारखानों आदि के रूप में उपयोग की जा रही है तथा दूसरी वह जो बंजर व कृषि अयोग्य है। उपरोक्त तालिका के अनुसार दोनों वर्गों की भूमि का सन् 2014–15 में 14.25 प्रतिशत है जबकि 1950–51 में इस भूमि का प्रतिशत 16.65 था अतः स्पष्ट है 1970–71 के बाद इसमें परिवर्तन तो हुये परन्तु अत्यन्त मन्द गति से हुये हैं जिसके प्रमुख कारण नगरीकरण एवं औद्योगिकरण के फलस्वरूप अधिकांश का भूमि का प्रतिशत आबादी क्षेत्रों में सम्मिलित होना है।

अकृषित भूमि :–

अकृषित भूमि में स्थायी चरागाह, झाड़–झंखाड और कृषि योग्य बंजर भूमि को शामिल किया गया है यह भूमि कृषि कार्यों में वर्तमान में काम नहीं आ रही है परन्तु भविष्य में उपयुक्त तकनीक के माध्यम से इसे कृषि योग्य बनाया जा सकता है सन् 1950–51 के अनुसार भारत में अकृषित भूमि 17.40 प्रतिशत थी जो 2014–15 में 8.39 प्रतिशत रह गई। भारत में गत दशकों में जनसंख्या के दबाव के कारण इस भूमि को उपयुक्त तकनीक के माध्यम से सुधार कर कृषि क्षेत्र को बढ़ाया जा रहा है जिससे इस भूमि का विस्तार कम हुआ है।

परती भूमि (Follow Land) :–

परती भूमि वह भूमि होती है जिस पर पहले कृषि की जाती थी परन्तु वर्तमान में उसे किसी कारण के फलस्वरूप खेती नहीं करके खाली छोड़ दिया जाता है। इस भूमि को सन् 1950–51 में कुल प्रतिशत 9.15 था जो सन् 2014–15 में 8.51 प्रतिशत रहा। परती भूमि को निम्न दो वर्गों में विभक्त किया गया है :–

1. पुरातन परती भूमि 2. चालू परती भूमि

1. पुरातन परती भूमि (Old Follow Land) :–

यह भूमि पुरातन परती कहलाती है जिसमें एक बार कृषि कार्य करने के पश्चात् 2 से 5 वर्ष तक के लिए खाली छोड़ दिया जाता है। ऐसी भूमि में उर्वर क्षमता का ह्रास होने के कारण उस पर कृषि कर पाना संभव नही हो पाता है। देश में इस भूमि को प्रतिशत सन् 2014–15 के अनुसार है 4.90 प्रतिशत है।

2. चालू परती भूमि :–

चालू परती भूमि से तात्पर्य उस भूमि से है जिसमें किसी कारणवश एक या दो वर्ष के लिए कृषि कार्य स्थगित कर दिया जाता है इस प्रकार कृषि कार्य रोक देने के कई कारण होते हैं मिट्टी की उर्वरता, मिट्टी की नमी, आर्थिक कारण आदि। देश में इस प्रकार की भूमि सन् 2014–2015 के अनुसार 3.60 प्रतिशत है तथा सन् 1950–51 के अनुसार 3.01 प्रतिशत था इस भूमि में अधिक परिवर्तन नहीं हुये हैं।

कृषित भूमि (Cultivated Land) :–

विश्व में भारत ऐसा देश है जहाँ की कुल भूमि में कृषित भूमि का प्रतिशत सर्वाधिक पाया जाता है। सन् 1950–51 में कृषि भूमि का क्षेत्र देश में 42.56 प्रतिशत था जो निरन्तर वृद्धि करने के प्रयास के बावजूद भी सन् 2014–15 में 45.52 प्रतिशत रहा। जिसके प्रमुख कारण है खाली बेकार पड़ी भूमि को ठीक कर कृषि के अन्तर्गत लाना, उचित उर्वरकों द्वारा रेह, ऊसर भूमि को उपजाऊ बनाना, कृषि भूमि को वर्तमान में परती भूमि के रूप में खाली छोड़ना कम होना, चरागाहों, बाग–बगीचों की भूमि का उपयोग कृषि भूमि के रूप में करना आदि। इसके लिए अभी ओर अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष :-

वर्तमान युग में बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यानों की पूर्ति हेतु भूमि के प्रत्येक भाग के उपयोग की आवश्यकता है यदि संसाधन का संतुलित उपयोग किया गया तो अच्छे परिणाम प्राप्त होंगे किन्तु आवश्यकता से अधिक विदोहन किया गया तो भूमि में उर्वरा शक्ति का नष्ट होना, क्षारीय लवणीय भूमि में वृद्धि होना चरागाहों की कमी, जैसे परिणाम प्राप्त होंगें। अतः इसके लिए सरकार, स्वयंसेवी संस्थाएं तथा कृषकों का पारस्परिक सहयोग द्वारा प्रत्येक प्रकार की भूमि का उचित तथा विशिष्ट रूप उपयोग हो सके। अतः भूमि का सही उपयोग भूमि उपयोगिता के आधार पर किया जाना चाहिए ताकि भविष्य में इस समस्या का सामना नही करना पड़े।

संदर्भ :-

1. तिवारी आर.सी., 2013, भारत का भूगोल, प्रवलिका पब्लिकेशन्स इलाहाबाद।
2. बंसल सुरेशचन्द्र, 2004, भारत का वृहत भूगोल, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।
3. कलवार, एस.सी. (1996) पर्यावरण एवं परती भूमि, पोईन्टर पब्लिकेशन, जयपुर।
4. Agriculture Statistics, Directorate of economic & Statistics, Ministry of Agriculture, Govt. of India.
5. Wastelands Atlas of India, 2010.

क्रं.	उपयोग	1950—51	2014—15
	भूमि का क्षेत्रफल जिसके भूमि उपयोग संबंधी आंकड़े उपलब्ध है।	100.00	100.00
1.	वन प्रदेश	14.24	23.32
2.	कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि	16.65	14.25
3.	अकृषि भूमि	17.40	8.39
4.	परती भूमि	9.15	8.51
5.	कुल कृषित भूमि	42.56	45.52

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 102-105

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

संचार क्रांति के दौर में मानवाधिकार एवं मौलिक अधिकारों का बढ़ता उत्कर्ष व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के बीच पनपता संघर्ष

–प्रो. पवन कुमार

सहायक प्राध्यापक सह विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
मुन्शी सिंह महाविद्यालय, मोतिहारी, पूर्वी चंपारण, बिहार–845401

परिचय :–

वर्तमान संचार क्रांति और सोशल मीडिया के दौर में पलक झपकते ही सारी सूचनाएं व्यक्ति के उँगलियों के इशारे पर मौजूद है। सूचना के इस क्रांति ने व्यक्ति को काफी जागरूक कर दिया है। हरेक व्यक्ति अपने कर्तव्यके बारे में सजग हो या न हो परंतु वह अपने अधिकारों के प्रति सजग अवश्य है।

युद्ध की विभीषिका से मानव को बचाने के लिए विश्व समुदाय ने 24 अक्टूबर,1945 को संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना किया और संयुक्त राष्ट्र संघ ने युद्ध की विभीषिका से बचे हुए उसी मानव के हिफाजत के लिए 10 दिसम्बर, 1948 को मानवाधिकार घोषणा–पत्र जारी किया जो मानव होने के नाते सभी व्यक्ति को प्राप्त है।

इसी समय भारतीय संविधान की भी रचना हो रही थी। भारतीय संविधान के शिल्पकार डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने संविधान के भाग–3 में अनुच्छेद 12 से 35 तक मौलिक अधिकारों का प्रावधान किया है। मौलिक अधिकार भारतीय नागरिकों को तो प्राप्त है ही साथ ही कुछ अधिकार मानव होने के नाते विदेशियों को भी प्राप्त है। स्पष्ट है कि संविधान निर्माताओं को मानवाधिकार घोषणा–पत्र ने भी प्रभावित किया था।

मानवाधिकार घोषणा–पत्र विश्व के विभिन्न भागों में निवास करने वाले व्यक्तियों को ध्यान में रखकर बनाया गया था जबकि मौलिक अधिकार भारत में रहने वाले भारतीय नागरिकों की स्थिति और परिस्थिति को ध्यान में रखकर बनाया गया था। अतः विश्लेषणोंपरान्त यह पता चलता है कि मानवाधिकार और मौलिक अधिकार में काफी समानता है। यही कारण है कि इसके प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ रही है, लोग अपने अधिकारों के प्रति सजग हो रहे हैं और यही सजगता व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के बीच संघर्ष को जन्म दिया है।

व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के बीच संघर्ष की स्थिति :–

भारतीय संविधान निर्माताओं ने संविधान सभा में काफी लंबे वाद–विवाद के पश्चात भारतीय संविधान के लिए संसदीय शासन प्रणाली को स्वीकार किया। संसदीय शासन प्रणाली में व्यवस्थापिका एवं कार्यपालिका जहां एक–दूसरे से मिली–जुली होती है, वहीं व्यवस्थापिका एवं न्यायपालिका एक–दूसरे से स्पष्टतः भिन्न होते हैं।

भारतीय संविधान में व्यवस्थापिका को जहां अनुच्छेद–368 के द्वारा मौलिक अधिकार सहित भारतीय संविधान के किसी भी भाग में संशोधन करने की शक्ति प्राप्त है, वही न्यायपालिका को भी अनुच्छेद–13, 32, 137, एवं 142 के तहत् व्यवस्थापिका के द्वारा किए गए किसी भी संविधान संशोधन अधिनियम की संवैधानिकता की जांच करने तथा अपने द्वारा दिए गए निर्णय को पूरी तरह से बदलने या उसमें संशोधन करने की शक्ति प्राप्त है।

व्यवस्थापिका और न्यायपालिका के द्वारा समय–समय पर इन्हीं शक्तियों का प्रयोग किया जाता रहा है जिससे

इन दोनों संवैधानिक संस्थाओं के बीच संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती रही है।

न्यायपालिका ने इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ (1993) के वाद में निर्णय दिया कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन कुल आरक्षित स्थानों की संख्या 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए और अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के अधिकारियों और कर्मचारियों को पदोन्नति में आरक्षण अनुमान्य नहीं होगा।

इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ के निर्णय से उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करने के लिए व्यवस्थापिका ने 76वां एवं 77वां संविधान संशोधन अधिनियम पारित किया। 76वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1994 के द्वारा तमिलनाडू में स्थित शिक्षण संस्थाओं तथा सरकारी नौकरियों में 69 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था को 9वीं अनुसूची में डाल दिया गया। 77वां संविधान संशोधन अधिनियम,1995 के द्वारा संविधान के अनुच्छेद–16 के खंड (4) में एक नया उपखंड (4।) जोड़ कर एक उपबंध किया गया है जिसके अनुसार राज्य के अधीन सेवाओं में पदोन्नति के लिए अनुसूचित जाति एवं जनजाति को आरक्षण प्रदान किया जा सकेगा।

वीरपाल सिंह चौहान बनाम भारत संघ (1995) तथा अजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य (1996) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने 16 सितम्बर,1999 को अपने निर्णय के द्वारा यह व्यवस्था दी थी कि पदोन्नति में आरक्षण तो दिया जा सकता है, लेकिन वरिष्ठता नहीं मिलेगी।

सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय से उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करने के लिए व्यवस्थापिका के द्वारा 85वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2001 पारित किया गया, जिसके द्वारा संविधान के अनुच्छेद–16(4।) में संशोधन कर राज्य के अधीन सेवाओं में अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्गों के पदों पर अनुवर्ती (consequential) वरिष्ठता सहित प्रोन्नति के मामलों में आरक्षण को 17 जून,1995 से भूतलक्षी प्रभाव से लागू कर दिया गया।

एम. नागराज बनाम भारत संघ (2006) के मामले में 77 वां एवं 85 वां संविधान संशोधन अधिनियम को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दिया गया। न्यायालय ने अपने निर्णय में इन संवैधानिक संशोधनों को तो सही माना, लेकिन यह भी कहा कि सरकार को इन वर्गों के अधिकारियों और कर्मचारियों के पिछड़ेपन, राजकीय सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व एवं कामकाज की दक्षता पर पड़ने वाले प्रभाव के संबंध में आंकड़ों का आधार तैयार करना होगा। राज्य सरकार या केन्द्र सरकार यदि पदोन्नति में आरक्षण देती है तो उन्हें इस बात की भी जांच करनी होगी कि–

1. इन वर्गों के लोगों में आज भी पिछड़ापन है या नहीं ?
2. इस वर्ग के लोगों का सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व है या नहीं ?
3. पदोन्नति में आरक्षण से प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव तो नहीं पड़ेगा ?

एम. नागराज बनाम भारत संघ (2006) के निर्णय के बाद से ही कई जनहित याचिकाओं में इस पर पुनर्विचार की मांग उठती रही थी। इस मामले में विभिन्न राज्यों की सरकारों एवं केंद्र सरकार का प्रतिनिधित्व कर रहे अटॉर्नी जनरल के. वेणुगोपाल ने पदोन्नति में आरक्षण के पक्ष में गुहार लगाते हुए कहा था कि एक सात सदस्यीय संविधान पीठ को इस निर्णय पर पुनर्विचार करना चाहिए।

26 सितम्बर, 2018 को सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा की अध्यक्षता वाली पांच जजों की संविधान पीठ ने सर्वसम्मति से अपने फैसले में कहा कि एम. नागराज बनाम भारत संघ (2006) के फैसले पर पुनर्विचार करने के लिए उसे बड़ी संविधान पीठ के पास भेजने की कोई जरूरत नहीं है और न ही पदोन्नति में आरक्षण देने के लिए 2006 के निर्णय में लिखे गए पिछड़ेपन के मापदंडों को पूरा करने और इससे संबंधित जानकारी जुटाने की ही कोई जरूरत है। परन्तु पर्याप्त प्रतिनिधित्व एवं प्रशासन पर पड़ने वाले प्रभाव वाली बात आज भी लागू है, क्योंकि इस संबंध में सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में कुछ नहीं कहा है।

30 जुलाई, 2020 को सर्वोच्च न्यायालय ने बी. के. पवित्रा 2 बनाम भारत संघ के वाद में अपने निर्णय में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग को दिए गए परिणामी वरिष्ठता के साथ पदोन्नति में आरक्षण की संवैधानिक वैधता

को बरकरार रखा है तथा पुनर्विचार याचिका को खारिज कर दिया है। उक्त पुनर्विचार याचिका में आए निर्णय से स्पष्ट होता है कि अनुसूचित जाति एवं जनजाति में क्रीमीलेयर की संकल्पना लागू नहीं होगी एवं परिणामी वरिष्ठता के साथ पदोन्नति में आरक्षण मिलता रहेगा।

सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश अरुण मिश्रा की अध्यक्षता वाली पांच न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ ने 27 अगस्त, 2020 को दिए फैसले में कहा है कि राज्य सरकार को अनुसूचित जाति एवं जनजाति श्रेणी में वर्गीकरण का अधिकार है। राज्य सरकार सूची में छेड़छाड़ नहीं कर सकती और न ही वह किसी जाति को जोड़ अथवा घटा सकती है लेकिन जाति की जांच कर सकती है। न्यायालय ने कहा कि विभिन्न रिपोर्ट दर्शाती हैं कि अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति वर्ग में सभी जातियां समान नहीं है। अतः, आरक्षण का लाभ सबसे जरूरतमंद तक नहीं पहुंच रहा है। जबकि आरक्षण का उद्देश्य सभी वर्गों को ऊपर उठाना है जो राष्ट्र की प्रगति के लिए जरूरी है।

2004 में ईसी चिन्नैया मामले में सर्वोच्च न्यायालय की ही पांच न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ ने कहा था कि अनुसूचित जाति/जनजाति की श्रेणी में उप वर्गीकरण का राज्यों को अधिकार नहीं है।

अतः जस्टिस अरुण मिश्रा की अध्यक्षता वाली पांच न्यायाधीशों की संवैधानिक पीठ ने कहा कि ईसी चिन्नैया मामले का फैसला भी समान क्षमता का पीठ ने सुनाया था इसलिए वह मुख्य न्यायाधीश से मामले को सात न्यायाधीशों या उससे बड़ी पीठ के समक्ष विचार के लिए लगाने का आग्रह करते हैं।

व्यवस्थापिका द्वारा 103 वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 पारित किया गया जिसके द्वारा संविधान के अनुच्छेद–15 में एक नया उपखंड (6) तथा अनुच्छेद–16 में एक नया उपखंड (6) जोड़कर सामान्य वर्ग के आर्थिक रूप से पिछड़े व्यक्ति को सरकारी नौकरियों एवं शिक्षण संस्थाओं में 10 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया।

आर्थिक रूप से पिछड़े सामान्य वर्ग को आरक्षण देने वाले 103 वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 को यूथ फॉर इक्वालिटी सहित कई संगठनों और लोगों ने सर्वोच्च न्यायालय में इसे चुनौति दिया है। चुनौति देने वालों का दलील है कि संविधान में अनुच्छेद–15(6) और 16(6) को जोड़ कर संविधान के मूल ढांचे में बदलाव किया गया है। इसमें इंदिरा साहनी मामले में सर्वोच्च न्यायालय की नौ सदस्यीय संविधान पीठ के फैसले को उद्धत करते हुए कहा था कि आर्थिक मापदंड आरक्षण का एकमात्र आधार नहीं हो सकता। साथ ही उस फैसले में यह भी कहा था कि आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए।

सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश एस. ए. बोवडे की अध्यक्षता वाली तीन जजों की पीठ ने 103 वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 को असंवैधानिक तो नहीं ठहराया लेकिन इस पर विचार करने के लिए 5 अगस्त, 2020 को पांच सदस्यीय संविधान पीठ को सौंपने का फैसला किया। जब तक संविधान पीठ द्वारा इसे असंवैधानिक नहीं ठहराया जाता तब तक सामान्य वर्ग के पिछड़े को 10 प्रतिशत आरक्षण मिलता रहेगा।

निष्कर्ष :–

वर्तमान समय में सूचना एवं संचार क्रांति ने पूरे विश्व को एक गांव जैसा बना दिया है। सूचना के इस क्रांति सेव्यक्ति में जागरूकता बढ़ी है। इसका नतीजा यह है कि व्यवस्थापिका द्वारा बनाए गए किसी अधिनियम से किसी एक भी भारतीय के मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा हो और वह न्यायपालिका में चाला जाये तो उस कानून को अवैध घोषित करने या उसकी वैधानिकता शून्य घोषित करने से न्यायपालिका पीछे नहीं हटती है जिससे दोनों संस्थाओं के बीच पुनः एक नए संघर्ष का जन्म होता है तथा यह सिलसिला चलते रहता है।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि दोनों संवैधानिक संस्था को सूचना एवं संचार क्रांति का उपयोग अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन में अधिकाधिक करनी चाहिए। व्यवस्थापिका में प्रत्येक विधेयक पर उम्दा प्रकृति की बहस होनी चाहिए, जो कि नहीं हो पा रहा है। इसमें आम जनता से ऑनलाईन सुझाव भी आमंत्रित किए जाने चाहिए तथा व्यवस्थापिका के सदस्यों को सूचना प्रौद्योगिकी के द्वारा अपने क्षेत्र की जनता से दिन–प्रतिदिन का संवाद भी स्थापित

करना चाहिए और उनकी समस्या की चर्चा व्यवस्थापिका में भी की जानी चाहिए जिससे विधेयक के कानून बनने तक सभी त्रुटियों का निदान किया जा सके। न्यायपालिका को भी सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर सुनवाई को आम जनता तक आभासी रूप में उपलब्ध कराया जाना चाहिए तथा न्यायपालिका के निर्णय को प्रोद्योगिकी के द्वारा विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद कर उपलब्ध कराया जाना चाहिए जिससे आम जनता कानूनी रूप से भी शिक्षित हो सके और न्यायपालिका के समक्ष वाद में कमी आ सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत 2020, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
2. डा० जय नारायण पाण्डेय (2019) : भारत का संविधान, सेंट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद।
3. डा० जय जय राम उपाध्याय (2019) : भारत का संविधान, सेंट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद।
4. ब्रजकिशोर शर्मा (2019) : भारत का संविधान एक परिचय, पेंटिस हाल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
5. एम० लक्ष्मीकान्त (2019) : भारत की राजव्यवस्था, टाटा मैग्रो हिल पब्लिशिंग कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली।
6. डा० पुखराज जैन (2020) : भारत का संविधान, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
7. सुभाष कश्यप (2015) : हमारा संविधान, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली
8. बालमुकुंद अग्रवाल (2015) : हमारी न्यायपालिका, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली।
9. सुभाष कश्यप (2015) : हमारी संसद, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली।
10. शिवानी किंकर चौबे (2015) : भारतीय संविधान रू रचना एवं कार्य, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली।
11. डा० दुर्गा दास बसु (2019) : भारत का संविधान एक परिचय, जैन बुक एजेंसी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
12. hindi.livelaw.in

मोबाइल न. दृ 9471228641, 7782936926

इमेल दृ चूंदहहपे2 ⁄ हउंपस.बवउ

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 106-110

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

स्वतन्त्र भारत में महिलाओं की स्थिति

–डॉ. ब्रजकिशोर

सहायक आचार्य, राजनीति–विज्ञान विभाग, राजकीय कन्या महाविद्यालय, अजमेर।

''कत विधि सृजि नारि जग मॉहि,
पराधीन सपनेहूँ सुख नाहि!

उक्त चौपाई मे स्त्रियों की यथार्थता का सजीव चित्रण उभर कर सामने आता है। धर्म, नीति और सामाजिक मार्यादाओं की रचना पुरूषों न कर नारी की स्वतन्त्रता को गुलामी की जंजीरों में कसने में कोई कसर नहीं रखी। यह प्रकृतिप्रदत सत्य है, कि नारी की शारीरिक क्षमताएँ पुरूषों की तुलना में बहुत कम होती है, पर आन्तरिक क्षमता जैसे करूणा, त्याग, ममता वात्सल्य, सहनशीलता, दया, प्रेम, समर्पण आदि गुणों में वह पुरुष से बहुत आगे है। स्त्री को देवी एवं शक्ति के प्रर्याय के रूप में पेश किया जाता है। महिलाओं की स्थिति भारतीय समाज में निरन्तर पतन की और रही है। प्राचीनकाल से ही स्त्रीयों को कई झूठी मर्यादाओं परम्पराओं, मान्यताओं, कुप्रथाओं एवं धार्मिक मान्यताओं के अधीन रख महिलाओं का शोषण किया गया और किया जा रहा है। प्राचीन काल से किसी ना किसी आधार पर महिलाएँ कुप्रथाओं का शिकार रही है यथा–पर्दा प्रथा, सती प्रथा, बाल विवाह, कन्या वध, दहेज प्रथा, घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न आदि।

समाज का सर्वागणीय विकास तभी सम्भव है जब व्यक्ति के मानवाधिकारों की भूमिका सार्थक रूप में लागू की जाए, लेकिन राज्य एवं समाज की इस दिशा में भूमिका की प्रतिबद्धता रही है, यह कहना कठिन है। अतः महिलाओं को शोषण एवं यातनाओं से सुरक्षा एवं मुक्ति प्रदान करने के उदेश्य से ही संवैधानिक एवं कानूनी प्रयास किये गये है।

भारत में महिलाओं की स्थिति :–

हमारे देश में महिलाओं की स्थिति में प्राचीनकाल से वर्तमान तक कई उतार–चढाव आये है। महिलाओं की स्थिति के निर्धारण में समाज के साथ–साथ राज्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। महिलाओं के संदर्भ में जो भी साक्ष्य मिलते है, इस आधार पर कहा का जा सकता है कि राज्य की भूमिका ना तो नकारात्मक रही, ना ही उदासीन वैदिककाल में राजन एवं गोपाजनस्य मंत्री को समाज की रक्षा का दायित्व सौपा गया ऐसी व्यवस्था से स्त्रीयों को निश्चित सुरक्षा समाज से प्राप्त रही होगी। उत्तर वैदिककाल मे सभा एवं समिति नामक संस्थाओं में प्रतिनिधित्व के माध्यम से स्त्रियों को प्रशासन एवं नीति निमार्ण में महत्पूर्ण भूमिका प्राप्त थी। मौर्यकाल में अशोक ने स्त्रीयाध्यक्ष एवं अर्थशास्त्र में गणिकाओं का उल्लेख भी स्त्रियों की अच्छी स्थिति को बतलाता है। गुप्तकाल में प्रतिहार नामक अधिकारी भी स्त्री रक्षक का सूचक है। मध्यकाल में स्त्रियों की स्थिति दयनीय हो गयी सती प्रथा, बाल विवाह, कन्या–वध प्रथा, डाकन प्रथा, पर्दाप्रथाओ के कारण आदि शासन कार्यों से स्त्रियों को दूर रख, धार्मिक एवं सामाजिक परम्पराओं के अधीन रख स्त्रियों के अधिकारों का हनन किया गया और शोषण किया। लेकिन सल्तनतकाल में स्त्रियों को जजिया कर से मुक्त कर, फिरोजशाह तुगलक हारा कन्या की शादी में दहेज की रकम देकर। अकबर द्वारा विधवा विवाह एवं सती प्रथा को बंद करने के प्रयास आदि महिलाओं की स्थिति में सुधार हेतु प्रयास किया गया। लेकिन मध्यकाल मे महिलाओं का शोषण बढ़ा एवं स्थिति दयनीय हो गयी।

स्वतंत्रता के उपरांत महिलाओं को सवैधानिक एवं कानूनी अधिकार प्रदान कर, महिलाओं के अधिकारों को कानूनी

रूप एवं समाज की मुख्य धारा में जोड़ने का प्रयास ब्रिटिश काल में हुआ। ब्रिटिशकाल में एक ओर राजाराममोहन राय, ईश्वरचन्द्र विध्यासागर, दयानंद सरस्वती, डी.वी. कर्वे, महादेव गोविन्द रानाडे, बी.एम. मालाबारी ज्योतिबा फूले, डॉ भीमराव अम्बेडकर आदि समाज सुधारकों ने जनजागरण का कार्य कर ब्रिटिश सरकार पर सकारात्मक कानून निमार्ण हेतु दबाव डाला। इसका परिणाम रहा कि 1829 मे सती प्रथा का उन्मोलन किया गया, कन्या वध को गैरकानूनी करार दिया गया, शारदा एक्ट द्वारा बाल–विवाह का निषेध कानूनों के माध्यम से किया गया। विधवा पुनर्विवाह को प्रोत्साहन एवं नागरिक विवाह एक्ट आदि में संशोधन कर महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने हेतु सामाजिक व कानूनी प्रयास किये गये। स्वतंत्रता के बाद महिला अधिकारों की सुनिश्चिता की व्यवस्था एवं विभिन्न आयोगों व समितियों की स्थापना की गई है। आज महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ हैं और वह हर क्षेत्र में पुरूषो की प्रतियोगी है फिर भी पहले से कही अधिक असुरक्षित है।

भारत में स्वतत्रता के बाद महिला सशक्तिकरण के कानूनी प्रयास :–

सामाजिक राजनीतिक एवं आर्थिक न्याय की स्थापना कर महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु वैश्विक स्तर पर लोकतान्त्रिक संस्थाओ के प्रयासों का असर भारत में ही हुआ। भारतीय संविधान में महिलाओं को सवैधानिक अधिकार प्रदान कर महिला संशक्तिकरण हेतु विभिन्न कानूनों का निर्माण कर, विभिन्न योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन, महिला अपराध से सम्बन्धित अधिकतर कानूनों को गैरजमानती रूप देकर महिला अपराधों को संज्ञेय अपराध घोषित किया गया। भारत में महिला सशक्तिकरण हेतु कानूनी पहल निम्न है।

महिलाओं हेतु सवैधानिक प्रावधान :–

स्वतन्त्रता के बाद महिलाओं की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक रूप से विकास के समान अवसर प्रदान करने के लिए संविधान में कुछ विशेष व्यवस्थाएं की गई है। संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों और उनमें किए गए महिलाओं हेतु प्रावधान इस प्रकार है :–

संविधान का अनुच्छेद	**महिलाओं के लिए उपयोगी प्रावधान**
अनुच्छेद 14	कानून के समक्ष समानता।
अनुच्छेद 15(3)	महिलाओं को कुछ विशेष सुविधा प्रदान की गई है।
अनुच्छेद 16	अवसर की समानता।
अनुच्छेद 19	समान रूप से अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता।
अनुच्छेद 23–24	नारी क्रय–विक्रय तथा बेगार प्रथा पर रोक।
अनुच्छेद 39(घ)	समान कार्य के लिए समान वेतन।
अनुच्छेद 42	महिलाओं के लिए प्रसूति सहायता।
अनुच्छेद 47	लोक स्वास्थ्य में सुधार करना सरकार का दायित्व है।
अनुच्छेद 51 क (ड़)	प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होगा कि वह ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है।
अनुच्छेद 243 (घ) (न)	पंचायती राज एवं नगरीय संस्थाओ में 73वे, 74 वे संशोधन के माध्यम से महिलाओं हेतु आरक्षण की व्यवस्था।

महिलाओं से सम्बन्धित प्रमुख अधिनियम :-

भारतीय संसद द्वारा महिलाओं की स्थिति सुधारने के निए समय–समय पर अनेक अधिनियम पारित किए गए, जिनमें प्रमुख इस प्रकार है :–

अधिनियमों का विवरण	**उदेद्श्य/प्रावधान**
बागवान श्रम अधिनियम 1951	महिला कर्मियों को अपने बच्चों को दुध पिलाने के लिए अवकाश दिया जाना
खान अधिनियम 1951	भूमिगत खानों में महिलाओं के नियोजन पर रोक लगाना
विशेष विवाह अधिनियम 1954	कोई महिला अपना धर्म बदले बिना किसी भी धर्म के व्यक्ति से विवाह कर सकती है
हिन्दू उतराधिकार अधिनियम 1956	इस अधिनियम के द्वारा महिलाओं को पैतृक सम्पति में अधिकार दिया गया है
अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956	वैश्यागृह चलाने या परिसर को वैश्यागृह के रूप में प्रयुक्त करने पर दण्ड की व्यवस्था
प्रसूति सुविधा अधिनियम 1961	कार्य दिवस के 80 दिन पूर्ण होने पर महिला कर्मियों को गर्भपात हेतु आवश्यक रूप से अवकाश तथा चिकित्सा की व्यवस्था
ठेका श्रम अधिनियम 1970	महिला श्रमिकों से बागानो में प्रातः 6 बजे से सांय 7 बजे के बीच 9 घण्टे के बाद काम कराने पर प्रतिबन्ध
बाल–विवाह निषेध अधिनियम 1976	संविधान द्वारा कम उम्र की बालिकाओं के विवाह पर प्रतिबन्ध
वेश्यावृति निवारण अधिनियम 1986	महिलाओं को अनैतिक कार्यों में दुरूपयोग करने वालों पर प्रतिबन्ध
स्त्री अशिष्ट निरूपण निषेध अधिनियम 1986	महिलाओं के अश्लील प्रदर्शन पर प्रतिबन्ध लगाना
दहेज निषेध अधिनियम 1986	विवाह में दहेज के लेन–देन पर प्रतिबन्ध की व्यवस्था
सती निषेध अधिनियम 1986	महिलाओं को पति की मृत्यू के बाद सती होने पर प्रतिबन्ध
73वॉ व 74वॉ संशोधन अधिनियम 1992	महिलाओं को त्रिस्तरीय पंचायती व नगर निकाय संस्थाओं में एक–तिहाई आरक्षण की व्यवस्था
प्रसव पूर्ण निदान तकनीक अधिनियम 1994	कन्या भ्रूण की पहचान करने पर रोक लगाने की व्यवस्था।
घरेलू हिंसा अधिनियम 2005	पति या साथ रहने वाले किसी भी पुरूष या उसके सम्बन्धियों की हिंसा या प्रताड़ना से पत्नी या साथ रह रही किसी भी महिला को सुरक्षा प्रदान करना

भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत महिला अधिकारों की सुरक्षा हेतु व्यवस्था :-

भारतीय दण्ड संहिता महिला को सुरक्षा, सम्मान एवं गरिमा के साथ रहने के लिए उपलब्ध करता है। उसके साथ कोई दुश्कर्म करता है, तो भारतीय दण्ड संहिता उसे दण्ड दिलाने के लिए व्यवस्था करती है, जो इस प्रकार है :–

भारतीय दण्ड संहिता	धारा	अधिकतम सजा/दण्ड
दहेज मृत्यु	304बी	आजीवन कारावास
स्त्री की सहमति के बिना गर्भपात करना	313	आजीवन कारावास
औरत की शालीनता भंग करने की मंशा से जबरन शारीरिक सम्बन्ध बनाना	354	2 वर्ष
अपहरण, भगाना या औरत को शादी के लिए मजबूर करना	366	10 वर्ष
नाबालिग लडकी को कब्जे में रखना	366ए	10 वर्ष
बलात्कार	376	2 से 10 वर्ष/उम्र कैद
पहली पत्नी के जीवीत होते हुए दूसरी शादी करना	494	7 वर्ष
धोखाधडी से शादी की रस्म पूरी करना	496	7 वर्ष
पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा औरत पर क्रूरता	498ए	3 वर्ष
महिला की शालीनता को अपमानित करने की मंशा से अपशब्द कहना या अश्लील हरकतें करना	509	1वर्ष

महिलाओं से सम्बन्धित विकास योजनाएं :-

भारत सरकार द्वारा महिलाओं के लिए कई विकास कार्यक्रम एवं कल्याणकारी योजनाओं का संचालन किया जा रहा है, ताकि उनके जीवन स्तर में सुधार आ सके और विकास कार्यों में उन की अधिक–से–अधिक भागीदारी सुनिश्चित हो सके सरकार द्वारा महिलाओं से सम्बन्धित चलाई जा रही प्रमुख योजनाएं एवं कार्यक्रम इस प्रकार है :–

क्र.स.	योजनाओं का नाम	वर्ष	योजनाओं का उदेद्श्य
1.	ड्वाकरा योजना	1982	ग्रामीण महिलाओं को स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हुए उनके स्वास्थ्य शिक्षा, पोषाहार और शिशुओं की देखभाल करने जैसी मूलभूत सेवाएं प्रदान करना
2.	नौराड प्रशिक्षण योजना	1989	महिलाओं को व्यवसायों जैसे दरी, कालीन, ब्लॉक प्रिंटिग, चिकन आदि से सम्बन्धित प्रशिक्षण देना
3.	किशोरी बालिका योजना	1992	ग्रामिण गरीब परिवारों की बालिकाओं को उचित स्वास्थ्य और शिक्षा की व्यवस्था करना
4.	मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य योजना	1992	माताओं को पोषाहार उपलब्ध कराकर सुरक्षित मातृत्व एवं टीकाकरण कार्यक्रम
5.	महिला समृद्धि योजना	1993	ग्रामीण महिलाओं में बचत की आदत डालना और उन्हें संशक्त करना
6.	राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना	1994	गरीबी रेखा से नीचे की महिलाओं को प्रसूति के लिए आर्थिक सहायता प्रदान करना
7.	इंदिरा महिला योजना	1995	ग्रामीण और शहरी बस्ती की महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वावलम्बन प्रदान करना

8.	ग्रामीण महिला विकास योजना	1996	ग्रामिण महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि करना एवं उन्हे जागरूक करना
9.	बालिका समृद्धि योजना	1997	गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों में जन्म लेने वाली बालिका की मॉ को पौष्टिक आहार बालिका की शिक्षा हेतु सहायता प्रदान करना
10.	महिला स्वशक्ति योजना	1998	महिलाओं को स्वंय सहायता समूहों के माध्यम से आर्थिक व सामाजिक रूप से सशक्त करना
11.	सबला योजना	2011	11–18 वर्ष की स्कूली लड़कियों को पोषाहार उपलब्ध करवाना
12.	इन्दिरा गॉधी मातृत्व सहयोग योजना	2011	प्रसूति उपरांत वार्षिक सहायता देना
13.	स्टेप	1987	महिलाओं में कौशल विकास करना।
14.	स्वाधारा	2002	समाज की मुख्यधारा से वंचित महिलाओं का समाज की मुख्यधारा मे लाना।
15.	अल्पावधि प्रवास ग्रह	1969	महिलाओं को भावनात्मक संरक्षण देना एवं पुनर्वास।
16.	सुकन्या समृद्धि योजना	2015	बालिकाओ के आर्थिक संवर्द्धन हेतु।

उपसंहार :–

स्वतंत्रता से वर्तमान तक महिलाऍ प्रशासन, राजनीति, चिकित्सा, खेल, व्यवसाय, शिक्षा, हर क्षेत्र में भाग ले रही है और पुरूषों से आगे निकल रही है। महिलाओं के विकास एवं सशक्तीकरण हेतु कई कानूनो का निर्माण, योजनाओं का क्रियान्वयन किया गया है, साथ ही महिला अपराधों को संज्ञेय अपराध घोशित किया गया है। अब महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन आया है, महिला स्वालम्बी एवं सशक्त बन रही है। आज कई गैर सरकारी संगठन उनके साथ खडे है, यदि सरकार सड़को, बसो, रेलों, मोहल्लो मे महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करे तो वे स्वतंत्रता के वातावरण में सांस ले सकती है। आज इच्छा शक्ति की आवश्यकता हैं ताकि महिला मानव अधिकारों के महत्व को समझाया। महिला मानवाधिकारो को सरक्षण प्रदान किया जाए, इस कार्य हेतु अतिरिक्त पुलिस व्यवस्था के साथ–साथ पुलिस परामर्श केन्द्रों की स्थापना हो। साथ ही महिलाओं से सम्बंधित कानूनो, योजनाओं एवं कार्यक्रमो का प्रभावी क्रियान्वयन हो।

संदर्भ ग्रन्थ :–

1. डॉ. आशुरानी, महिला विकास कार्यक्रम (2015) I.N.A. श्री पब्लिकेशन, जयपुर।
2. एम.ए. अंसारी, महिला और मानवाधिकार (2016) ज्योति प्रकाशन, जयपुर।
3. एम.सी. लाम्बा, मानवाधिकार और पिछडा वर्ग (2012), अविष्कार पब्लिकेशन, जयपुर।
4. डॉ. पूरणमल, नवीन पंचायतीराज एवं महिला नेतृत्व (2014) पोइंटर पब्लिकेशन, जयपुर।
5. डॉ. एम.एम. लबानिया, भारतीय महिलाओं में समाजशास्त्र (2013), रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
6. डॉ. गोविन्द प्रसाद, महिला एवं बाल श्रमिक (2016), डिस्कवरी पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
7. मीनाक्षी सिंह, महिला अधिकार एवं महिला श्रम (2010), ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
8. डॉ. गोविन्द प्रसाद और अनुपम पाण्डेय, सामाजिक संरचना (2013), डिस्कवरी पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
9. डॉ. धर्मवीर महालन एवं डॉ. कमलेश महाजन, भारतीय समाज : मुद्दे एवं समस्याऍ (2016) विवेक पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
10. डॉ. पुखराज जैन, भारतीय शासन और राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन, जयपुर।

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 111-112

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

'रेत के द्वीप पसर आए हैं' में चित्रित पारिस्थितिकी

–शमीम पी

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, सरकारी ब्रेननकॉलेज, तलशेरी, कन्नूर 670106

आज के साहित्य के महत्वपूर्ण हिन्दी कवियों की पंक्ति में ज्ञानेंद्रपति का अग्रिम स्थान है। उनकी कविता विशेष अर्थ में सामाजिक–सांस्कृतिक अर्थ विमर्श की कविता है। उनकी कविता हमारे समय की क्रूरता, हिंसा, शोषण, पर्यावरण, उत्तराधुनिक संस्कृति, सांप्रदायिकता, कला, संस्कृति आदि अनेक संदर्भों को व्यक्त करने के प्रयास में संलग्न है। गंगातट, संशयात्मा, भिनसार आदि उनके प्रसिद्ध कविता संकलन हैं।

'रेत के द्वीप पसर आए हैं' कविता में कवि ज्ञानेंद्रपति ने पारिस्थितिक संसक्ति पर अपना विचार प्रकट किया है। इस कविता में आप पारिस्थितिक असंतुलन के उपरांत आए हुए बदलाव का जिक्र करते हैं।

कवि कहते हैं कि गंगा नदी के द्वीप पर रेत बिखरे पड़े हैं और वहाँ जल जीवों के गुजरने के पद चिह्न तक नहीं दिखाई पड़ते हैं। बरसों पहले जहां इन जीवों की चहल–पहल थी वहाँ आज एक मनहूस सन्नाटा बिछा हुआ है। शंख, सीपि, घोंघ जैसी जैविक कलाकृतियाँ भी आज ओझल हो गए हैं।

उस बिखरे रेत पर ना फूल है, न ही उन पर मंडराने वाले भौरे एवं तितलियाँद्य ऐसा लगता है कि उनके दिन बीत चुके हैं। कवि आगे कहते हैं कि मछलियों के पीछे–पीछे सुस्त चाल से चलने वाले कछुए भी आज अप्रत्यक्ष हो चुके हैं। अर्थात उनके समय गुजर गए हैं। गंगा नदी के जल में उछल कूद करने वाली डालफिनें भी आज लुप्त हो चुकी है।

आगे कवि गंगा नदी की वर्तमान दुस्थिति पर चर्चा करते हैं। आज गंगा की धारादुबली–पतली हो चुकी है। प्रदूषण के कारण आज नदी कमजोर व मृतप्राण हो चुकी है। बिजली उत्पन्न करने के लिए बांधों का निर्माण एवं पन बिजली के उपयोग के फलस्वरूप पानी की मात्रा ही दिन ब दिन घटती जा रही है :–

"गंगा की धारा
दुबली, मरियल
प्रदूषण–विकल
गोया, पनबिजली के रूप में
उसका सत्त निकाल लिया है
बारहा बाँधकर।"

'रेत के द्वीप पसर आए हैं– ज्ञानेंद्रपति, पृ. सं. 85

गंगा नदी आज रेत से भरे मरुस्थल के समान परिवर्तित हो गई है। कारणवश वहां के बिल्डर्स और बिल्डिंग मेटीरियल के विक्रेता काफी खुश नजर आते हैं। साथ ही रेत पर शिल्प उकेरने वाले कलाकार एवं उन्हें देखकर सराहना करने वाला सहृदय, चौनल व अखबारों के संवाददाता, इन रेत पर बने आकृतियों पर कविता रचने वाले कवि तथा उनके

गुण गाने वाले आलोचक सब इस बदलाव से अत्यधिक प्रसन्न हैं। यहाँ कवि ने अपने व्यंग बाण के जरिए गंगा जैसी पवित्र नदी के वर्तमान दुर्दशा से फायदामंद लोगों पर तीखा प्रहार किया है।

आज रेत को आजीविका का मार्ग बनाकर कला प्रेमी ने अपने मुख्यालय भवन का निर्माण गंगा नदी के तट पर निर्मित किया है। यह सुंदर भवन विदेशी पूँजी से निर्मित है जो कि आज की भूमंडलीकरण का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इन आबादी वर्जित तट पर निर्मित भवनों में लोग सुखपूर्वक आसीन है। इस तरह के हस्तक्षेप गंगा नदी की पवित्रता, पावनता हमेशा के लिए विनष्ट कर देती है। इन लोगों की निगाह से गंगा भय से सिकुड़ जाती हैद्य अर्थात लगातार होने वाले प्राकृतिक शोषण के कारण गंगा अपने वैभव तक ही खो बैठकर विनाश के कगार पर खड़ी हैद्य इसे आँकती हैं निम्नांकित पंक्तियाँ :–

"ये जो
रेत को उपजीव्य कर खिलनेवाली
कला के कर्मी–मर्मी
उनका मुख्यालय है
वह कला–कर्म–प्रोत्साहक न्यास–भवन
जो गंगा के ऐन किनारे उठा है भव्य
प्रायः विदेशी पूँजी से
भूमंडलीकरण की सुशोभन सौगात
आबादी–वर्जित गंगबरार में सुखासीन।"

रेत के द्वीप पसर आए हैं– ज्ञानेंद्रपति, पृ. सं. 85

आज गंगा नदी के हृदय स्थान तक रेत है और आँखों में पानी भरे हुए हैं। अर्थात गंगा नदी की वर्तमान त्रासदी को यहाँ चित्रित करते हैं। आज गंगा नदी के अधिकांश भूभाग रेत के द्वीप में परिणत हो चुके हैं। गंगा के इस बदलते रूप का मजा लेने वाले रसिक भी हमारे बीच में हैं। रसिकों का यानिकी इन कला प्रेमियों का दावा है कि शिल्पों के निर्माण के लिए गंगा नदी के रेत अत्यधिक उपयुक्त है। क्योंकि इनमें से अच्छे से अच्छे शिल्प गढ़े जा सकते हैं, जो कि आम तौर पर उपलब्ध होने वाले रेत से यह ज्यादा दानेदार होता है। इस रेत से निर्मित होने वाले शिल्प सजीव एवं जीवंत दिखाई देते हैं जिसे देखकर कोई भी व्यक्ति मंत्र मुग्ध होकर देखता रह जाएगा।

आखिर कवि कहते हैं कि गंगा कि वर्तमान दुरवस्था का ख्याल न करते हुए कला के पारखी अपना निस्सीम आनंद व्यक्त कर रहे हैं कि यहीं पर यह रेत का द्वीप निकल आया है और इसका फायदा हम खूब उठाते रहेंगे।

सहायक ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी कविता– कन्नूर विश्वविद्यालय, हिन्दी बोर्ड ऑफ स्टडीस, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 110051, पहला संस्करण 2019

Mob% 7356108164

shameemriyas78@gmail.com

www.bohalsm.blogspot.com
Impact Factor : 3.811

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
January 2021 Page No. : 113-115

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हाल विकास पर वातावरण का प्रभाव

–डॉ. शिवानी सिंह

सहायक प्रोफेसर, जवाहरलाल नेहरू पी.जी. कॉलेज, बंसगांव, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।

वातावरण के लिए पर्यावरण शब्द का प्रयोग भी किया जाता है। साधारण बोलचाल की भाषा में वातावरण का तात्पर्य व्यक्ति के आस–पास के चारों तरफ उपस्थित परिस्थितियों से है। पर्यावरण शब्द के संधि–विच्छेद से भी स्पष्ट है कि पर्यावरण शब्द 'परि' तथा 'आवरण' से बना है जिसका अर्थ है ''चारों ओर से ढकने वाला।' अतः किसी व्यक्ति के चारों ओर जो कुछ भी है वहीं उसका पर्यावरण है। डगलस तथा हालैण्ड के अनुसार– ''वातावरण शब्द का प्रयोग उन सभी बाह्य शक्तियों, प्रभावों तथा दशाओं को सामूहिक रूप से वर्णित करने के लिए किया जाता है जो जीवित प्राणियों के जीवन, स्वभाव, व्यवहार तथा वृद्धि–विकास एवं परिपक्वता को प्रभावित करता है।''

उपरोक्त परिभाषा से स्पष्ट है कि वातावरण अनेक वस्तुओं के समावेश से बनता है। इसके अंतर्गत वे सभी बातें आ जाती हैं जो बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास को प्रभावित करती हैं। वातावरण का विस्तार असीमित होता है तथा इसके अंतर्गत वे सभी परिस्थितियां आ जाती हैं जो प्राणी को किसी भी रूप में प्रभावित करती हैं।

अध्ययनों से यह सिद्ध होता है कि मानव या बालक के विकास के प्रत्येक पक्ष पर उसके भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक वातावरण का व्यापक प्रभाव पड़ता है। बालक का वातावरण गर्भाधारण के दौरान से ही उसके विकास को प्रभावित करने लगता है। गर्भाधान के उपरांत लगभग नौ माह तक भ्रूण का विकास माता के गर्भाश्य में होता है। गर्भाश्य के वातावरण के महत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती है।

यदि गर्भाश्य का वातावरण विकारयुक्त होता है तो बालक के विकास में व्यावधान उत्पन्न होने की संभावनाएं रहती हैं। उदाहरणार्थ यदि गर्भस्थ शिशु को माता के रक्त से पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम आदि पौष्टिक पदार्थ नहीं मिलते हैं तो उसमें शारीरिक विकास, मानसिक विकास तथा सामाजिक विकास आदि को प्रभावित करता है। उचित वातावरण के अभाव में बालक का शारीरिक गठन, उसकी हष्टपुष्टता, लंबाई–चौड़ाई में परिवर्तन आ जाता है। यह देखा गया है कि जापानी मूल के उन व्यक्तियों की लम्बाई भौगोलिक वातावरण के कारण बढ़ गई है जिनकी अनेक पीढ़ियां अमेरिका में निवास कर रही हैं। सामाजिक तथा सांस्कृतिक वातावरण का प्रभाव व्यक्ति के सामाजिक तथा मानसिक विकास पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। उत्तम वातावरण में पलने वाले बच्चों की सामाजिक अंतक्रिया तथा बौद्धिक क्षमता अधिक होती है। वास्तव में वातावरण व्यक्ति के ऊपर अमिट व दीर्घकालिक प्रभाव छोड़ता है। इस संदर्भ में यह कविता चरितार्थ होती है :–

''कदली, सीप, भुजंग मुख स्वाँति एक गुण तीन।
जैसी संगति बैठिए तैसे ही फल दीन।।''

हमारा पर्यावरण मुख्यतः भौतिक वस्तुओं के अंतर्गत आता है जिनसे हम चारों ओर से घिरे हुए हैं, जैसे– जल, वायु, भोजन, स्वच्छता, मनोरंजन के साधन आदि।

22 फरवरी 2021 की संयुक्त राज्य अमेरिका की जनगणना ब्यूरो के अनुसार विश्व की वर्तमान अनुमानित जनसंख्या 7.65 अरब है। जबकि भारत की जनसंख्या एक अरब चौतीस करोड़ इकतालीस लाख व सत्तर हजार। वर्ष 2011 की सर्वेक्षण के अनुसार बढ़ती जनसंख्या के कारण भारत में प्रति व्यक्ति उपलब्ध जल की मात्रा 1545 घनमीटर से घटकर 1486 घनमीटर हो गया है। प्रदूषण की दृष्टि से भारत में विश्व के 30 सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में से 21 शहर हैं। जबकि प्रदूषण के कारण विश्व में भारत का स्थान पाँचवां है। भारत का रियल टाईम एयर क्वालिटी इंडेक्स पी.एम. 2.5 स्तर है जो अत्यन्त चिंताजनक है। अतः उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि पर्यावरणीय दशाऐं अनुकुल ना होना मानव विकास के लिए कितना घातक सिद्ध है। मनोवैज्ञानिक वातावरण अनुकुल होने पर मानव का विकास तीव्र गति से होता है और वह प्रत्येक कार्य रूचि के साथ करता है। मनोवैज्ञानिक वातावरण अनुकुल न होने पर मानव विकास पर कितना प्रतिकूल असर होता है। यह इंडीयन जनरल ऑफ साइकेट्री के रिपोर्ट से पता चलता है। इसके अनुसार वर्तमान में भारत में 13–17 वर्षायु के लगभग 9.8 करोड़ से ज्यादा बच्चे विभिन्न मानसिक बिमारी के शिकार हैं। ग्रामीण क्षेत्र में यह 1. 06 प्रतिशत से 5.89 प्रतिशत की दर से जबकि शहरी क्षेत्रों में 12.5 प्रतिशत से 16.5 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वर्ष 2012 में भारत में लगभग 258075 भारतीयों के विभिन्न कारणों से आत्महत्या की जिसमें सर्वाधिक 0–19 आयु वर्ष के बच्चे हैं।

गर्भस्थ शिशु के विकास में जन्म पूर्व वातावरण का महत्वपूर्ण योगदान है। यदि गर्भावस्था के दौरान गर्भवती माता को संतुलित एवं पौष्टिक आहार नहीं दिया जाए तो गर्भस्थ शिशु का समुचित विकास नहीं हो पाता है। वर्ष 2020 में भारत में नवजात मृत्यु दर प्रति हजार जीवित बच्चों पर 29.85 प्रतिशत रही है। जबकि जन्म पश्चात् उचित प्रकार से पोषण न मिलने के कारण भुखमरी से वर्ष 2018 में 8.8 लाख पांच वर्षायु के बच्चों की मौत हुई (यूनीसेफ के अनुसार) ठीक इसी प्रकार माता की बिमारी भी गर्भकालीन विकास को प्रभावित करती है। यदि माता किसी संक्रामक रोग से ग्रस्त है तो उसका प्रभाव गर्भस्थ शिशु पर भी पड़ता है। जैसे – एड्स, सिफलिस, गोबेरिया, चेचक, रैबीज आदि।

नवजात शिशु जब पैदा होता है तो सबसे पहले माता–पिता व परिवार के सदस्य ही उसे प्यार से अपनी गोदी में लेकर प्यार देते हैं। परिवार में ही बालक का समुचित विकास होता है। परिवार के सदस्य बड़े प्यार से उसका लालन–पालन करते हैं। अतः परिवार विभिन्न रूपों में बालक के विकास को प्रभावित करता है। परिवार का आंतरिक वातावरण यदि सुखद एवं शांतिपूर्ण है, माता–पिता शिक्षित, चरित्रवान, कुशल एवं योग्य होते हैं तथा बालक की अच्छी परवरिश करते हैं तो बालक का सर्वागींण विकास होता है। परिवार की संरचना व आकार किस प्रकार का है इस बात का भी बालक के विकास पर असर होता है। यदि संयुक्त परिवार है जिसमें माता–पिता के अलावा दादा–दादी, चाचा–चाची, भाई–बहन आदि परिवार के अन्य सदस्य हैं और बालक को पूरा प्रेम व संरक्षण मिलता है और उसका विकास होता है। यदि परिवार की संरचना एकाकी प्रकार की है जिसमें केवल माता–पिता एवं भाई–बहन हैं और माता–पिता घर पर ही रहकर बालकों को संभालते हैं तो भी बालकों की देखभाल अच्छी होती है। किन्तु जिन परिवारों में माता–पिता दोनों कामकाजी होते हैं और बालकों को नौकरानी के संरक्षण में छोड़ देते हैं तो ऐसे बालकों का शारीरिक व मानसिक विकास तो होता है किन्तु संवेगात्मक विकास नहीं हो पाता है और बच्चे भावनात्मक रूप से अलग–अलग हो जाते हैं। इसी प्रकार माँ–पिता की मृत्यु भी बाल–विकास को प्रभावित करती है।

परिवार की सामाजिक, आर्थिक स्थिति अनुकूल न होने पर भी बाल विकास प्रभावित होता है। ऐसे बच्चे चोरी, डकैती, लूटपाट व अन्य अपराधों में लिप्त हो जाते हैं। नैशनल क्राइम ब्यूरों के अनुसार वर्ष 2018 में कुल बाल अपराधों की संख्या 31,591 थी जिसमें से अकेले महाराष्ट्र में 19 प्रतिशत घटित हुई। इसके अतिरिक्त बच्चों के प्रति माता–पिता का व्यवहार, विद्यालय का वातावरण एवं सहपाठियों की संगत भी बाल विकास को प्रभावित करती है। वर्ष 2019 में नेशनल क्राईम रिकार्ड ब्यूरों के अनुसार बच्चों के प्रति हिंसा की दर 4.5 प्रतिशत की दर से बढ़ी है।

संस्कार एवं संस्कृति किसी भी देश की रीढ़ होती है। इसके बिना देश का विकास संभव नहीं है। बालक जिस संस्कृति में पलता बढ़ता है वह संस्कृति इसके व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करती है। सामाजिक वातावरण में सामाजिक रिति–रिवाजों, दर्शनों, मूल्यों, लक्ष्यों आदि का भी बालक के मस्तिष्क पर गहरा असर पड़ता है। समाज में समय–समय पर होने वाले आयोजन, उत्सव एवं त्यौहारों में भाग लेने से बालकों में सामाजिकता का विकास होता है।

अंत में, इस बात से अब शायद ही कोई इंकार कर पाये कि वातावरण का बच्चों के ऊपर प्रभाव नहीं पड़ता है। न्यूमैन, फ्रीमैन, होलंजींगर, गोर्डन, वुडवर्थ, कुले आदि बुद्धिजीवियों ने अपने प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध कर दिया है कि बालकों के विकास पर वातावरण का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। बदलते तकनीकी एवं शिक्षा के प्रति बढ़ती जागरूकता के दौर में नित नए अनुसंधान, प्रयोग और नवाचार का उपयोग बालकों के विकास में किया जा रहा है। भारत प्राचीन समय से ही विश्व गुरू रहा है। विश्व प्रसिद्ध गतिणतज्ञ रामानुजन को यदि हार्डी का साथ नहीं मिला होता तो कतिपय तुम उनके गणित के क्षेत्र में दिये गये योगदान से परिचित नहीं हो पाते। अनेकों दार्शनिक, विश्व प्रणेता, वैज्ञानिक, महापुरूष आदि की जीवनियां इस बात का द्योतक है कि कहीं न कहीं वातावरण का प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर पड़ा। एकलव्य जैसा भील बालक केवल अर्जुन के प्रशिक्षण को देखकर धनुर्विधा में पारंगत हो गया। पेड़ से गिरते हुए सेब के फल ने न्यूटन के मस्तिष्क में गुरूत्वाकर्षण के सिद्धान्त के प्रतिपादन को बल दिया। प्राचीन काल में आदि मानव ने जंगल की भाग में भूने हुए पशु–माँस के सेवन से भोजन पकाकर खाने की प्रेरणा प्राप्त की।

अर्थात्, इन तमाम उदाहरणों से यह सिद्ध हो जाता है कि वातावरण प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों ही रूपों में मनुष्य या बालक के विकास को प्रभावित करता है। अतः मानव सभ्यता व उसके व्यक्तिगत विकास के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमारा वातावरण हम स्वयं मानवों के साथ–साथ सम्पूर्ण धरा के जीव जगत के लिए अनुकूल रहे क्योंकि अकेले मानव का अस्तित्व संभव नहीं है।

संदर्भ :–

1. डॉ. वृन्दा सिंह : मानव विकास एवं पारिवारिक संबंध, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृ. 52–58
2. नीता अग्रवाल : बाल विकास, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, पृ. 58–64
3. डॉ. डी. एन. श्रीवास्तव एवं डॉ. प्रीति वर्मा : बाल मनोविज्ञान : बाल विकास, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
4. डॉ. एस.पी. गुप्ता एवं डॉ. अलका गुप्ता : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 94–95
5. इण्टरनेट श्रोत।